



आधिकारक दि० लेख प्रकाशनालय : आम्बोली-१२ :

श्री विजयकर्मिर्विरचित

# शृङ्गारार्णवचन्द्रिका

( अपरनाम अलंकारसंग्रह )

संपादक

डॉ० वासन महादेव कुलकर्णी

एम० ए०, पी-एच० डी०

प्रकाशक

भारतीय ज्ञानपीठ

शाणिकुण्ड द्वि० जैन ग्रन्थमाला  
ग्रन्थमाला सम्पादक  
डॉ० हीराकाल जैन, डॉ० आ० ने० उपाध्ये

प्रकाशक  
भारतीय ज्ञानपीठ  
प्रधान कार्यालय  
९, बलीपुर पार्क प्लेस, कलकत्ता-२७  
प्रकाशन कार्यालय  
दुर्गाकुण्ड मार्ग, वाराणसी-५  
विक्रय कार्यालय  
३६२०।२१ नेताजी सुभाष मार्ग, दिल्ली-६

प्रथम संस्करण  
वीर निर्वाण संवत् २४९५  
विक्रम संवत् २०२६  
सन् १९६९  
मूल्य तीन रुपये

मुद्रक  
सम्पत्ति मुद्रणालय  
वाराणसी

**MĀNIKACHANDRA D. JAINA GRANTHAMĀLA, NO. 38**

# **SRNGARARNAVACANDRIKĀ**

( Alaṅkārasaṁgraha )

of

**VIJAYAVARṆĪ**

*Edited by*

**Dr. V. M. Kulkarni,**  
M. A., Ph. D.

*Published by*

**BHĀRATĪYA JÑĀNAPĪTHA**

**Māṇikachandra D. Jaina Granthamālā**  
**General Editors :**  
**Dr. H. L. Jain and Dr. A. N. Upadhye**

**Published by**  
**Bhāratiya Jñānapīṭha**  
**Head office**  
**9, Alipur Park Place, Calcutta-27**  
**Publication office**  
**Durgakunda Road, Varanasi-5**  
**Sales office**  
**3620/27 Netaji Subhas Marg, Delhi-6**

**First Edition**  
**V. N. S. 2495**  
**V. S. 2026**  
**A. D. 1969**

**Price Rs. 3/-**

## प्रधान सम्पादकीय

शृङ्गारार्णव-चन्द्रिका के इस सम्पादन को भारतीय विद्या के प्रेमियों के समक्ष प्रस्तुत करते हुए हमें बड़ी प्रसन्नता हो रही है। यह रचना संस्कृत काव्यशास्त्र विषयक है जो अभी तक अप्रकाशित थी। इसके कर्ता मुनीन्द्र विजयकीर्ति के शिष्य विजयवर्णी थे और उन्होंने इसे कर्नाटक प्रदेशीय बगवाडि के कामिराज नामक नरेश की प्रार्थना से बनाया था। ये नरेश १३वीं शती के अन्त में हुए माने जाते हैं। ग्रन्थ में काव्य-शास्त्र विषयक अनेक बातों का समावेश है जिनके उदाहरणों में राजा कामिराज के यक्ष का वर्णन किया गया है। इस सम्बन्ध में यह रचना जगन्नाथकृत रसगंगाधर, विद्याधरकृत एकावली तथा विद्यानाथकृत प्रताप-रुद्रयशोभूषण से समानता रखती है क्योंकि उनमें भी समस्त उदाहरण उनके कर्ताओं द्वारा स्वयं रचित हैं और उनमें उनके सरलकों का यशोगान भी पाया जाता है।

शृङ्गारार्णव-चन्द्रिका का प्रस्तुत सस्करण केवल एक मात्र प्राचीन प्रतिपर आधारित है जो डॉ० आ० ने० उपाध्ये को हस्तगत हुई थी और जिसे उन्होंने प्रामाणिक रीति से सम्पादन हेतु डॉ० व्ही० एम० कुलकर्णी के सुपुर्द की थी। इसकी अन्य किसी प्राचीन प्रति का कहीं से अभी तक पता नहीं चल सका है। डॉ० कुलकर्णी संस्कृत काव्यशास्त्र के बड़े लगनशील अध्येता हैं और उन्होंने वर्तमान परिस्थितियों में जहाँ तक सम्भव था वहाँ तक ग्रन्थ को उसके यथार्थ स्वरूप में प्रस्तुत करने में कोई कोर-कसर नहीं रखी। उन्होंने ग्रन्थ की विद्वत्तापूर्ण आलोचनात्मक प्रस्तावना भी लिखी है, जिसमें उन्होंने ग्रन्थकर्ता का इतिहास, रचनाकाल, काव्य-स्वरूप, ग्रन्थनाम तथा संक्षिप्त विषय-वर्णन एवं उसके स्रोतों आदि अनेक

उपयोगी विषयों का विवेचन किया है। उन्होंने ग्रन्थ के अन्त में अनेक उपयोगी परिशिष्ट भी जोड़े हैं। यह सब सामग्री बड़ी सावधानी से प्रस्तुत की गयी है और आशा की जाती है कि वह इस काव्यशास्त्र विषयक रचना के विषयों को समझने में पाठकों को बहुत उपयोगी सिद्ध होगी।

प्रस्तुत ग्रन्थमालाने संस्कृत और प्राकृत भाषाओंके अनेक अप्रकाशित ग्रन्थों को प्रकाश में लाकर जैन साहित्य की स्मरणीय सेवा की है। हम श्रीमान् शान्तिप्रसाद जी और उनकी विदुषी पत्नी श्रीमती रमाजी के बहुत कृतज्ञ हैं कि उन्होंने इस ग्रन्थमाला के भार को बड़ी उदारतापूर्वक अपने कंधोंपर वहन किया है। उनका यह कार्य जैन साहित्य के क्षेत्र में उत्साहपूर्ण कार्यकर्तियों के लिए एक सुअवसर और चुनौती भी है। संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश आदि भाषाओं में लिखित अनेक छोटी बड़ी रचनाएँ अभी भी प्राचीन भण्डारों में उपेक्षित पड़ी हुई हैं। हमारा अपने विद्वान् बन्धुओं से आग्रहपूर्वक निवेदन है कि वे इन रचनाओं को स्वच्छ रूप में सम्पादित कर प्रस्तुत करें जिससे हमारे देश का सांस्कृतिक दाय यथोचित रीति से समझा व सम्मानित किया जा सके। हमारी ग्रन्थमाला हेतु कृपापूर्वक इस ग्रन्थ-को सम्पादित करने के लिए हम डॉ० कुलकर्णी के बहुत कृतज्ञ हैं।

—होरालाल जैन

—आ० ने० उपाध्ये

## मूलग्रन्थस्य विषयानुक्रमणिका

१. वर्णगणफलनिर्णय ।	....	१
२. काव्यगतशब्दार्थनिश्चय ।	..	८
३. रसभावनिश्चयः ।	....	१२
४. नायकभेदनिश्चय ।	...	२५
५. दशगुणनिश्चय ।	...	४३
६. रीतिनिश्चय ।	...	४७
७. वृत्तिनिश्चय ।	...	४९
८. शय्यापाकनिश्चय ।	....	५२
९. अलङ्कारनिर्णयः ।	....	५४
१०. दोषगुणनिर्णय ।	..	९७



## INTRODUCTION

### 1. CRITICAL APPARATUS

Śrngārārnavaṇḍikā (ŚC) of Vijayavarṇī is being published for the first time from the only available MS. Dr A. N Upadhye to whose efforts I owe this MS, could not get any other MS. of Vijayavarṇī's work—perhaps it does not exist This MS on which the text is based, is in the Jainā Siddhānta Bhavana, Arrah, (Bihar) In Pīṣāstisūgraha\* Pt. K. Bhujabali Sastrī describes it

Manuscript No 231                      Śrngārārnavaṇḍikā  
Kha

Author ;        Vijayavarṇī  
Subject        Alaukāra (poetics)  
Language :    Sanskrit

Length 8 5" (21.6 cm), Breadth 7" ( 17.8 cm )  
Condition Good, Manuscript . Paper manuscript, No.  
of lines per folio about 11, No of letters per line  
20 to 22

The MS. opens thus .

मृङ्गारणवन्दिके अलकार

---

\* Pages 73-76, published by Nirmal Kumar Jaina,  
Secretary, Jainā Siddhānta Bhavana, Arrah. 1942

श्री अनन्तनाथाय नम ॥ निविष्णमस्तु ॥

जयति ससिद्धकाव्यालापपद्माकरेय

and ends with

“अत्रणबेलुगुलञ्जेननिवासि. वि. विजयचन्द्रेण जैनसत्रियेण इद  
ग्रथं समाप्त लेखीति मगलमहा ॥ श्री ॥

Generally speaking, the condition of the MS. is good but, occasionally, we are faced with lacunae in it. Wherever possible I have filled up these gaps I have corrected scribal errors, and the readings, about which I felt doubtful, I have noted in the footnotes. In some cases I have corrected the readings by referring to the passages in the books used by the author. I have spared no pains in presenting the text of ŚC as faithfully as was possible in the circumstances.

## 2. THE PERSONAL HISTORY OF VIJAYAVARNĪ

Nothing is known about the personal history of Vijayavarni beyond what he has himself told us in the praśasti and the puspikā to his work<sup>1</sup> he was a disciple of Munindra Vijayakīrti, a devout adherent of the doctrine of Syādvāda, propounded by the great Jinās.  
<sup>2</sup>In the course of a literary discourse he was once asked

1 इति परमजिनेन्द्रवदनचन्द्रविनिर्गतस्याद्वादचन्द्रिकाचकोरविजयकीर्ति-  
मुनीन्द्रचरणारब्जचञ्चरीकविजयवर्णिविरचिते श्रीवीरनरसिंहकामिराजवङ्ग-  
नरेन्द्रशरदिन्दुसनिभकीर्तिप्रकाशके

2 स राजा काव्यग द्वीषु सभाजनविभूषिण ।

अष्टच्छद्वितीय नाम्ना कविताशक्तिभासुरम् ॥ I 19

It appears, Vijayavarni was also known as Dvitiya.

by King Kāmīrāja of Bangavādī to explain the various aspects of poetics. At the King's request he composed *Alaṃkārasaṃgraha* called *Śiṅgārārṇavacandrikā* (ŚC).

<sup>3</sup> This work, while elucidating the different topics in poetics, sings the glory of King Kāmīrāja through the examples with which he illustrates the different points.

<sup>4</sup> In the introduction to his work he particularly refers to the poetry of Karnāta poets like Gunavarman. This reference would lead us to believe that he had himself studied their poetry. A perusal of this SC would reveal that he had studied the standard works on poetics namely, those of Daṇḍī, Bhoja, Dhanañjaya, Maṃmata and the like. Vijayavarṇī was in personal association with King Kāmīrāja. Naturally, his date depends on that of King Kāmīrāja.

### 3 DATE OF KING KĀMIRĀJA

In his *Prasasti* the author gives the geneology of his patron, and according to Pt Bhujabali Sastri and Dr Nemicaandra Sastri, our author's information does not conflict with historical facts. Viranarasimha ruled at Bangavādī (1157 A D). He had a brother called

---

3. Vide footnote No. 1, supra.

4. गुणवर्मदिकर्नाटकवीर्यो सुक्तिर्लक्ष्य ।  
बाणविकास देयात्ते रसिकानन्दरायिनीम् । 7

Pāṇḍyarāja. Candrasēkhara, the son of Viranarasīṃha, ruled at Bangavādī (1157 A.D), He had a brother called Pāṇḍyarāja Candrasēkhara, the son of Viranarasīṃha, came to the throne in A D 1208, and his younger brother Pāṇḍyappa, in A D 1224 Vitthalādevī, their sister, was appointed regent in A. D 1239 Then her son, called Kāmīrāja, came to the throne in A D 1264<sup>6</sup>

Our author wrote his SC at the request of this King Kāmīrāja (name is spelt as Kamarāyā, Kāmīrāya and Kāmīrāya in the MS) Vijayavarṇī must have, therefore, composed his ŚC in the last quarter of the thirteenth century (A D )

A comparative study of the nearly common or corresponding passages between SC and Pratāpa-rudrayaśobhūṣina (PRY), and ŚC and Alamkārasamgraha, however, raises doubts regarding the date of composition of Vijayavarṇī's work. Dr Kane assigns PRY to the first quarter of the fourteenth century. Pandit Bāl-krishnamurti assigns Amitānandayogin to the thirteenth

---

5 Vide infra, Sources of ŚC

6 Vide Praśasti-samgraha ( pp 76-78 ) edited by Pt K Bhujbalī Sastri, Arrah, 1942 and "दो अलंकार ग्रन्थोक्तो पाण्डुलिपिर्गो" by Dr Nemicandra Sastri in Jaina-Siddhānta Bhāskara, Part XXIII, Kīraṇa I, Dec 1963

century, whereas C. Kuhnān Rājā assigns him to the beginning of the second half of the fourteenth century. The date of Amṛtānandayogin remains thus uncertain. A comparative study instituted by me leads me to believe that Vijayavarnī has much common with PRY and Alaṅkārasaṁgraha for the treatment of a few topics. In the present state of our knowledge the question of Vijayavarnī's date evades definite determination, and it is but right to keep it open till definite and conclusive evidence comes forth.

#### 4 VIJAYAVARNĪ'S POETRY

In the introduction to his ŚC Vijayavarnī refers to himself as *Kaviśaktibhāsurā*<sup>7</sup> and as '*Kaviśvara*'<sup>8</sup> and to his own work in glowing terms<sup>9</sup>. For his *Kārikās* he is deeply indebted to authoritative works on poetics and he expressly states, on a few occasions, that he has followed '*Pūrva-sāstra*'. The illustrations and introductory stanzas are, however, his own. A few of these illustrations would appear to have been modelled on those found in his authorities. Considering his verses it is difficult to admit his claim to high poetic power or to the title '*Kaviśvara*'. His poetry is rather

---

7 I 19

8 I 26

9 I 23-28

pedesrian and highly conventional. There is hardly anything which enlivens his ŚC. His ślokas are easy to understand. At handling elaborate metres he is not so adept. He is guilty at a number of places of the metrical defect called yatibhanga. He profusely uses expletives. Occasionally, we come across similes which are striking<sup>10</sup>, but the work, as a whole, has value rather for its subject-matter than for its literary merit.

### 5 THE TITLE OF THE PRESENT WORK

In the course of his introduction<sup>11</sup> to the present work the author tells us that at the request of King Kāmurāja he composed Alanikāra-saṅgraha called ŚC. The colophon<sup>12</sup> refers to the title as “Śṛṅgārārṇava-candrikā-nāmnī alamkāra-saṅgrāhe ”. From these references it is crystal clear that the author gives ‘Alanikāra-saṅgraha’ as the general name to the work and ŚC as the distinguishing appellation. The name ‘Alanikāra-saṅgraha’ consists of two words (1) alamkāra and (2) saṅgraha. The word alamkāra stands here

---

10 III I, IX 62

11 इत्य नृपप्रार्थितेन मया लङ्कारसंग्रहः ।

क्रियते मूरिणा नाम्ना शृङ्गारार्णवचन्द्रिका ॥ I 22

12 Vide colophon at the end of Chapters I, II, IX and X

विजयवर्णिविरचिते शृङ्गारार्णवचन्द्रिकानाम्नि अलङ्कारसंग्रहे

obviously not in its restricted sense of figures of speech but in its wider sense denoting all such factors as word and sense that should find place in poetry, *rasa*, *bhāva*, *guna*, *vṛtti*, *rīti*, *śāyā*, *pāka* *alaṅkāras* and *doṣas* ( which poet should avoid in his composition ), in short, Sanskrit poetics *Samgraha* primarily means a collection but here it signifies a compendium<sup>13</sup> or a brief exposition. *Alaṅkāra-samgraha* therefore means 'A compendium or a brief exposition of Sanskrit poetics<sup>14</sup>', and metaphorically, the work dealing with it

According to some, *samgraha* comprises three parts, namely, *uddeśa* ( simple enumeration ), *lakṣana* ( definition ) and *parīkṣā* ( examination or exposition ). The present work contains all the three.

The title SC is made up of three words 1 *Sṛṅgāra*, 2 *arnava* and 3 *candrikā*. The word *śṛṅgāra* denotes one of the eight or nine *rasas* bearing that name, *arnava* means an ocean, and *candrikā* moonlight. The whole title, therefore, means 'Moonlight to the ocean of *Sṛṅgāra*<sup>15</sup>. The word *candrikā*<sup>16</sup> at the end

13 समग्र सचित्र ग्रह स्वोक्त सचयनमित्यर्थ । अथवा सक्षेपेण स्वरूप-कथनम् ।

14 अलङ्काराणां समग्र सक्षेपेण स्वरूपकथनमित्यर्थ ।

15 शृङ्गारोऽर्णव एव तस्य चन्द्रिका प्रकाशिका इत्यर्थ ।

16 The words कौमुदी and चन्द्रिका convey this sense when they stand at the end of compounds. Compare the titles तर्क कौमुदी, वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी, सांख्यतत्त्वकौमुदी etc and रसचन्द्रिका, काव्यचन्द्रिका, नाटकचन्द्रिका, अलङ्कारचन्द्रिका, चमत्कारचन्द्रिका, etc.

of compounds means elucidation or throwing light on the subject treated. The author compares his work with *candrikā*—moonlight, which is so very lovely and delightful, and thereby suggests that it is a delight to read and study his work which is (implicitly claimed to be) so lucid in its method of composition and style.

The title may also be explained as “The work imparting special knowledge about poetics covering *śṛṅgāra-rasa* and allied topics”<sup>17</sup>

The work does not prominently treat of *śṛṅgāra* nor the author has anything new to say regarding *śṛṅgāra* as Bhoja had in his *Śṛṅgāraprakāśa*. The reason why *śṛṅgāra* finds a place in the title is probably this. *Śṛṅgāra-rasa* is regarded as the prince (queen?) among sentiments (*rasarāja*). When this very essential and vital topic of poetics is mentioned in the title, it automatically follows that other, comparatively less important, topics of poetics are implied by it or covered under it.

## 6 A BRIEF SUMMARY OF THE CONTENTS OF SC

The work opens with a homage to Lord Jina, and goes on to describe some of the predecessors of King

---

17 शृङ्गारोऽर्णव एव तस्य चन्द्रिकेव ( उच्छ्वनयन्ती-वर्धयन्ती ) चन्द्रिका ।  
शृङ्गाररसादि साहित्यशास्त्रविषयक विशिष्ट ज्ञान बोधयन्तीत्यर्थः ।



Kāmarāja, the patron. The first chapter<sup>18</sup> mainly deals with consequences ascribed to initial letters of any composition and to the metrical feet employed in it

The second chapter<sup>19</sup> enumerates seven groups of poets and deals with fourfold sense and fourfold power of word

The third chapter<sup>20</sup> deals with Rasa, Bhāva and their varieties with illustrations of each and every type

The fourth chapter<sup>21</sup> is a study of the types of hero and heroine and their friends and messengers and their rivals

The fifth chapter<sup>22</sup> treats of ten Gunas

The sixth chapter<sup>23</sup> makes a study of Rīti and its kinds

The seventh chapter<sup>24</sup> deals with Vitti and its varieties.

The eighth chapter<sup>25</sup>, which is the shortest of all, deals with the concepts śayyī of and pāka

- 
- 18 Chapter I (vv 1-63) Varnagaṇaphala-nirṇaya  
 19 Chapter II (vv 1-42) Kāvya-gata śabdāṭṭha-niścaya  
 20 Chapter III (vv 1-130) Rasabhāva-niścaya  
 21 Chapter IV (vv 1-163) Nāyaka-bhūdamāṇiścaya  
 22 Chapter V (vv 1-31) Daśa-guṇa-niścaya  
 23 Chapter VI (vv 1-17) Rīti-niścaya  
 24 Chapter VII (vv 1-16) Vitti-niścaya  
 25 Chapter VIII (vv 1-10) Śayyā-pāka-niścaya

The ninth chapter<sup>26</sup>, which is the longest of all deals with Arthālankāras

Lastly, the tenth chapter<sup>27</sup> treats of Dosas in a poetic composition and also of circumstances when they cease to be so.

### 7. SOURCES OF THE ŚC

A striking feature of this work is that all the examples given as illustrations of the different points, are composed by Vijayavarṇī himself and go to glorify King Kāmarāja. In this respect it resembles Vidyādhara's Ekāvalī (1285-1325 A D ) Vidyānātha's PRY (1300-1325 A D )

As the work is composed in the decadent period of Sanskrit literature and as it deals with a scientific subject, poetics, on which authoritative treatises of masterminds were already in existence, it would not be fair on one's part to expect any originality or contribution to poetics from Vijayavarṇī. Occasionally, he clearly states that his descriptions are in accordance with earlier authorities<sup>28</sup>. A perusal of his work reveals

26 Chapter IX (vv 1-310) Alaukāraṇīcaya

27 Chapter X (vv 1-197) Doṣaguna-nīcaya

28 अतः अतो कारणतोऽस्माभिरुच्यते रसलक्षणम् ।

पूर्वशास्त्रानुसारेण भावभेदविशेषितम् ॥ III 2

अतोऽगुणा प्रकीर्त्यन्ते पूर्वशास्त्रानुसारतः ।

कामिराय नराधीश श्रूयतां भवताधुना ॥ V 3

अन्ये विकल्पा द्रष्टव्या आक्षेपाणां विचक्षण ।

मया शास्त्रानुसारेण दिग्गजाः सप्रदर्शितम् ॥ IX 174

that he had carefully studied the authorities on poetics. The matter relating to the predictive character of the initial letters and metrical feet, which the author treats of in Chapter I, is generally described in works on metrics. Some early works on metrics are irretrievably lost but a few passages from such works are preserved in the works of later writers where they are quoted, perhaps directly from the original sources but mostly they appear at second hand, quoted from some writer who quotes them. Thus some ślokas are quoted by Nārāyanabhattacharya in his commentary on Vṛttaratnākara with the introductory remark taduktam Bhāmahena<sup>29</sup>. These ślokas inform us of Varna-phala and Guna-phala. It is very doubtful if this Bhāmaha is the same man who wrote Kāvya-lankāra'. Nārāyanabhattacharya also quotes some passages describing the deities of Ganas and auspicious or inauspicious character of the initial Ganas with the introductory remark

अन्यैस्तु देवताफलस्वरूपाण्येषामुक्तानि—

It is the authors of Alankārsangraha and ŚC who have introduced this topic in works on poetics. In Chapter II the author gives a sevenfold classification of poets based on their taste or aptitude for a particular type of literary composition. This classification is

---

29 Vide appendix-C

somewhat different from the eightfold classification of poets given for the first time by Rājaśekhara in his *Kāvya-mīmāṃsā*<sup>30</sup> Whereas Rājaśekhara names the groups of poets and adds stanzas to illustrate the type of literary composition of each one of them, Viṣayavarnī gives a definition of each one of the groups of poets but does not illustrate the types of their literary composition—ŚC and *Alaṅkārasaṅgraha*, however, agree in their classification and definition of groups of poets leading to the conclusion that one of them must have borrowed from the other<sup>31</sup>.

In the same chapter the author treats of the fourfold sense of words 1 Mukhyārtha with its four kinds ( (i) Jāti (ii) Kriyā (iii) Guna and (iv) Dravya) 2 Lak-yārtha 3 Gaunārtha and 4 Vyangyārtha, and the fourfold power of words . 1 Abhidhā 2 Lakṣanā ( with its three kinds (i) Jahatī (ii) Ajahatī and (iii) Jahatyajahatī) 3 Gaunī and 4 Vyañjanā It is the Mīmāṃsakas who look upon Gaunī as a separate power of words<sup>32</sup> This whole discussion is, generally speaking, based on *Kāvya-prakāśa* (Ullāsa II and III )

30. Vide Appendix-C

31. Vide Appendix-D

32. गोपबृत्तिर्लक्षणाभिन्नेति प्रमाणा । *Ratnāpana* (p 44)

*Vidvānātha*, however, emphatically says गोपबृत्ति-  
रपि लक्षणाभेद एव । *Pratāprudrayaśobhūṣana* ( pp  
44-45 )

In Chapter III the author deals with Rasa and Bhāva and their divisions. He treats of nine Sthāyī-bhāvas, nine Rasas, Vibhāvas (Ālambana and Uddīpana), Anubhāvas, eight Sāttvika bhāvas and thirty three Vyābhicārī (Sañcārī) bhāvas, and such details about Rasas as the primary and the derivative Rasas, (then inter relations), then harmonies and conflicts, their colours (Varna) and their presiding deities (Adhīdevatā). He clearly acknowledges his indebtedness to ancient or earlier authorities on the subject<sup>33</sup>. A study of his definitions of technical terms relating to Rasa-Bhāva and the like corroborates his statement. Two points, however, deserve special mention his description of the different factors relating to Śānta-Rasa is typically Jain<sup>34</sup> and is original, another remarkable point is that the author mentions Para-Brahma as the presiding deity of Śrngīra. In his celebrated commentary<sup>35</sup> on Nāṭya-śāstra Abhinavagupta writes

वीरो महेन्द्रदेव स्यात् बुद्ध शान्तोऽब्जजोऽद्भुत । इति शान्तवादिन  
केचित् पठन्ति । इदो जिन परोपकारकपर प्रबुद्धो वा ।

From this statement it is clear that the author had not Abhinava-bhāratī before him but some other text where

33 अतः कारणतोऽस्माभिरुच्यते रसलक्षणम् ।

पूर्वशास्त्रानुसारेण भावभेदविशेषितम् ।

—ŚC III 3.

34 III 109-112

35 Abhinavabhāratī Vol I p 299

Para-Brahman has been mentioned as its presiding deity. No early work on *Alamkārasāstra* which would be regarded as standard and well-known makes any reference to Para-Brahman as its presiding deity. Dr. Raghavan states that "the *Alamkārasarvasva* of Harsopādhyāya (?), written for one Gopāladeva, makes the supreme spirit, Para-Brahman, as the Devatā of *Sānta*<sup>36</sup>. We, however, do not know the exact date of this work which would have enabled us to determine the inter-relation between these two works. *Alamkārasangraha* of Amrtānandayogin speaks of Para-Brahman as the presiding deity of *Sānta-rasa*. There is a close agreement between ŚC of Vijayavarṇī and *Alamkārasangraha* of Amrtānandayogin in their treatment of some common topics from poetics<sup>37</sup>. The dates of these two works as proposed by scholars<sup>38</sup> do not, however, permit us

36 The Number of Rasas (p. 50) The Adyar Library, Adyar, 1940

37. See Appendix-D

38 For the date of Vijayavarṇī vide pages 2 and 3 supra. For the date of Amrtānandayogin, vide Introduction to *Alamkāra-sangraha* (pp. iv to vi) edited by Pandita Balakrishnamurti, Sri Venkatesvara Oriental Institute, Tirupati (1950) and Introduction to *Alamkārasangraha* (pp. XXXVIII-XLIII) edited by V. Krishnamācharya and K. Rāmachandra Sarma (The Adyar-Library Series- No. 70, 1949).

to state categorically that Vijayavarṇī has drawn upon Amṛtānandayogin's work.

In Chapter IV the author deals with characters : the hero, the heroine and their types, the enemies of the hero and the Dūtī. A comparative study of this chapter and the second Prakāśa of Daśarūpaka reveals that Vijayavarṇī is heavily indebted to Dhanarājaya in his treatment of the characters<sup>39</sup>. He differs with Dhanarājaya on three points

1. Dhanarājaya speaks of three friends (Sahāyas) of the hero<sup>40</sup>: 1. Pīthamarda (patākānāyaka), 2. Vīta, and 3. Vīdūsaka. Vijayavarṇī adds the fourth Nāgarika<sup>41</sup> to the list

2. Dhanarājaya mentions three types of heroines<sup>42</sup>: 1. Svīyā (= Svastri or Svakīyā), 2. Anyā (= Anyastri or Parakīyā) and 3. Sādhāranastri (Sādhāraṇā).

Vijayavarṇī makes them four<sup>43</sup> by adding one more type, viz. Anūdhā. He, however, says that according to one view, Anūdhā is parakīyā only and hence there are three types of heroines only.

---

39. Vide Appendix-C

40. Daśarūpaka II, vv 8-9 (ab)

41. ŚC IV, vv 29-32.

42. Daśarūpaka II, v15 (ab) and vv20 (cd)-22 (ab).

43. ŚC IV, vv 43-59.

3. In Dhananjaya's view if absence is due to death the love sentiment cannot be present<sup>44</sup>. Vijaya-varṇī advocates the view that Kaiuṇātmaka-vipralambha can be present if one of the two, ( the lover and his-beloved ) passes away and the other laments his or her death<sup>45</sup>. Now, Vidyānātha<sup>46</sup> also speaks of four Sahāyas of the hero but his list has Ceta and no Nāgarika. Rudrata<sup>47</sup> and Dhananjaya<sup>48</sup> speak of two types of Parakīyā or Anyasrī Kanyakā and Anyodhā. Vijaya-varṇī mentions Parakīyā and Anūdā (= Kanyakā) separately and makes four types of heroines. Of course, he is fully aware of the views of Rudrata and Dhananjaya that Anūdā (= Kanyakā), too, is regarded as not one's own (Parakīyā). Finally, in setting forth the four kinds of Vipralambhaśrūgāra he has followed Rudrata<sup>49</sup>.

---

44 Daśarūpaka IV, vv 50-51 (ab) and vv 57-68

45 ŚC IV, v 103 and v 110

46 Pratāparudravaśobhūṣana, Kāvya-prakarana, v 40

47 परकोया तु द्वेधा कन्योद्वा चेति ते हि जायेते ।

—Kāvya-lamkāra XII-30 (ab)

48 अन्यस्त्री कन्यकोद्वाच ।

—Daśarūpaka II-20 (c)

49 अथ विप्रलम्भनाया शृङ्गारोऽयं चतुर्विधो भवति ।

प्रथमानुरागमानप्रवासकरुणात्मकत्वेन ॥

—Kāvya-lamkāra XIV-1

and,

करुणं स विप्रलम्भो यत्रान्यतरो विवेकं नायकयोः ।

यदि वा मृतकल्पं स्यात्तत्रान्यस्तद्वगतं प्रलपेत् ॥

—Kāvya-lamkāra XIV-34



In Chapter V the author treats of Guṇas. A careful and comparative study of the definitions of these ten Guṇas with those given in the Kāvyaḍarśa reveals that Vijayavarṇī closely followed Daṇḍī<sup>50</sup>, and occasionally Vāmana<sup>51</sup>. Vijayavarṇī paraphrases Daṇḍī's definitions<sup>52</sup>.

In Chapter VI the author treats of Rīti and its four kinds 1 Vaidarbhī 2 Gaudī, 3. Pāñcālī, and 4. Lāṭī.

50. Vijayavarṇī's statement :

एते दशगुणा प्रेक्षा दश प्राणाश्च भाषिता । —V-5(ab)

Unmistakably reminds us of Daṇḍī's

इति वैदर्भमार्गस्य प्राणा दश गुणा स्मृता । —Kavyādarśa 42 (ab)

51 Cf अथवा पदबन्धस्योज्ज्वलत्वं कान्तिरुच्यते । —V-16 (ab)

and औज्ज्वल्यं कान्ति । ३. १ २५

बन्धस्योज्ज्वलत्वं नाम यदसौ कान्तिरिति ।

—Kāvyālamkāra-Sūtravṛtti

52 I give here only two examples :

( 1 ) Cf श्रुतिशैतोद्वयानन्दकारिणां कोमलात्मनाम् ।

वर्णानां रचनाप्यास सौकुमार्यं निरूप्यते । —V. 6

and, अनिष्ठुराक्षरप्राप्यं सुकुमारमिहेष्यते ।

बन्धशैथिल्यदोषोऽपि दर्शितः सर्वकोमले ।

सुकुमारतयैवेतद्वारोहति सती मन ।

—Kāvyādarśa I 69-71

( 11 ) Cf प्रसूक्तो लौकिकार्थोऽपि यथा भवति सुन्दर ।

सा कान्तिरुदिता सन्नि कलागमविशारदे । —V 15

and कान्तं सर्वजगरान्ता लौकिकार्थानतिक्रमात् ।

तत्त्ववार्ताभिधानेषु वर्णनास्वपि दृश्यते ।

—Kāvyadarśa I 85

It is Rudrata<sup>53</sup> who for the first time added *Lāṭī* to the three well known *Ritis* set forth by *Vāmana*. *Agnipurāṇa*<sup>54</sup> and *Jayadeva's Candrāloka*<sup>55</sup> too speak of these four *Ritis*. In *Bhoja's Sarasvatikanṭhā-bharana*<sup>56</sup> the *Ritis* number six with the addition of *Avantikā* and *Māgadhi*.

The definition of *Riti* given by the author is in agreement with the one set forth by *Vidyānātha* in his *PRY*<sup>57</sup>. *Vidyānātha*, however, speaks of three *Ritis* only, omitting *Lāṭī* as has been done by *Mammata*.

53 Rudrata II 3-6 *Vāmana* distinguishes *Ritis* on the basis of qualities ( *Guṇas* ) present whereas *Rudrata* distinguishes them on the basis of the use of compounds. *Viṣayavarṇi* clearly says that *Ritis* are based on the qualities possessed by words. In his definitions of *Ritis*, however, he follows these two principles.

54 Chapter 340, vv I-4 Dr *Raghavan* corrects the text of the fourth stanza ( vide *Some Concepts of Ālankāra Śāstra*, p 180, f n 1 )

55 *Maṇḍikā* VI 21-22

56 *Pariccheda* II, *Kārikās* 2-3

57 Cf. रातिरिति गुणश्लिष्टपदमयतना मता । —PRY p 63  
and माधुर्यादिगुणापेक्षदानी चतुर्मासिका ।

—*Śṛṅgārāṇavacandrikā* VI-3

*Vidyānātha's* definition is, however, based on *Vāmana's Sūtras* 1, 2, 7 8

In Chapter VII the author treats of six Vṛttas—  
1. Kaiśikī, 2. Ārabhaṭī, 3. Bhāraṭī, 4. Sāttvati, 5.  
Madhyamā Kaiśikī and 6 Madhyamā Ārabhaṭī. These  
six Vṛttas are first dealt with by Bhoja in his *Saras-  
vatīkathābhāṣana*, but as *Śabdālaṅkāra*s ( Chapter II.  
34-38 ) and after him by Vidyānātha in his *PRY*  
( *Kāvya-prakaraṇa*, pp 57-63 ) Vijayavarṇī's treatment  
of this topic bears remarkable resemblance to that of  
Vidyānātha's <sup>60</sup>.

In chapter VIII we find an exposition of the conception of Śayyā and Pāka. No doubt, the conception of Pāka is found in Vāmana's Kāvya-lamkārasūtra-vṛtti and Rājaśekhara's Kāvya-mīmāṃsā, but the striking thing is that the definitions of Śayyā and Pāka as given by Vijayavarṇī are in close agreement with the corresponding ones in Vidyānātha's PRY 61

58, Chapter VI, vv 5-7, 9 11 and 13  
and Chapter V vv 9-12.

59 Kāvyaśālokaśāstraśūtraṇṭi 1-2 11-13.

**60. Vide Appendix-3**

61 If it were accepted that Vijayavarṇi modelled his definitions of Sayyā and Pāka on those of Vidyānātha

पदानामानुगुण्य ब्रान्धोन्यमित्त्वमुच्यते ।  
यत् सा शय्या कलाशास्त्रनिपुर्णविदुषा वरैः ॥

—VIII 2

Cf या पदाना परान्योन्यमैत्री शय्येति कथ्यते ।

\* अत्र पदविनिमयासहिष्णुत्वाद् बन्धस्य  
पदानुगुण्यरूपा शय्या ।

—PRY p 67

आलम्ब्य शब्दमर्थस्य द्राक् प्रतीतिर्यतोऽजनि ।  
स द्राक्षापाक इत्युक्तो बहिरन्त स्फुरद्वस ॥  
आलम्ब्य शब्दमर्थस्य द्राक्प्रतीतिर्यतो न हि ।  
स नालिकेरपाक स्यादन्तर्गण्ड ( ? गूढ ) रसोदय ॥

VIII. 6-7.

द्राक्षापाक स कथितो बहिरन्त स्फुरद्वस ।  
स नारिकेलपाक स्यादन्तर्गूढरसोदय ॥

PRY pp 67-69

In Chapter IX the author gives an exposition of 47 Arthālamkāras. Of these, he defines the first 33 Arthālamkāras, including 33 divisions of Upamā and 20 divisions of Rūpaka, after Dandī's Kāvyaadarśa<sup>62</sup>. The rest of the Arthālamkāras are possibly defined by the author keeping in view Rudrata's Āryās dealing with them

we would have to reconsider the date of composition of ŚC

62 Vide Appendix-C.

In Chapter X the author treats of Kāvya-doṣas viz; Pada-doṣas, Vākya-doṣas, Artha-doṣas and Rasa-doṣas, and also describes the circumstances in which the Doṣas cease to be so. His treatment of Kāvya-doṣas clearly reveals his considerable indebtedness to Mammata<sup>63</sup> who treats of the Doṣas in his Kāvya-prakāśa ( Ullāsa VII ) Mammata has utilised earlier writers on this topic and added new Doṣas which he himself has discovered. Vijayavarnī follows Mammata's classification of Doṣas in toto.

#### 8 ACKNOWLEDGEMENT

In conclusion, I acknowledge my deep indebtedness to Dr. A N Upadhye, M A, D Litt, Dean, Faculty of Arts, Shivaji University, Kolhapur, at whose suggestion this work of editing SC from a single manuscript was entrusted to me. It is he who gave me the Ms and requested me to edit this work. He has all along been taking kindly interest in the progress of my work and its publication. I can never adequately express in words what I owe to Pandit Balacharya Khuperkar Shastri who has taken keen interest in this work and made valuable suggestions for emending the text as

---

63 Vide Appendix-C.

correctly as possible. It was, indeed, my proud privilege to spend hours together with him discussing matters relating to Sanskrit poetics in general and the text in particular I offer my warmest thanks to my friend Professor G S. Bedagkar, who kindly went through the Introduction and made valuable suggestions to improve it. However, for whatever imperfections still left in the work, I am entirely responsible.

The Author acknowledges his indebtedness to the Shivaji University, Kolhapur, for the grant-in-aid received by him from the University, towards the cost of Publication of this book.

Rajaram College, }  
 KOLHAPUR, }  
 August 25, 1966. }

V M KULKARNI

# DETAILED TABLE OF CONTENTS

## Chapter I

### Varna-Gana-Phala-Nirṇaya

[ A Study of (Initial) Letters and Metrical Feet and  
their Promise ]

#### Verses

- 1 Homage to Lord Jina.
- 2-3 Homage to Śārādā and Sarasvatī.
- 4-5 Homage to Vijayakīrti, the author's Guru.
- 6 Victory to Good Men.
- 7 Tributes to Karnātaka Poets like Gunavarman.
- 8-18 A brief description of Kadamba Kings :  
Vīranarasimha, Pāṇḍyarāja—his brother,  
Rājaśekhara, the son of Vīranarasimha,  
Kāmīrāja, the Maternal nephew of Pāṇḍya-  
vanga and contemporary of the author who  
ruled over Vanga ( Banga )-bhūmi with  
its Capital at Vanga ( Baṅga )-vāṭī
- 19-21 Kāmīrāja requested the author when  
meeting in a Literary Club to explain the  
nature of poetry and allied topics.

- 22-28 At the King's request the author composed this work called Śrngārārṇava-Candrikā.
- 29-32 Kāvya ( Literature ) and its kinds .  
Padya ( Verse ), Gadya ( Prose ) and Mīśra ( Mixed ), these three varieties are then defined and subdivided into nine divisions on the basis of their being Uttama, Madhyama or Jaghanya. These three terms are then defined.
- 33 The poem should begin with a prayer, paying homage or in addition invoking a blessing, or an indication of the subject-matter.
- 34-35 The present composition begins with varṇa-gaṇa-sūddhi, which contributes to the good of the poet and the hero. Its absence would bring disastrous consequences to the poet as well as the hero.
- 36-45 Initial alphabets and what they promise.
- 46-47 A poem should not begin with any conjunct except Kṣa for a sūddha letter when conjoined with another letter turns asūddha and brings evil consequences.
- 48-62 ( Initial ) metrical feet and what they promise, the nature of a long and a short



syllable, of the eight-fold metrical feet to be employed in Varnavṛttas, and five metrical feet, each consisting of four mātrās to be employed in Mātrāvṛttas and assigning of the Devatās to each and every one of the metrical feet.

- 63 Conclusion : "May the fame of King Kāmirāja shine bright."

## Chapter II

### **Kāvya-gata-śabdārtha-niṣcaya**

[ A Study of Words and Senses that constitute Poetry ]

- 1-2 Alternative definitions of a poet
- 3-7 Seven Types of Poets and their definitions
  - 3 defines a Raucika poet
  - 4 defines a Vācika poet as well as an Ārtha one
  - 5 defines a Śilpika poet as well as a Mārdavānuga one.
- 6-7 define a Viveki poet as well as a Bhūṣaṇārthī one.
- 8-9 The Sense of Sentences composed by poets is fourfold

1. Mukhyārtha, 2 Lakṣyārtha; 3. Gaunārtha; and 4. Vyaṅgyārtha.

10-12 definition of Mukhyārtha, its fourfold classification based on 1. Jāti; 2. Kriyā; 3 Guṇa; and 4. Dravya, and illustrations.

13-21 Definition of Lakṣyārtha, Lakṣanā and its three varieties

1 Jahallakṣanā, 2. Ajahallakṣanā and 3. Jahatyajahatī, and their illustrations.

22-23 Definition of Gaunārtha and its illustrations

24-25 Definition of Vyaṅgyārtha or Dhvani and its illustration

26 Informs us that Śabda-śakti is fourfold :

1 Abhidhā, 2. Lakṣanā, 3. Gaunī, and 4. Vyañjanā

27-31 deal with the causes ( Niyāmakas ) of the apprehension of a particular meaning when there is no determination or decision regarding the meaning of a word These are

1 Saṁyogah ( Conjunction ); 2. Viprayogah ( Disjunction ), 3. Virodhitā (Antagonism or Hostility); 4 Sāhacaryam ( Association ), 5. Kāla ( Time ), 6 Arthah ( Purpose or Motive ), 7. Prakaraṇam ( Context );

8 *Lingam* ( Special attribute or Characteristic ); 9. *Śabdāntarasannudhiḥ* ( Proximity of another word ), 10. *Sāmarthyam* ( Capability or Power ); 11 *Aucityam* ( Propriety or Fitness ); 12. *Vyaktiḥ* ( Gender ); 13. *Deśah* ( Place ); 14. *Svarādayaḥ* ( Accent and others ).

32-40 ( ab ) illustrate first thirteen causes ( *Niyāmakas* ).

40(cd)-41 *Gānasvara* is of no avail in poetry although it helps in determining the sense of a word in *Vedas Ādī* ( in-Svarāḍī ) includes *Cestāḍī*. Its illustrations should be found by the wise

42 Conclusion "May the valour of Kings *Vīraṇṛsūharāya* ever shine in all its glory."

### Chapter-III

#### *Rasa-bhāva-niscaya*

[ A Study of Rasas and Bhāvas ]

- 1 A poem though having flawless syllables and metrical feet, words and senses, is not liked if it be devoid of *Rasa*.
- 2 Hence the author undertakes in this Chapter an exposition of *Rasas* and *Bhāvas*.

- 3 Definition of Sthāyibhāva.
- 4 Sthāyibhāva is ninefold: 1. Rati; 2. Hāsa; 3 Śoka, 4 Kopa; 5. Utsāha; 6. Bhaya; 7. Jugupsā, 8. Vismaya, and 9 Śama.
- 5 Definition of Rasa
- 6-7 Rasa is nine-fold 1. Śrngāra; 2. Hāsyā, 3 Karuna, 4 Raudra, 5. Vīra, 6 Bhayānaka, 7 Bībhatsa, 8 Adbhuta, & 9 Śānta.
- 8 Definition of Śrngāra-rasa.
- 9 Definition of other Rasas
- 10 In the case of poetic compositions Rasa is experienced by appreciative readers or hearers only.
- 11 In the case of dramatic compositions it is experienced by spectators
- 12 Definition ( or etymological explanation ) of Bhāva.
- 13 Bhāva is four-fold, 1 Vibhāva, 2 Anubhāva, 3 Sāttvika, and 4 Vyabhicāri
14. Definition of Vibhāva which is two-fold : Ālambana and Uddīpana
- 15 Definition of Ālambana and Uddīpana Vibhāvas
- 16 Definition of Anubhāvas.
- 17 Definition of Sāttvika-bhāvas

- 18 Sāttvika-bhāvas are eight-fold · 1. Sveda;  
2. Kampana ( = Vepathu ) 3. Romāñica;  
4 Laya ( = Pralaya), 5 Stambha; 6. Vivar-  
ṇatā ( = Vaivarnya ), 7. Vikārasvaratā  
( = Svarabheda, Vaisvarya ) and 8. Aśru.
- 19 Definition of Vyabhicāri-bhāvas
- 20-22 List of thirty-three Sañcāri ( = Vyabhicāri )  
bhāvas  
1. Śankā, 2. Glāni, 3. Nirveda, 4 Jāḍya;  
5. Harsa, 6 Dhrti; 7. Śrama, 8. Dainya,  
9. Augrya, 10. Trāsa, 11. Cintā, 12 Īrsyā,  
13 Amarsa , 14 Garva , 15. Mada ,  
16. Smṛti, 17. Marana, 18. Supti, 19 Nidrā,  
20. Avabodha , 21. Vṛidā , 22. Viśāda ,  
23. Vyādhi, 24. Apasmāra, 25. Cāpalya,  
26. Mañi, 27. Moha, 28. Autsukya, 29. Ava-  
hittha, 30. Ālasya, 31. Vega, 32. Tarka,  
and 33. Unmāda.
- 23 In an actor Rasa is imagined to be present,  
but in a spectator it is really present.
- 24 In this world Rasikas enjoy Rasas in accor-  
dance with their own Karman.
- 25 Having described the different factors, in a  
general way, of the different Rasas the  
author now proposes to describe particularly  
the factors relating to Śṛṅgāra-rasa.

- 26-35 Various factors relating to Śrīgāra-rasa are set forth in detail
- 36 Śrīgāra is two-fold 1. Sambhoga & 2. Vipralambha.
- 37-38 Definition of Sambhoga-Śrīgāra and its illustration
- 39 Sambhoga-Śrīgāra is two-fold 1. Pracchanna and 2. Prakāśa, their definitions.
- 40 Vipralambha-Śrīgāra is four-fold, 1. Pūrvānurāga, 2. Māna, 3. Pravāsa, and 4. Karuṇa.
- 41 Sambhoga and Vipralambha have reference to lovers in union and lovers in separation respectively.
- 42-43 Ten Kāmāvasthās : 1. Nayana-prīti, 2. Manasaḥ sakti, 3. Saṁkalpa, 4. Jāgara, 5. Tanutā, 6. Viśaya-dveṣa, 7. Lajjavināśana, 8. Moha, 9. Mūrcchana, and 10. Marana.
- 44-45 Definition of Caksuh-prīti ( = Nayana-prīti ) and its illustration.
- 46-47 Definition of "Manasaḥ sakti" and its illustration
- 48-49 Definition of Saṁkalpa and its illustration
- 50-51 Definition of Jāgara
- 52-53 Definition of Tanutā and its illustration.

- 54-55 Definition of Viṣaya-dveṣa and its illustration.
- 56-57 Definition of Trapānāśa (=Lajjānāśa) and its illustration.
- 58-59 Definition of Moha and its illustration.
- 60-61 Definition of Mūrcchā and its illustration.
- 62-63 Definition of Marana and its illustration.
- 64 Definition of Hāsyā-rasa
- 65-68 Factors relating to Hāsyā-rasa are set forth in detail.
- 69-70 Hāsyā-rasa is three-fold: Uttama, Madhyama and Jaghanya: Smita and Hasita belong to Uttama category, Vihasita and Upahasita to Madhyama category, and Apahasita and Atihasita to Jaghanya category.
- 71-72 (ab) Definitions of these types of Hāsyā.
- 72 (cd)-73 Illustration of Hāsyā-rasa
- 74-75 (ab) Definition of Karuṇa-rasa which is two-fold: born of Istanāśa, and 2 Anistāpti
- 75(cd)-77 Factors relating to Karuṇa-rasa are set forth in detail.
- 78-79 Illustrations of two-fold Karuṇa-rasa.
- 80 Definition of Raudra-rasa; its two types  
1 Born of Mātsarya (jealousy) and 2 Born of Dveṣa ( Hatred )

- 81-83 Factors relating to Raudra-rasa are set forth in detail.
- 84-85 Illustrations of two-fold Raudra-rasa.
- 86-87 (ab) Definition of Vira-rasa and its three types 1. Dānavīra , 2. Dayāvīra and 3. Yuddha-vīra
- 87(cd)-v90 Factors relating to Vīra-rasa are particularly set forth.
- 91-93 Illustrate the three types of Vīra-rasa.
- 94 Definition of Bhayānaka-rasa.
- 95-97 Factors relating to Bhayānaka-rasa.
- 98 Illustration of Bhayānaka-rasa
- 99 Definition of Bībhatsa-rasa and its two types, based on factors causing 1 Jugupsā and 2 Vairāgya.
- 100-102 Factors relating to Bībhatsa-rasa.
- 103-104 Illustrations of the two-fold Bībhatsa-rasa.
- 105 Definition of Adbhuta-rasa.
- 106-107 Factors relating to Adbhuta-rasa.
- 108 Illustration of Adbhuta-rasa
- 109 Definition of Śānta-rasa
- 110-112 Factors relating to Śānta-rasa.
- 113 Illustration of Śānta-rasa
- 114 The author states he has finished defining and describing ( and illustrating ) Rasa, its



Kinds and different factors relating to different Rasas

- 115-116 Now, the author directs the King to listen to his exposition of "The Colours of Rasas", "The Presiding Deities of Rasas", The Cause and effect, relations between the primary and secondary Rasas, Antagonism between the Rasas and Absence of Antagonism between some Rasas
- 117 Mentions the colour and deity of Śṛṅgāra-rasa
- 118 Mentions the colour and the deity of Hāsya-rasa
- 119 Mentions the colour and the deity of Karuṇa-Rasa
- 120 Mentions the colour and the deity of Raudra-rasa
- 121 Mentions the colour and the deity of Vira-rasa
- 122 Mentions the colour and the deity of Bhayānaka-rasa
- 123 Mentions the colour and the deity of Bibhatsa-rasa
- 124 Mentions the colour and the deity of Adbhuta-rasa

- 125 Mentions the colour and the deity of *Sānta-rasa*
- 126 States that *Hāsyā*, *Karuṇā*, *Adbhuta*, and *Bhayāṇaka Rasas* are produced from *Śṛṅgāra*, *Raudra-Vīra* and *Bībhatsa* respectively
- 127 *Sānta-rasa* is not produced from any other *Rasa*. No other *Rasa* is to be found in this World.
- 128-129 *Bībhatsa*, *Vīra*, *Adbhuta* and *Karuṇa-Rasas* are opposed to *Śṛṅgāra-Bhayāṇaka*, *Raudra* and *Hāsyā-Rasas*, respectively *Sānta-rasa* is neither favourable nor opposed to any other *Rasa*
- 130 Conclusion "May the fame of King *Nṛsiṃha* ever shine bright"

## Chapter IV

### *Nāyaka-bheda-niscaya*

[ A Study of the Types of Hero—and of Heroine ]

- 1-2 Since *Rasas* and *Bhavas* are impossible to be met with in this world in the absence of *Netr* or *Nāyaka* ( and *Nāyikā* ) the author attempts in this Chapter an exposition of the Types of Hero and of Heroine giving their definitions and characteristics.

- 3-4 Enumeration of the qualities of a Hero
- 5-6 A person possessed of these qualities is called a Hero He is of four types :  
1 Dhīrodātta; 2 Dhīra-lalita, 3, Dhīra-Śānta, and 4, Dhīroddhata.
- 7- 8 Definition of Dhīrodātta and his illustration.
- 9-10 Definition of Dhīra-lalita and his illustration
- 11-12 Definition of Dhīra-Śānta and his illustration
- 13-14 Definition of Dhīroddhata and his illustration
- 15 These four types of Hero could give rise to any of the nine Rasas in accordance with their state of mind
- 16-17 Every one of these four types of hero could be again, four-fold ( this classification is based on the attitude of the heroes to women in love ) 1. anukūla, 2 satha, 3, dhṛsta, and 4 daksina
- 18-19 Definition of Anukūla and his illustration
- 20-21 Definition of Śatha and his illustration
- 22-23 Definition of Dhṛsta and his illustration
- 24-26 Definition of Daksina and his two illustrations
- 27-28 These four types are applicable to each class of hero in love, there are sixteen possible kinds of hero, and further, each of these may be a high-class, middle class or inferior

person Thus, in all, there may be forty-eight types of hero in love

- 29 enumerates four upanāyakas who help these heroes; 1 Vidūṣaka, 2 Pītha-marda, 3 Vita and 4. Nāgarika.
- 30 defines Vidūṣaka
- 31 defines Pīthamarda
- 32 defines Vita and Nāgarika
- 33 defines a Pratināyaka ( the enemy of the hero ).
- 34-35 enumerate a set of eight special excellences springing from their character ( Sāttvika ) which these heroes possess in their youth They are 1. Tejas, 2. Vilāsa, 3. Mādhurya, 4 Śobhā, 5. Sthairya, 6 Gabhīrata (= Gāmbhīrya ), 7 Audārya, and 8 Lalita
- 36 defines Tejas.
- 37 defines Vilāsa
- 38 defines Mādhurya
- 39 defines Śobhā and Sthiratva (= Sthairya )
- 40 defines Gāmbhīrya.
- 41 defines Audārya.
- 42 defines Lalita.
- 43 The author now proposes to define and treat of the Types of Heroine
- 44 Definition of heroine and her four types

- 45 These ( four types of heroine ) are :  
 1 Svakīyā, 2. Parakīyā, 3. Anūdhā and  
 4. Sādhāraṇa, according to some Anūdhā  
 is Parakīyā only, hence there are only three  
 types of heroine.
- 46 Definition of Svakīyā and Anyā.
- 47-48 Description of Svīyā ( =Svakīyā ) and her  
 excellences
- 49 Illustration of Svīyā
- 50 Definition of Anūdhā.
- 51 Illustration of Anūdhā.
- 52-53 According to some Parakīyā should be trea-  
 ted as Anūdhā for there is very little differ-  
 ence between the two . Anūdhā, who is  
 herself fallen in love, desires the company  
 of her hero, Parakīyā approaches the hero  
 at the behest of her Sakhī. According to  
 some others, however, there is absolutely no  
 difference between the two
- 54-55 "Parakīyā is a woman, may be married or  
 unmarried, who is not the mistress of her-  
 self. An amour with a married woman may  
 not form the subject of the dominant senti-  
 ment in the play but that with a maiden  
 may occur as an element in the principal  
 or the secondary action."

- 56 Illustration of Princesses cherishing love for Rāyavaṅga.
- 57 defines Sādharaṇa Nāyikā
- 58 She should accept the rich as lover and avoid the poor.
- 59 Illustration of such Nāyikās
- 60 The hero's wife may be 1 mugdhā ( inexperienced), 2 madhyā (partly experienced) and 3. pragalbhā ( fully experienced and bold )
- 61-62 define and illustrate Mugdhā
- 63-64 define and illustrate Madhyā
- 65-66 define and illustrate Pragalbhā
- 67 enumerates three types of Madhyā Nāyikā
- 68-69 Definition and illustration of Dhīrā Madhyā.
- 70-71 Definition and illustration of Adhīrā Madhyā
- 72 The heroine who is fully experienced and bold is again of three kinds 1. dhīrā, 2. adhīrā, and 3. dhīrādhīrā
- 73-74 Definition of Pragalbhā-dhīrā
- 75-76 Illustrations of Pragalbhā-dhīrā.
- 77-78 Definition and illustration of adhīrā-pragalbhā
- 79-80 Definition and illustration of dhīrādhīrā-pragalbhā

- 81 Madhyā who is of three types is, again, classified into Jyeṣṭhā ( Senior ) and Kaniṣṭhā ( Junior ); thus Madhyā is of six kinds.
- 82 Similarly, Pragalbhā too, is of six kinds.
- 83 Illustration of Jyeṣṭhā and Kaniṣṭhā.
- 84-86 After having defined heroines and their types the author now treats of the heroine's eight different relations to her lover 1. Svādhīnapatikā; 2 Vāsikasajjikā ( vāsakasajjā ); 3. Kalahāntarītā, 4. Vipralabdhā; 5. Virahotkṣāṇṭhitā; 6 Proṣitabhartṛkā, 7 Khanditā and 8. Abhisārikā.
- 87-88 Definition and illustration of Svādhīnapatikā.
- 89-90 Definition and illustration of Vāsikasajjikā ( = Vāsakasajjā ).
- 91-92 Definition and illustration of Kalahāntarītā.
- 93-94 Definition and illustration of Vipralabdhā.
- 95-96 Definition and illustration of Virahotkṣāṇṭhitā
- 97-98 Definition and illustration of Proṣitabhartṛkā
- 99-100 Definition and illustration of Khanditā.
- 101-102 Definition and illustration of Abhisārikā
- 103-104 Vipralambha-śrīgāra and its four kinds :  
1 pūrvānurāga 2. māna; 3 pravāsa and  
4 karuṇa.

- 105 Definition of Pūrvānūrāga.  
 106 Definition of māna and of Pravāsa  
 107 Definition of Karuna  
 108 Māna and Pravāsa ( vipralambha ) sṛngāra have reference to Khaṇḍitā and Prositapriyā.  
 109 Pūrvānūrāga ( vipralambha ) sṛngāra has reference to kalahāntarītā vipralabdhā and virahotkanthitā  
 110 Karuṇātmaka ( vipralambha )—sṛngāra refers to a woman mourning the death of her husband, or to any one in bereavement  
 111 The heroine's ( female ) messenger may be a friend ( sakhi ), a slave ( dāsi ), a nun ( līnginī ), a neighbour ( prativēśinī ), a foster-sister ( dhātreyī ), an artist ( silpikā ) or a workwoman ( kārū ) or self  
 112 Illustration of a messenger  
 113 The heroines described above, possess twenty excellences, springing from their character, when they are in the prime of youth  
 114-116 These excellences are 1. bhava, 2 hāva, 3 helā, 4 sobhā, 5 kānti, 6 dīptikā ( = dipti ), 7 madhuratva ( = mādhyatva ), prāgalbhyā ( = pragalbhātā ), 9 vadānyatā ( = audārya ), 10 dhairya, 11 līlā,



- 12, vilāsa, 13. vicchitti, 14. vibhrama,  
15. kilakīñcita, 16. mottāyita, 17. kuṭṭamita,  
18 bibboka, 19 lalita, and 20 vihrta.
- 117 of these twenty, the first three are physical,  
the next seven are alamkrtis, and the remain-  
ing ten are svābhāvika (svabhāvaja)
- 118-120 Definition (and description) of bhāva and  
its illustration
- 121-122 Definition of hāva and its illustration.
- 123-124 Definition of helā and its illustration
- 125-126 Definition of śobhā and its illustration
- 127-128 Definition of kānti and its illustration
- 129-130 Definition of dipti and its illustration.
- 131-132 Definition of mād'hurya and its illustration.
- 133-134 Definition of pragalbhātā and its illustration.
- 135-136 Definition of audārya and its illustration.
- 137-138 Definition of dhairyā and its illustration
- 139-140 Definition of lilā and its illustration
- 141-142 Definition of vilāsa and its illustration
- 143-144 Definition of vicchitti and its illustration
- 145-146 Definition of vibhrama and its illustration.
- 147-148 Definition of kilakīñcita and its illustration.
- 149-152 Alternative definitions of mottāyita and its  
illustrations
- 153-154 Definition of kuttamita and its illustration
- 155-156 Definition of bibboka and its illustration

157-158 Definition of *lalita* and its illustration.

159-160 Definition of *vihiṭa* and its illustration

161 The hero's good qualities like modesty, etc and a set of eight special excellences have been described. The author refrains from quoting examples but suggests that the wise should find them out for themselves

162 The author states excellences like *bhāva*, *hāva*, and so on, are described with reference to heroines, however, illustrations of these excellences may suitably be found even in clever heroes

163 Conclusion The author pays tributes to King *Viranṛsiṭha* for his eminence as a noble and exalted hero.

## CHAPTER V

### *Dasa-guṇa-niṣcaya*

#### [ A Study of Ten Guṇas ]

1-3 A poetic composition, devoid of Guṇas, is worthless. The author, therefore, following the authoritative works on poetics describes these Guṇas and requests King *Kāmarāja* to listen to his exposition,

- 4-5 There are ten Guṇas which are proclaimed as the Ten Prāṇas ( of poetic styles ) .  
 1. Sukumāratva (= Sankumārya), 2. Audārya, 3 Śleṣa, 4. Kānti, 5 Prasannatā (= Prasāda), 6. Samādhī, 7 Ojas, 8. Mādhurya, 9. Arthavyakti, and 10. Sāmyaka (= Samatā)
- 6-7 Definition of Sankumārya and its illustration.
- 8-10 Alternative definitions of Audārya and its illustration
- 11-12 Definition of Śleṣa and its illustration
- 13-14 Alternative definition of Śleṣa and its illustration
- 15-17 Alternative definitions of Kānti and its illustration
- 18-19 Definition of Prasannatā (=Prasāda) and its illustration
- 20-22 Alternative definition of Samādhī and its illustration
- 23-24 Definition of Ojas and its illustration.
- 25-26 Definition of Mādhurya and its illustration
- 27-28 Definition of Arthavyakti and its illustration
- 29-30 Definition of Samatā and its illustration.
- 31 Conclusion "May the King Rāyavaṅgendra, find delight in works of Mahākavis, bright with these Gunas."

## CHAPTER VI

## Rīti-niscaya

## [ A Study of Rīti ]

- 1 Poetry devoid of Riti is not approved of by connoisseurs
- 2 Hence the author defines (and describes) Riti and its kinds and urges the King to listen to them attentively
- 3-5 Set forth the nature and definition of Riti and its four kinds . 1. vaidarbhi, 2 gaudikā (= gaudī), 3 lātī and 4 pāñcalī
- 6-8 Definition of Vaidarbhī and its illustration
- 9-10 Definition and illustration of Gaudī.
- 11-12 Definition and illustration of Pāñcalī
- 13-14 Definition and illustration of Lātī
- 15 Śrngāra-, Karuna, Sānta, and Hāsyā- these Rasas are imbued with sweetness The remaining five Rasas are marked by Ojas-vigour
- 16 All the nine Rasas are possessed of the quality called "lucidity". The poet skilled as he is, should employ the remaining seven Gunas according to need.
- 17 Conclusion : "May the King—the royal

Swan—sport in the lake of kāvya dotted by groups of lotuses.

## CHAPTER VII

### Vṛtti-niścaya

[ Nature of Vṛtti—Manner or Style ]

- 1-2 Readers do not like poetry if it is devoid of Vṛtti Vṛtti is, therefore, defined and its varieties too, are explained and illustrated.
- 3 Defines Vṛtti and enumerates its varieties  
1, kaisikī, 2 ārabhaṭī, 3 bhāratī and 4 sāttavati
- 4 defines kaisikī.
- 5 defines ārabhaṭī.
- 6 defines bhāratī
- 7 defines sāttavati.
- 8-9 Nature of Rasas.
- 10 illustrates kaisikī
- 11 illustrates ārabhaṭī
- 12 illustrates bhāratī.
- 13 illustrates sāttavati.
- 14 Madhyamā Kaisikī is suited to all Rasas
- 15 Madhyamā ārabhaṭī is suited to all Rasas  
The author then brings out the difference between Vaidarbhī and other Ritis on the

one hand and Kaiśikī and others on the other hand, and defines four kinds of Sandarbha.

- 16 Conclusion . "May the fame of King Nādañjanātha endure for long

## CHAPTER VIII

### Śayya-pāka-miscaya

[ Nature of Śayyā and Pāka ]

#### 1-3 Śayyā

- V1 Śayyā is essential to any literary work.  
V2 defines sayyā as "Mutual Suitability of Words" or "The matri of Words."  
V3 Illustrates sayyā.

#### 4-9 Pāka

- 4 A poetic composition devoid of pāka is not liked by any one  
5 defines Pāka as "profundity of fourfold meaning-sense, and speaks of two kinds of pāka 1. Drākṣā and 2 Nālikera  
6 defines Drākṣā-pāka  
7 defines Nālikera-pāka.  
8 illustrates Drākṣā pāka  
9 illustrates Nālikera-pāka.  
10 Conclusion

CHAPTER IX

Alamkāra-sāraṅgīya

[ The Nature of Alamkāras ]

- 1 A poem devoid of Alamkāras does not look graceful
- 2-5 Alamkāras are the source of poetic charm, are of two kinds depending on sabda and artha ( Sound and Sense, Word and Sense ) Śabdālamkāras are fourfold: Yamaka, 2. Citra, 3. Vakrokti, 4. Anuprāsa; Arthālamkāras are, however, manifold such as Svabhāvokti,
- 6 request to King Śrīrāyavanga to listen to alamkāras
- 7 Leaves aside śabdālamkāras and defines arthālamkāras
- 8-13 enumerate 47 arthālamkāras
- 14-22 Svabhāvokti or Jāti with its varieties and illustrations
- 14 Svabhāvokti,
- 15 Jāti ( Sakriya or Nīṣkriya Vastu )
- 16-17 Sakriya
- 18 Nīṣkriya

19-22 fourfold Jāti based on Jāti, Kriyā, Guna and Dravya.

23-64 Upamā

23 Upamā

24 Dharmopamā

25 Vastūpamā

26 Viparyāśopamā

27 Anyonyopamā

28 Niyamopamā

29 Anvyamopamā

30 Samuccayopamā

31 Atisayopamā

32 Ūpadeśopamā

33 Adbhutopamā

34 Mohopamā

35 Sarṁśayopamā

36 Nirṇayopamā

37 Ślesopamā

38 Saṁtānopamā

39 Nindopamā

40 Prasamśopamā

41 Ācikhyāśopamā

42 Virodhopamā

43 Pratishedhopamā

44 Catūpamā

45 Tatyākhyānopamā



- 46 Asādhāraṇopamā
- 47 Abhūtopamā
- 48 Asambhāvitopamā
- 49 Bahūpamā
- 50 Vikṛiyopamā
- 51 Mālopmā
- 52 Ekevaśabdā Vakyārthopamā
- 53 Anekevaśabdā Vākyārthopamā \*
- 54 Prativastūpmā
- 55 Tulyayogopamā
- 56 Hetūpmā
- 57-61(ab) Upamādosas
- 61(cd)-62 declare that Upamā occurs when there is intention on the part of the Speaker to refer to Dharma only
- 63-64 enumerate or list words which are expressive or suggestive of Upamā.
- 65-86 Rūpaka
  - 65 Definition of Rūpaka
  - 66 Samastarūpaka
  - 67 Vyasta-rūpaka
  - 68 Samasta-Vyasta-rūpaka
  - 69 Sakala-rūpaka
  - 70 Avayava-rūpaka
  - 71 Avayavi-rūpaka

- 72 Ekāvayava-rūpaka ( Dvyavayava-rūpaka,  
tryavayava-rūpaka )
- 73 Yukta-rūpaka
- 74 Ayukta-rūpaka
- 75 Visama-rūpaka
- 76 Saviśesana-rūpaka
- 77 Viruddha-rūpaka
- 78 Hetu-rūpaka
- 79 Upamā-rūpaka
- 80 Vyatireka-rūpaka
- 81 Āksepa-rūpaka
- 82 Samādhāna-rūpaka
- 83 Rūpaka-rūpaka
- 84 Tattvāpahnuti-rūpaka
- 85-86 The author states that 33 divisions of Upamā and 20 divisions of Rūpaka have been described. The divisions of these two Alamkāras are infinite. Only a few of them are illustrated here.
- 87-90 Āvṛtti
- 87 Āvṛtti and its three varieties
- 88 Arthāvṛtti
- 89 Padāvṛtti
- 90 Ubhayāvṛtti
- 91-97 Hetu
- 91 Definition of Hetu

92	Hetu-alamkāra is manifold being based on the statement of Kāraṇa or Jñāpaka-hetu
93	Nirvartyakāra-kaviṣaya-hetu
94	Abhāvarūpa-nirvartyaviṣaya-hetu
95	Vikārya-ṣaya-kāra-hetu
96	Prāpyaviṣaya-kāra-hetu
97	Jñāpaka-hetu
98-118	Dīpaka
98	Definition of Dīpaka
99	Ādivarti-jātipada-dīpaka
100	Ādivarti-Kriyāpada-dīpaka
101	Ādivarti-guṇapada-dīpaka
102	Ādivarti-dravyapada-dīpaka
103	Ādivarti-Samjñāpada-dīpaka
104	Madhyavarti-jātipada-dīpaka
105	Madhyavarti-Kriyāpada-dīpaka
106	Madhyavarti-guṇapada-dīpaka
107	Madhyavarti-dravyapada dīpaka
108	Madhyavarti-Samjñāpada-dīpaka
109	Antyavarti-jātipada-dīpaka
110	Antyavarti-Kriyāpada-dīpaka
111	Antyavarti-guṇapada-dīpaka
112	Antyavarti-dravyapada-dīpaka
113	Antyavarti-Samjñāpada-dīpaka
114	Mālādīpaka
115	Viruddhārtha-dīpaka

- 116 Ślistārtha-dīpaka  
 117 Ekārtha-dīpaka  
 118 Antyakriyā-dīpaka The author states that this variety is illustra'ed here, once more, on account of "Bhāva-Camatkāra"  
 119-126 Utpreksā  
 119 Definition of Utpreksā  
 120 Words expressive of Utpreksā  
 121 Vācya-and Pratiyamāna-Utpreksā, Vācya-Utpreksā-defined  
 122 Pratiyamāna-Utpreksā-defined  
 123 alludes to 56 and 46 divisions of Vācyotpreksā and Pratiyamānotpreksā respectively  
 124 Their illustrations should be known from other works Here only the two primary and main divisions are described.  
 125 illustrates Vācyotpreksā  
 126 gives another illustration of Vācyotpreksā, the author states that following his predecessors he too does not give any illustration of Pratiyamānotpreksā  
 127-137 Arthāntaranyāsa  
 127 Definition of Arthāntaranyāsa  
 128 Visvavyāpi-arthāntaranyāsa  
 129 also an example of Visvavyāpi-arthāntaranyāsa

- 130 Viśeṣastha-arthāntaranyāsa.
- 131 Śliṣṭa-arthāntaranyāsa.
- 132 Viruddha-arthāntaranyāsa.
- 133 Ayukta-arthāntaranyāsa.
- 134 Yukta-arthāntaranyāsa.
- 135 Yuktāyukta-arthāntaranyāsa
- 136 Viparyaya-arthāntaranyāsa
- 137 States that there are other divisions, also of this Arthāntaranyāsa, their examples should be known from other works.
- 138-146 Vyatireka
  - 138 Definition of Vyatireka.
  - 139 Eka-vyatireka.
  - 140 Ubhaya-vyatireka
  - 141 Sāksepa-vyatireka
  - 142 Sahetu-vyatireka
  - 143 Ādhikyopeta-bheda-lakṣaṇa-vyatireka.
  - 144 Sadrśa-vyatireka
  - 145 Another illustration of Sadrśa-vyatireka.
  - 146 Sajāti-vyatireka
- 147-149 Vibhāvanā
  - 147 Definition of Vibhāvanā
  - 148 Kāranāntarakalpanā-vibhāvanā
  - 149 Svabhāva vibhāvanā
- 150-174 Āksepa
  - 150 Definition of Āksepa (Three Divisions).

- 151 Atitākṣepa.
- 152 Vartamānākṣepa.
- 153 Anāgatākṣepa.
- 154 Dharmākṣepa
- 155 Dharmyākṣepa.
- 156 Kāraṇākṣepa
- 157 Kāryākṣepa.
- 158 Anujñākṣepa
- 159 Prabhutvākṣepa.
- 160 Anādarākṣepa
- 161 Āsīrvacanākṣepa
- 162 Sācivyākṣepa.
- 163 Yatnākṣepa
- 164 Paravaśākṣepa
- 165 Upāyākṣepa.
- 166 Rosākṣepa
- 167 Anukrośākṣepa,
- 168 Anuśayākṣepa.
- 169 Ślistākṣepa
- 170 Samśayākṣepa
- 171 Arthāntarakṣepa.
- 172 Hetvākṣepa
- 173 Dharmākṣepa is again illustrated on account  
of "Bhāva-Camatkāra".
- 174 Other divisions of Ākṣepa should be known .  
(from other works) by the wise.

- 175-179 Atiśayokti.  
 175 Definition of Atiśayokti.  
 176 illustrates Atiśayokti  
 177 Samśayātīśayokti.  
 178 Niścayātīśayokti.  
 179 Adbhutātīśayokti or Virodhātīśayokti
- 180-181 Sūkṣma  
 180 Definition of Sūkṣma.  
 181 illustrates Sūkṣma.
- 182-185 Samāśokti-  
 182 Definition of Samāśokti.  
 183 Samānaviśesana-bhīnna-viśeṣya-samāśokti  
 184 Bhīnnābhīnna-viśesana-samāśokti.  
 185 Apūrvā-samāśokti. This Alamkāra should  
 be described by another name, viz,  
 Anyāpadeśa.
- 186-188 Lava (Leśa or Nindā stuti).  
 186 Definition of Lava  
 187 Vacogopana-leśa.  
 188 Cestāprakāśana-leśa
- 189-191 Krama  
 189 Definition of Krama.  
 190 Illustrates Krama.  
 191 Another example of Krama
- 192-194 Udātta  
 192 Definition of Udātta

- 193 Illustrates *Buddhi mahattva-Udātta*.  
 194 Illustrates *Aisvaryamahattva*  
 195-200 *Apahnava* (= *Apahnuti*)  
 195 Definition of *Apahnava*.  
 196 *Svarūpāpahnava*  
 197 Another example of *Svarūpāpahnava*  
 198 Still another example of *Svarūpāpahnava*.  
 199 *Viśayāpahnava*  
 200 States that *upamāpahnava* has already been described under *Upamā*, and that the wise should detect from among stanzas other divisions  
 201-202 *Preyas*  
 201 Definition of *Preyas*  
 202 illustrates *Preyas*.  
 203 207 *Virodha*.  
 203 Definition of *Virodha*.  
 204-206 illustrate *Śabdakṛtavirodha*.  
 207 illustrates *Arthakṛta-virodha*.  
 208 220 *Rasavat*  
 208 Definition of *Rasavat*  
 209 *Śingārākhyā*  
 210 *Yuddhavīra-rasākhyā*.  
 211 *Dānavīra-rasākhyā*.  
 212 *Dharmavīra-rasākhyā*.  
 213 *Karunākhyā*



- 214 Bībhatsākhyā
- 215 Hāsyākhyā
- 216 Adbhutākhyā.
- 217 Bhayānakākhyā.
- 218 Raudrākhyā.
- 219 Śāntarasākhyā.
- 220 Speech attains to the state of Rasa on account  
of these nine Rasas, according to others,  
however, eight Rasas excluding Śānta.
- 221-222 Ūrjasvī.
- 221 Definition of Ūrjasvī.
- 222 illustrates Ūrjasvī.
- 223-225 Aprastuta-prasāṃsā.
- 223 Definition of Aprastuta-prasāṃsā
- 224-225 illustrate Aprastuta-prasāṃsā.
- 226-232 Viśeṣokti
- 226 Definition of Viśeṣokti
- 227 Guṇavaikalya-viśeṣokti
- 228 Jātivaikalya-viśeṣokti.
- 229 Kṛyāvaikalya-viśeṣokti.
- 230 Dravyavaikalya-viśeṣokti.
- 231 Hetu-viśeṣokti.
- 232 States that there are other divisions of  
Viśeṣokti. The wise should conceive of  
them.

233-237 Tulyayogitā.

233 Definition of Tulyayogitā.

234 Two divisions of Tulyayogitā based on  
Stuti and Nindā.

235 Stutipara-tulyayogitā.

236 One more illustration of Stutipara-  
tulyayogitā

237 Nindāpara-tulyayogitā

238-239 Paryāyokta

238 Definition of Paryāyokta

239 illustrates Paryāyokta.

240-244 Sahokti

240 Definition of Sahokti

241 Gunasahabhāvakathana-Sahokti

242 Kṛiyāsahabhāvakathana-Sahokti

243 gives an alternative definition of Sahokti

244 illustrates Sahokti as defined in v243 and  
designates it Kāryakārana-sahajanma-Katha-  
na-Sahokti

245-247 Parivṛtti ( two divisions )

245 Definition of Parivṛtti

246 Sadrśārtha-parivṛtti

247 Visadrśārtha-parivṛtti

248-249 Samāhita (= Samādhī )

248 Definition of Samāhita

249 illustrates Samāhita.

- 250-260 Śliṣṭa (= Śleṣa )
- 251 Abhinna-pada-Śliṣṭa (= Śleṣa)
- 252 Bhinna-pada-Śliṣṭa (= Śleṣa)
- 253 States that Śleṣa accompanying Vyatireka and other Alarhkāras has already been shown. A few other Śleṣas are described hereafter.
- 254 Kriyāka-abhinna-śleṣa ( =Abhinna-kriyā-śleṣa )
- 255 Aviruddha Kriyāśleṣa
- 256 Viruddhakriyāśleṣa
- 257 Saṁyama śleṣa
- 258 Niyamanisedhasleṣa
- 259 Aviruddha śleṣa
- 260 Upamā-śleṣa
- 261-263 Nidarśana (= Nidarsanā)
- 261 defines Nidarśana ( two kinds )
- 262 Prasasta-nidarśana
- 263 Aprasasta-nidarśana
- 264 267 Vyāpastuti
- 264 defines Vyāpastuti
- 265 illustrates Vyāpastuti
- 266 Śliṣṭa Vyāpastuti
- 267 States that Vyāpastuti has infinite varieties.
- 268-270 Āśih
- 268 defines Āśih

- 269-270 illustrate Āśīh  
 271-273 Samuccaya  
   271 defines Samuccaya.  
   272 Atyutkrsta samuccaya  
   273 Atyapakrsta Samuccaya  
 274-275 Vakrokti  
   274 defines Vakrokti  
   275 illustrates Vakrokti  
 276-279 Anumāna ( three divisions )  
   276 defines Anumāna  
   277 Vartamāna-Sādhya-gocara  
   278 Atita-sādhya-gocara  
   279 Bhāva-sādhya-gocara  
 280-281 Visama  
   280 defines Visama  
   281 illustrates Visama  
 282-283 Avasara  
   282 defines Avasara  
   283 illustrates Avasara  
 284-285 Prativastūpamā  
   284 defines Prativastūpamā.  
   285 illustrates Prativastūpamā The author adds  
     a remark "according to some this Alankāra  
     is included in Upamā"  
 286-287 Sāra  
   286 defines Sāra

- 287 illustrates Sāra.
- 288-289 Bhrāntimān
  - 288 defines Bhrāntimān
  - 289 illustrates Bhrāntimān. The author remarks that this Alamkāra is, according to some, the same as Mohopamā.
- 290-293 Saṁśaya
  - 290 defines Saṁśaya.
- 291-292 illustrate Saṁśaya,
  - 293 Defines Niścayānta Saṁśaya. The author remarks that, according to some, Saṁśaya and Niścayānta-Saṁśaya are the same as Saṁśayopamā and Nirṇayopamā respectively.
- 294-295 Ekāvalī
  - 294 defines Ekāvalī
  - 295 illustrates Ekāvalī,
- 296-297 Parīkara,
  - 296 Defines Parīkara.
  - 297 illustrates Parīkara.
- 298-300 Paṛisaṁkhyā
  - 298 defines Paṛisaṁkhyā.
  - 299-300 illustrate Paṛisaṁkhyā. The author remarks that it is, according to some, the same as Saṁnyama-śleṣa.
- 301-304 Praśnottara (three kinds)
  - 301 defines Praśnottara

- 302 Vyakta-Praśnottara.  
 303 Vyaktaprasna-Gūdhottara.  
 304 Vyaktagūdhottara-Praśnottara.  
 305-308 Saṁhara.  
 305 defines Saṁhara,  
 306-307 illustrate Saṁhara.  
 308 states that Saṁhara is two-fold 1 When there exists the relation of "the principal and the subordinate" and 2, When there is "the state of equal prominence" between the Alaṁkāras constituting Saṁhara  
 309-310 Conclusion  
 309 The author states how he has completed this compendium of Alaṁkāras although their scope is vast  
 310 The author expresses his benediction that the fame of King Nṛsiṁha ( Kāmarāja ) should continue to live through his Kāvya

## CHAPTER X

**Nature of Dosas and the Circumstances in which they  
 turn out to be Gunas**

- 1 A poem free from Dosas leads to fame.  
 2-4 enumerate 15 Pada-dosas.

- 5-33 define and illustrate these Padadoṣas.
- 5-6 Asamartha.
- 7 Śrutikaṭu.
- 8-9 Nirarthaka.
- 10-11 Avācaka
- 12 Cyutasamśkrta
- 13-14 Aprayukta.
- 15-16 Grāmya.
- 17-20 Aślīla (three kinds).
- 21-22 Neyārtha.
- 23 Kliṣṭa
- 24-25 Sandigdha
- 26-27 Anucitārtha.
- 28-29 Avimrsta-vidheyāṁśa.
- 30-31 Viruddhamatikṛt.
- 32-33 Apratīta.
- 34 points out how these Doṣas pertain also to parts of a word
- 35-39 illustrate a few of these Doṣas pertaining to parts of a word
- 40-43 enumerate 22 Vākya-doṣas.
- 44-45 Upahatalupta-vīsarga
- 46-50 Hatavrta
- 51-52 Garbhita
- 53-54 Samkīrṇa
- 55-56 Nyūnapada

- 57-58 Kathinapada  
 59-60 Prasiddhi-hata  
 61-63 Akrama  
 64-68 Visandhi  
 69-70 Pratikūla-varna  
 71-72 Asthānastha-pada  
 73-74 Asthānastha-samāsa  
 75-76 Adhikapada  
 77-78 Rasa- cyuta  
 79-80 Samāpta-punarātta  
 81-82 Anabhihita-vācya  
 83-84 Aprastutārtha  
 85-86 Amata-parārtha  
 87-88 Ardhāntaraika-vācaka  
 89-91 Bhagna-prakrama  
 92-94 Abhavanmata-yoga  
 95-96 Patatprakarsa  
 97-100 enumerate 21 Artha-dosas  
 101-142 define and illustrate these Arth a-dosas  
 101-102 Apu-ta  
 103 104 Kasta  
 105-107 (ab) Sandigdha  
 107(cd)-108 Vyāhata  
 109-110 Grāmya  
 111-112 Duskrama  
 113-114 Vyarthikṛta



115-116	Ahetu
117-118	Punarukta
119-120	Aślīla
121-122	Sākāṅkṣa
123-124	Prasiddhi-Viruddha
125-126	Vidyā-viruddha
127-128	Ukta-viruddha
129-130	Samīyama
131-132	Anīyama
133-134	Viśeṣa-parivṛtta
135-136	Aviśeṣa-parivṛtta
137-138	Vidhyānuvāda-vivṛtta
139-140	Iyaktu-punaḥsvīkṛta
141-142	Sahacarabhīṇa
143-166	illustrate and explain how, in certain circumstances Pada-dosas, Vākya-dosās and Artha-dosās turn out to be Guṇas. The circumstances in which Śrutikatu, Asamartha, Kṛta, Neyārtha, Nirarthaka, Aślīla, Sandigdha Apratīta, Nyūnapada, Adhika-pada Punarukta, Nirhetu ( Ahetu ) these Dosas cease to be so and, in fact, turn out to be Guṇas
167-176	Under the word Prasiddhi (occurring in the Prasiddhi-viruddha dosa) are included other things also which are not found in

nature but are Prasiddha according to Kavi-samaya (poetic conventions)

177-180 enumerate Rasa-dosas

181-186 Rasābhāsa and Bhāvābhāsa

187-190 illustrate Svasabdagrahana

191 illustrates Kṛsta-Kalpanā

192 illustrates Pratikūlavibhāvādi-grahana

193 The author here directs that the reader should refer to the poetic compositions for Rasa-Dosas (those illustrated here and others mentioned in vv178-179 (viz, Punah punah dīptih, Ākāśa (= Akānda) prathana Ākāśa (= Akānda) Cheda Angasya ativistr-  
tiḥ, Angino ananusandhānam Prakṛti-  
viparyayah Anangasyābhidhānam).

194-197 In conclusion, the author addresses king Kāmīrāja in glowing terms and wishes him well.

श्रीअनन्तनाथाय नमः । निदिधनमस्तु ।

## वर्णगणफलनिर्णयो नाम

प्रथमं परिच्छेदः ।

जयति ससिद्धकाव्यालापपद्माकरेऽयं  
 वरगुणयुतजीवन्मुक्तिपुस ( प्रियो य ।  
 मुमधुमधु ) रवाणीसारनिक्वाणरम्यो  
 जिनपतिकलहसश्चारुसंनिति<sup>१</sup>पक्ष्मा ॥ १ ॥  
 अमन्दानन्दमदोहपीयूषरसदायिनीम् ।  
 स्तवीमि शारदा दि(व्या) <sup>२</sup>ज्ञानैकफलशालिनीम् ॥ २ ॥  
 समन्तभद्रादिमहाकवीश्वरे  
 कृतप्रबन्धोज्ज्वलसत्सरोवरे ।  
 लसद्रसालकृतिनीरपङ्कजे  
 सरस्वती क्रीडति भावबन्धुरे ॥ ३ ॥  
 श्रीमद्विजय<sup>३</sup>कीर्तीन्द्रो सूक्तिमदोहकौमुदी ।  
 मदीयचित्तमताप हृत्वानन्द<sup>४</sup>दद्यात्परम् ॥ ४ ॥  
 श्रीमद्विजयकीर्त्याख्यगुरुराजपदाम्बुजम् ।  
 मदीयचित्तकासारे स्थेयात् सगुद्वधीजले ॥ ५ ॥  
 मलयानिलसकाशो गुणसौरभवर्धक ।  
 सतापहृज्जनानन्द सुजनो<sup>५</sup> जीवतान्विरम् ॥ ६ ॥

१. वक्ष्य, २ ज्ञानफल, ३ कीर्तीन्द्रो., ४. मदीय च स्म, ५. ददात्,  
 ६ देवता ।

गुणवर्मादिकर्नाटकवीना भूक्तिसचय ।  
 वाणीविलास<sup>१</sup> देयात्ते रमिकानन्ददायिनम् ॥ ७ ॥  
 राजनीतिमहाशास्त्रनिरूपितफलप्रदाम् ।  
 नानातटाककासारनदीवनविभूषिताम् ॥ ८ ॥  
 सदे ( व ) पुरसकाशनानानगरभासुराम् ।  
 जिनराजमहाधर्मश्रावकोत्तमराजिताम् ॥ ९ ॥  
 अष्टादशमहाश्रेणीभूषिता श्रीमतीतराम् ।  
 पश्चिमाणवपर्यन्ता दशा सर्वमुखप्रदाम् ॥ १० ॥  
 श्रीमद्भूतराजेन्द्रनामचक्रधरोपम ।  
 श्रीवीरनरसिंहाख्यवङ्गभू(मी)श्वरो महान् ॥ ११ ॥  
 पालयत्यमला<sup>२</sup> बङ्गवाटीपुरममन्विताम् ।  
 कादम्बवशजनिनानेकभूमीशपालिताम् ॥ १२ ॥  
 तस्यानुजो<sup>३</sup> गुणाधीश पाण्ड्यबङ्गनरेश्वर ।  
 सत्येन रामचन्द्रोऽभूद्धर्मेण भरतेश्वर ॥ १३ ॥  
 रत्नत्रयमहाधर्मरक्षको राजशेखर ।  
 महाकविजन<sup>४</sup> स्तूयमानसत्कीर्ति(ना)यक ॥ १४ ॥  
 सोऽपि श्रीपाण्ड्यबङ्गोऽय जिनपादाब्जषट्पद ।  
 अनुक्रमागता भूमि पूर्वोक्ता रक्षति स्म वै ॥ १५ ॥  
 तस्य श्रीपाण्ड्यबङ्गस्य भागिनेयो गुणार्णव ।  
 विट्टलाम्बामहादेवीपुत्रो राजेन्द्रपूजित ॥ १६ ॥  
 "श्रीकामिराजबङ्गोऽभून्नाम्ना नृपतिकुञ्जर ।  
 वैरिसदोहगन्धेभ<sup>५</sup> घटा(क)ण्ठीरवोपम ॥ १७ ॥

१ देयाते, २ बङ्गवाडी I have sanskritised as बङ्गवाटी,  
 ३ गुणादी पाण्ड्य, ४ स्तूय मानसत्कीर्ति यक, ५ कामिराय I  
 have sanskritised as कामिराज throughout the text  
 ६ घटा ठिरवो ।



तत् काव्यं त्रिविधं प्रोक्तं पद्यं गद्यं च मिश्रितम् ।  
 उक्तादिच्छन्दसा बद्धं पद्यकाव्यं निरूपितम् ॥ २९ ॥  
 गद्यकाव्यं तु वाक्यानां मूलालङ्कृतमीरितम् (समुच्चय इतीरितम्) ।  
 गद्यपद्योभयं प्रोक्तं मिश्रकाव्यं बुधोत्तमं ॥ ३० ॥  
 उत्तमं मध्यमं प्रोक्तं जघन्यं त्रिविधं पुनः ।  
 प्रत्येकमिति तत् काव्यं नवधा संप्रवर्तते ॥ ३१ ॥  
 उत्तमं ध्वनिभिर्यत्नमव्यक्तं मध्यमं मतम् ।  
 ध्वन्यर्थशून्यं काव्यं तु जघन्यं परिकीर्तितम् ॥ ३२ ॥  
 आशीरलङ्कृतं वस्तुनिर्देशपरिभूषितम् ।  
 नमस्कृतिममेतं वा तत् काव्यं मुखमुच्यते ॥ ३३ ॥  
 एतत्काव्यमुखे वर्णगणशुद्धिं प्रकीर्त्यते ।  
 तथा कवेर्नायकस्य जाघटीति महाशुभम् ॥ ३४ ॥  
 तदभावेऽनिष्टफलं कविनायकयोर्भवेत् ।  
 तस्माद्वर्णगणानां तु शुद्धिरुक्ता बुधैर्यथा ॥ ३५ ॥  
 अकारादिक्षकारान्तां वर्णांस्तेषु शुभावहा ।  
 केचित् केचिदनिष्टाख्यं वितरन्ति फलं नृणाम् ॥ ३६ ॥  
 ददात्यवर्णं संप्रीतिमिवर्णो मुदमुद्वहेत् ।  
 कुर्याद्विवर्णो द्रविणं ततः स्वरचतुष्टयम् ॥ ३७ ॥  
 अपख्यातिफलं दद्यादेव सुखफलावहा ।  
 इन्द्रविन्दुर्विमर्गान्स्तु पदादौ सभवन्ति नो ॥ ३८ ॥  
 कखगघाङ्च लक्ष्मीं ते वितरन्ति फलोत्तमाम् ।  
 दन्ते चकारोऽपख्यातिं छकारं प्रीतिसौख्यदः ॥ ३९ ॥  
 मित्रलाभं जकारोऽज्यं विधत्ते भीभृनिद्वयम् ।  
 झं करोति टठौ खेददुःखे द्वे कुरुत क्रमात् ॥ ४० ॥

१ °द्यादेव, २ विदत्तेतिमुत्तं ।

शोभाकरो डकारोऽयमशोभाफलदस्तु ढ ।  
 णकारो भ्रमण दत्ते तकार. सुखदायक ॥ ४१ ॥  
 'थो युद्धदो दधौ सौख्यफलो नस्तु प्रतापद ।  
 पो भय फस्तु सतोष ( ? फस्त्वसतोष ) बो मृत्यु  
 क्लेशन तु म ॥ ४२ ॥  
 दाह क्रमान्मकारो विधत्ते श्रीकरस्तु य ।  
 दाहकृद्रेफवर्णस्तु लँवौ व्यसनदायकौ ॥ ४३ ॥  
 शस्तनोति मुख षस्तु खेद मस्तु सुख क्रमात् ।  
 दाहदो हस्तु कवर्णो ददाति व्यसन फलम् ॥ ४४ ॥  
 क्षस्तु सर्वसमृद्धीडयफलदानक्रियान्वित ।  
 सम ( ? सर्व ) वर्णफल प्रोक्तमेव प्रत्येकत क्रमात् ॥ ४५ ॥  
 मुखे काव्यस्य वर्णाना सयोगस्त्यज्यता बुधै ।  
 शुद्धवर्णोऽन्यवर्णेन युक्तो दु फलदो भवेत् ॥ ४६ ॥  
 विपनामेति कर्पूर तैलयुक्त यथा भुवि ।  
 क्षकारस्तु प्रयोक्तव्य 'काव्यादौ सत्फलावह ॥ ४७ ॥  
 वर्णाना शुद्धिरित्युक्ता गणशुद्धि प्रकीर्त्यते ।  
 दीर्घोऽनुस्वारयुक्तो वा विसर्गान्ति स्वरस्तथा ॥ ४८ ॥  
 द्वित्वाक्षरममेतो वा परतो गुरुच्यते ।  
 इतरो लघुरुक्तोऽय म्वर छन्दोविगारदै ॥ ४९ ॥  
 स्वरो लघुरपि प्रोक्तो विकल्पेन गुरुर्बुधै ।  
 पादान्ते यदि वर्तते पद्याना द्विविधात्मनाम् ॥ ५० ॥  
 गुरुणा लघुना ताभ्या व्याप्ता वा गदिता गणा ।  
 अष्ट वा पञ्च वा तेषा प्रत्येक लक्षण यथा ॥ ५१ ॥

१ छोयुद्धदो दधौ, २ अतौ व्यसनदायका, ३. शस्तु हति, ४ भेद,  
 ५ युक्त\* दु फलदो, ६ काव्यदौ ।

त्रिगुरुर्भगण प्रोक्तस्त्रिलघुर्नगणो मत ।  
 यगणो लघुमानादौ तगणोऽन्त्यलघुर्मतः ॥ ५२ ॥  
 रगणो लघुमान्मध्ये जगणो मध्यसद्गुरु ।  
 सगणोऽन्त्यगुरु प्रोक्तो भगणो गुरुगदित ॥ ५३ ॥  
 अष्टावृते गणा प्रोक्ता प्रत्येक त्रित्रिवर्णका ।  
 वर्णवृत्ते प्रयोक्तव्या कवितानिपुणैर्वृद्धैः ॥ ५४ ॥  
 चतुर्मात्रागणा पञ्च प्रत्येक गदिता वृद्धैः ।  
 मात्रावृत्ते तु ते ज्ञेयास्तेषा लक्षणमुच्यते ॥ ५५ ॥  
 द्विगुरुर्भगण प्रोक्तो नगणश्च चतुर्लघु ।  
 भगणो जगणो यश्च सगणो वर्णवृत्तवत् ॥ ५६ ॥  
 यरतास्तु न मन्त्यत्र पञ्चमात्रात्मकत्वतः ।  
 क्वचित् सन्ति विगेषोक्ते सभवादिति बुध्यताम् ॥ ५७ ॥  
 यगणो जलरूपोऽयं धनकृद्भगणोऽनल ।  
 भयदाहकरस्तस्तु गगन श्रीकरो मतः ॥ ५८ ॥  
 भगण 'सुखकृत्सौम्यो जो भानू रोगदायक ।  
 वायव्य सगणो दत्ते क्षयरूप फलं सदा ॥ ५९ ॥  
 शुभदो मगणो भूमिर्नगणो गौर्धनप्रद ।  
 एव गणफल प्रोक्त शुभाशुभविभेदतः ॥ ६० ॥  
 देवतावाचिशब्दानां भद्रार्थप्रकाशिनाम् ।  
 शब्दानां निरवद्यत्वं काव्यादौ गणवर्णतः ॥ ६१ ॥  
 गणवर्णफलं प्रोक्तं समानं कविभिः कृते ।  
 काव्ये सर्वत्र बोद्धव्यं गद्यपद्योभयात्मके ॥ ६२ ॥

१ तु वद्ज्ञेयां, २ सुखकृत्सौम्यो, ३ भानो ।



एवं रम्यकवीश्वरे कृतिमुखे निर्दिष्टनिर्दोषके-  
 वर्णेश्चारुगणोत्करैर्विलसिते काव्ये सरोजाकरे ।  
 श्रीमद्वीरनृसिहारायनृपते कीर्तिस्त्वदीयामला  
 मत्यत्यागगुणोद्भवा विजयता सा राजहसीसमा ॥६३॥

इति परमजिनेन्द्रवदनचन्द्रबिनिर्गतस्याद्वादचन्द्रिकाचकोरविजयकीर्ति-  
 मुनान्द्रचरणाब्जचञ्चरीकविजयवर्णविरचिते श्रीवीरनरसिह-  
 कामिराजबङ्गनरेन्द्रशरदिन्दुसनिभकीर्तिप्रकाशके शृङ्गा-  
 राण्यचन्द्रिकानाम्नि बलङ्कारसंग्रहे वर्णगणफल-  
 निर्णयो नाम प्रथम परिच्छेद ।  
 श्री ॥ श्री जिनाय नम ॥

इति वर्णगणफलनिर्णयो नाम प्रथम परिच्छेद ।



## काव्यगतशब्दार्थनिश्चयो नाम

### द्वितीय. परिच्छेद

प्रतिभाशक्तिसपन्नो व्युत्पत्त्यभ्यासभूषित ।  
 अष्टादशस्थलार्थानां वर्णनानिपुण कवि ॥१॥  
 अथवा शक्तिनैपुण्यकविशिक्षात्रयान्वित ।  
 रसभावपरिज्ञानगुणाढ्य कविरुच्यते ॥२॥  
 त्यज्यते गृह्यते शब्दोऽर्थो वा तावत्पुन पुन ।  
 'येन यावद्बुचि स्वस्य रौचिक स कविर्भवेत् ॥३॥  
 शब्दडम्बरमात्रार्थी वाचिक कविरुच्यते ।  
 अर्थवैचित्र्यमात्रार्थी सोऽयमार्थ कविर्भवेत् ॥४॥  
 शब्दार्थद्वयचित्रार्थी शिल्पिक कविरुच्यते ।  
 शब्दार्थमृदुताकारी 'मार्दवानुगनादभाक् ॥५॥  
 वाच्यवाचकसबन्धिगुणदोषविदा वर ।  
 महाकवीनां मार्गज्ञो नानाशास्त्रार्थकोविद ॥६॥  
 विवेकीति कवि प्रोक्तो दिव्यालंकारयोजने ।  
 तत्परो भूषणार्थीति नाम्ना कविर्दाहृत ॥७॥  
 इति सप्तविधा प्रोक्ता कवयः कविपुङ्गवै ।  
 कविप्रयुक्तवाक्यानां चतुर्थार्थं प्रवर्तते ॥८॥  
 मुख्योऽर्थो लक्ष्यनामापि गौणाख्यो व्यङ्ग्यनामक ।  
 महाकवीन्द्रं सत्काव्ये प्रयुक्तोऽर्थश्चतुर्विध ॥९॥

१ येन यावद्बुचि स्वस्य स कवी रौचिको भवेत् । २. मूर्द्धवानुगना-  
 दुभाक् ।

साक्षात् संकेतविषयो मुख्योऽर्थः प्रणिगद्यते ।  
 जातिः क्रिया गुणो द्रव्यमिति सोऽपि चतुर्विधः ॥१०॥  
 अश्व-गो-गज-वृक्षादि-शब्दा जातिप्रकाशका ।  
 क्रियाभिधायिका याति गच्छतीत्यादयो मता ॥११॥  
 शुक्लकृष्णहरिद्रक्तेकिमीरादिगुणो भवेत् ।  
 दण्डिकुण्डलिचैत्रादि-द्रव्यमित्यभिधीयते ॥१२॥  
 मुख्यार्थं बाधिते मुख्यसबन्धयर्थोऽपि लक्ष्यते ।  
 'अन्यार्थत्वेन यः सोऽयं लक्षणेत्यभिधीयते ॥१३॥  
 लक्ष्यवाचकशब्दस्य लक्षणाशक्तयस्त्रिधा ।  
 जहत्यजहती स्वार्थं जहत्यजहतीति च ॥१४॥  
 यत्र स्वार्थं परित्यज्य शब्दोऽन्यत्र प्रवर्तते ।  
 तत्सबन्धयुते प्रोक्ता सा जहल्लक्षणा बुधैः ॥१५॥  
 'कौमुदं वर्धयत्यत्र राजा नीतिविदा वर ।  
 घोषो वसति गङ्गायामित्युदाहरणं मतम् ॥१६॥  
 अपरित्यज्य मुख्यार्थं शब्दोऽन्यत्र प्रवर्तते ।  
 तत्सबन्धयुते यत्र सा जहल्लक्षणेतरा ॥१७॥  
 प्रविशन्ति महादुर्गं कुन्ताश्चापानि शक्तयः ।  
 खेटखड्गाश्च रक्षार्थमित्युदाहरणं स्मृतम् ॥१८॥  
 शब्दो जहाति मुख्यार्थं न जहात्यपि यत्र सा ।  
 जहत्यजहती प्रोक्ता लक्षणा कविकुञ्जरैः ॥१९॥  
 व्रजन्ति शिबिका मार्गं व्रजन्ति च्छत्रिणोऽपि च ।  
 व्रजन्त्यान्दोलिका प्रोक्तमित्युदाहरणं बुधैः ॥२०॥  
 'शिबिका-दोलिका-च्छत्रशब्दैः स्वार्थप्रकाशकैः ।  
 अन्येषां शिबिकान्दोलच्छत्रित्वमिह लक्ष्यते ॥२१॥

१ किमारु०, २. मुख्यार्थत्वेन, ३ काव्यं, ४ शतपानि ५. शिबिका,  
 दोलिका छत्रोन् ।

मुख्यबाधे निमित्ते च फले चारोप्यते बुधे ।  
 योऽर्थोऽभेदेन भेदेन स गौणो विदुषा मत ॥२२॥  
 सिंहो नृपतिरित्यत्र गौणोऽभेदेन समत ।  
 राजा सिंह इव प्रोक्तो भेदो गौणो बुधोत्तमै ॥२३॥  
 मुख्यार्थाल्लक्ष्यतो गौणाद्भिन्नो योऽर्थः प्रतीयते ।  
 स व्यङ्ग्यो ध्वनिरित्युक्त कलाशास्त्रविशारदं ॥२४॥  
 कौमुद वर्धयत्यत्र राजेत्युक्ते प्रतीयते ।  
 प्रजोपकारिता राज्ञ सा व्यङ्ग्य इति बुध्यताम् ॥२५॥  
 अभिधा लक्षणा गौणी व्यञ्जना च चतुर्विधा ।  
 शब्दानां शक्तिरित्युक्ता पुरातनकवीश्वरै ॥२६॥  
 अभिधाशक्तिमाश्रित्य नानार्थान् व्यञ्जयन्ति ये ।  
 शब्दास्ते नियतार्थेषु नियम्यन्ति नियामकै ॥२७॥  
 नियमाकरणे काव्येऽनिष्टार्थानां प्रतीतित ।  
 असदर्थप्रसगाख्यदोषदुष्टा कृतिर्भवेत् ॥२८॥  
 ते के नियामका ब्रूध्वमिति प्रश्ने नियामका ।  
 सयोगादय इत्युक्ता गुणशालिकवीश्वरै ॥२९॥  
 सयोगविप्रयोगौ विरोधितासाहचर्यकालाश्च ।  
 अर्थः प्रकरणं लिङ्गं शब्दान्तरसन्निधिश्च सामर्थ्यम् ॥३०॥  
 औचित्यव्यक्तिदेशाश्च गदितास्तु स्वरादयः ।  
 कविप्रयुक्तशब्दानामर्थभेदप्रकाशका ॥३१॥  
 सचक्रो हरिरित्यत्र चक्रयोगात् प्रतीयते ।  
 अचक्रो हरिरित्यत्र तद्वियोगाच्च माधव ॥ ३२॥  
 राजा कमलविरोधीत्युक्ते चन्द्रो विरोधतो ज्ञात ।  
 अर्कः कुमुदविरोधीत्युक्ते तत एव कारणाद् भानु ॥३३॥  
 जिष्णुभीमाविति प्रोक्ते साहचर्यात् परस्परम् ।  
 पार्थपार्थाग्रजौ ज्ञातौ कवितानिपुणैर्बुधै ॥३४॥

भातीन्दीवरमित्युक्ते कालोऽर्थस्य प्रकाशक ।  
 दिवसे यदि नीरेज रात्रौ चेदुत्पल स्मृतम् ॥३५॥  
 सप्ताङ्गभासुरो राजेत्यर्थो नृपतिबोधक ।  
 अर्जुन समरे पार्थज्ञान प्रकरणादभूत् ॥३६॥  
 नर कपिध्वज इति लिङ्गात् पार्थोऽवगम्यते ।  
 इन्द्र शचीश इत्यन्यशब्दाद्वासवनिश्चय ॥३७॥  
 नीलकण्ठो नरीनर्ति शक्तिर्वर्षतुंबोधिका ।  
 'अत्रास्ते नृपतिर्ज्ञातिमौचित्यात् सिंहविष्टरम् ॥३८॥  
 अब्जोऽब्ज राजतीत्युक्ते चन्द्रोऽम्भोज प्रतीयते ।  
 पुनपुसकलिङ्गाख्यव्यक्तिभ्यां कविकुञ्जरै ॥ ३९ ॥  
 गगने राजते राजा देशाच्चन्द्रो विनिश्चित ।  
 गानस्वरादिरर्थस्य गमकोऽपि न काव्ययुक् ॥ ४० ॥  
 आदिशब्देन चेष्टादिगृह्यतेऽर्थप्रकाशक ।  
 उदाहरणमेतस्य ज्ञातव्य बुद्धिशालिभि ॥ ४१ ॥  
 एव शब्दगतार्थनिश्चययुते 'धीमत्कवीन्द्रं कृते  
 काव्यव्योम्नि तिरस्कृतारिगुणतारालिप्रभे निर्मले ।  
 भो भो वीरनृसिंहरायनृपते ते सत्प्रतापो रवि  
 कुर्वन्वैरिनिकायकैरवगणम्लानि सदा वर्तताम् ॥ ४२ ॥  
 इति परमजिनेन्द्रवदनचन्द्रविनिर्गतस्याद्वादचन्द्रिकाचकीरविजय-  
 कीर्तिमुनीन्द्रचरणाङ्गचञ्चरीकविजयवर्णिविरचिते श्रीवीर-  
 नरसिंहकाभिराजवङ्गनरेन्द्रशरदिन्दुसनिभकीर्तिप्रकाशके  
 शृङ्गारार्णवचन्द्रिकानाम्नि अलकारसग्रहे काव्यगत-  
 शब्दार्थनिश्चयो नाम द्वितीय परिच्छेद ।  
 काव्यगतशब्दार्थनिश्चयो नाम द्वितीय परिच्छेद ।

१. अत्रासे नृपतिज्ञातं, २ बीवान् ।

## रसभावनिश्रयो नाम

### तृतीय. परिच्छेदः

निरवद्यवर्णगणयुतमपि काव्यं निर्मलार्थशब्दयुतम् ।  
 निर्लवणशाकमिव तन्न रोचते नीरसं सता मनसे ॥ १ ॥  
 अतः कारणतोऽस्माभिरुच्यते रसलक्षणम् ।  
 पूर्वशास्त्रानुसारेण भावभेदविशेषितम् ॥ २ ॥  
 चित्तस्य वृत्तिभेदो यः परिणामापराख्यकः ।  
 स्थिरत्वं प्राप्तवान् सोऽयं स्थायिभावो निगद्यते ॥ ३ ॥  
 रतिहामशोककोपोत्साहभयाख्यस्तथा जुगुप्साख्यः ।  
 विस्मयशमाभिघ्नः स स्थायिभावो हि नवभेदः ॥ ४ ॥  
 विभावैरनुभावैश्च मात्त्विकैर्व्यभिचारिभिः ।  
 बुध्यमानैस्तु मुव्यक्तं स्थायिभावो रसो भवेत् ॥ ५ ॥  
 एव लक्षणयुक्तोऽयं रसो नवविधः स्मृतः ।  
 शृङ्गारो हास्यनामा च करुणाख्योऽपि रौद्रकः ॥ ६ ॥  
 वीरो भयानको यश्च बीभत्सोऽद्भुत इत्यपि ।  
 शान्तनामा च ते सर्वे रसभेदा निरूपिताः ॥ ७ ॥  
 भावैश्चतुर्भिः पूर्वोक्तेर्व्यज्यमाना रतिर्यदा ।  
 तदा कवीन्द्रैः शृङ्गाररस इत्यभिधीयते ॥ ८ ॥  
 एवमन्ये स्थायिभावा भावैर्व्यक्ता रसाः स्मृताः ।  
 स्वर्णं वह्नियुतं याति रसभावः यथा भुवि ॥ ९ ॥  
 काव्येषु ते विभावाद्याः श्रूयमाणा रस नृणाम् ।  
 श्रोतृणां पोषयन्त्यत्र रसभावाथर्ववेदिनाम् ॥ १० ॥

दृश्यमाना नाटकेषु ते भावा जनयन्त्यलम् ।  
 प्रेक्षकाणां रस सर्व नाट्यशास्त्रार्थवेदिनाम् ॥ ११ ॥  
 भुज्यमानाश्च भोक्तृणां ते रस पोषयन्त्यलम् ।  
 भावयन्ति रस ये च ते भावा गदिता बुधैः ॥ १२ ॥  
 भावाश्चतुर्विधा प्रोक्ता कवितागुणशालिभिः ।  
 विभावा अनुभावाश्च सात्त्विका व्यभिचारिणः ॥ १३ ॥  
 भावयन्ति विशेषेण ये रस ते विभावका ।  
 आलम्बोद्दीपनत्वेन ते विभावा द्विधा मताः ॥ १४ ॥  
 आलम्ब्य य रसोत्पत्तिं सोऽयमालम्बनो मतः ।  
 उद्दीप्यते रसो येन स चोद्दीपनसंज्ञकः ॥ १५ ॥  
 भावका रसमुत्पन्नं चित्तस्थं भावयन्ति ये ।  
 भावेस्ते गदितास्सद्भिर्ननुभावाश्शरीरजाः ॥ १६ ॥  
 रसिकानां मनोवृत्तिं सत्त्वमित्यभिधीयते ।  
 सत्त्वसज्जिता भावा सात्त्विका परिकीर्तिता ॥ १७ ॥  
 स्वेदकम्पनरोमाञ्चलयस्तम्भविवर्णता ।  
 विकारस्वरता चाश्रु प्रणीत सात्त्विकाष्टकम् ॥ १८ ॥  
 स्थायिभावार्णवे भावा सचरन्त्यूर्मिसनिभाः ।  
 ये तेष्वनियता भावा व्यभिचार्यभिधानकाः ॥ १९ ॥  
 सशङ्खौ ग्लानिनिर्वेदौ जाड्यहर्षौ धृतिश्रमौ ।  
 दैन्याग्ध्यत्रामचिन्तेष्यामर्षेर्गर्वमदा स्मृतिः ॥ २० ॥  
 मरणं सुप्तिनिद्रावबोधव्रीडाविषादकाः ।  
 व्याध्यपस्मारचापल्यमतिमोहौत्सुक्यास्तथा ॥ २१ ॥  
 अवहित्थालस्यवेगौ तर्कोन्मादौ कवीश्वरे ।  
 एते सचारिभावा हि त्रयस्त्रिंशत्प्रकीर्तिताः ॥ २२ ॥

१ चित्तस्थं सा ज्ञयति वै ।

दृश्यत्वाद् रसभावाना नटे काल्पनिको रस ।  
 सामाजिके तात्त्विकस्तु रसो निजरसस्मृते ॥२३॥  
 भुवने रसिका लोका रसान् स्वाभाविकानलम् ।  
 भुञ्जते निजकर्मानुसारेण बहुधा सदा ॥२४॥  
 रमानामिति सर्वेषा सामग्री गदिता मया ।  
 शृङ्गाररममामग्री विशेषेण निरूप्यते ॥२५॥  
 आलम्बनविभावोऽत्र शृङ्गाराख्यरमे स्मृत ।  
 कान्ताया कामुको लोके कामुकस्य तु कामिनी ॥२६॥  
 वसन्तोद्यानकासारशुकध्वनिपिकस्वरा ।  
 शिखिताण्डवजीमूतध्वनिहमविकूजनम् ॥२७॥  
 चक्रवाकरतिक्रीडाचञ्चरीकालिगुञ्जनम् ।  
 मलयानिलमचारश्चन्द्रतापविलासनम् ॥२८॥  
 इन्द्रगोपस्य पतन वन्दनादिविलेपनम् ।  
 उद्दीपनविभावोऽत्र शृङ्गारे ज्ञायता बुधै ॥२९॥  
 अनुभावास्तु शृङ्गारे कामुकस्याङ्गसभवा ।  
 कामुकीकायजाता वा विकारा परिकीर्तिता ॥३०॥  
<sup>१</sup>अपाङ्गलोकन प्रीतिकरसूक्तिविलासनम् ।  
 भ्रूलताक्षेपण कर्णपूरोत्पलविवाहनम् ॥३१॥  
 रशनाबन्धन वामचरणाघातन स्मितम् ।  
 नीवीविसू सन नाभिजघनोरुविमर्शनम् ॥३२॥  
 आलिङ्गन कुचद्वन्द्वविमर्दनरतिक्रिये ।  
 एतेऽनुभावा कथ्यन्ते शृङ्गारे कविकुञ्जरै <sup>२</sup> ॥३३॥  
 कान्ताकामुकयोरत्र दर्शने स्पर्शनेऽथवा ।  
 सात्त्विका स्वेदरोमाञ्चवैवर्ण्यस्तम्भनादय ॥३४॥



योज्या सचारिभावाश्च शृङ्गारेऽत्र विशारदै ।  
 ग्लानिनिर्वेदनिद्रावबोधशङ्कामदादय ॥३५॥  
 सामग्रीमबलम्ब्येमा जात शृङ्गारनामक ।  
 सभोगो विप्रलम्भश्च द्विविधो रस उच्यते ॥३६॥  
 कान्ताकामुकयो सूक्तिविलासस्पर्शनादिभि ।  
 मिथ सबन्धरूपोऽत्र सभोग कथ्यते बुधै ॥ ३७ ॥

अस्योदाहरणम्—

जातीकन्दुकताडन सरसहु कारस्वरोल्लासन  
 काञ्चीभूषणबन्धन कृतककोपाविद्धकेशग्रह ।  
 भ्रूविक्षेपणवर्जन कपटरम्याक्रोशन शासन  
 श्रीरायक्षितिपस्य मोहनकर कान्ताकृत चेष्टितम् ॥ ३८ ॥  
 प्रच्छन्तो वा प्रकाशो वा सभोगो द्विविधो मत ।  
 प्रकाशो गणिकास्त्रीणामन्यस्त्रीणा परो भवेत् ॥ ३९ ॥  
 पूर्वानुरागो मानात्मा प्रवास करुणाभिध ।  
 चतुर्धा विप्रलम्भ स्याद् वक्ष्यते तन्निदर्शनम् ॥ ४० ॥  
 सभोगविप्रलम्भौ तौ कान्ताकामुकयोरिह ।  
 सयुक्तायुक्तयोर्वाच्यौ यथासख्य बुधोत्तमै ॥ ४१ ॥  
 कान्ताया कामुकस्यापि रत्युत्कर्षेण भाविता ।  
 अवस्था दश वर्तन्ते तासामुद्देशलक्षणे ॥ ४२ ॥  
 नयनप्रीति सक्ति मनस सकल्पजागरौ तनुता ।  
 विषयद्वेषो लज्जाविनाशन मोहमूच्छने मरणम् ॥ ४३ ॥  
 रमणी रमणो यत्र रमणी रमण भृशम् ।  
 द्रष्टुमिच्छति सा प्रोक्ता चक्षु प्रीतिर्दशा बुधै ॥ ४४ ॥  
 कादम्बनाथ रमणी रतिनाथवश्या  
 सौधाग्रवर्तिमणिनिर्मितविष्टरस्था ।

बाह्यालिभूमिगतजातितुरङ्गमाया-

रूढ भवन्तमतिचारु विलोकते स्म ॥ ४५ ॥

रमण्या रमणस्यापि यत्र चिन्ता पुनः पुनः ।

प्रतिकृत्यादिना तेन सा मनः सक्तिरुच्यते ॥ ४६ ॥

कादम्बक्षितिनाथ कामवशगाराम गता कामिनी

दृष्ट्वा पल्लवमञ्जरी मरसिजं नीलोत्पल मल्लिकाम् ।

भृङ्गी कोमलचारुकीरवचन सत्कोकिलानां स्वर

त्वा पुष्पास्त्रसम मुहुर्मुहुरल सचिन्त्य लीनाभवत् ॥ ४७ ॥

मनोरथयुतस्वान्ते कान्ताया कामुकस्य वा ।

प्राप्तिसकल्पन यत्र स सकल्पो मतः सताम् ॥ ४८ ॥

कादम्बनाथमदन निजचित्तगेहे

कृत्वा मनोजधरणीश्वरराज्यलक्ष्मी ।

आलिङ्गन मधुरचुम्बनमङ्घ्रिघात

सकल्प्य भावरतिमेति वियुक्तकान्ता ॥ ४९ ॥

यत्र कान्तस्य कान्ताया अलाभे तस्य चिन्तनम् ।

तस्या वा चिन्तनं नित्यं स जागर इति स्मृतः ॥ ५० ॥

कादम्बक्षितिनायकस्य विरहे तच्चिन्तया नायिका

सयुक्ता दरनिद्रयापि रहिता चन्द्रातपे पीडिता ।

कीरोक्त्या कलकण्ठमोहनरवैर्भृङ्गीकदम्बस्वनै-

रुद्याने शिखिना विलासघटनैर्जागति मोमुह्यते ॥ ५१ ॥

पत्युर्वा नायिकाया वा प्राप्त्यभावात्कृशीकृता ।

यत्र ज्वरेण कामस्य तनुः स्यात्तनुता मता ॥ ५२ ॥

आयल्लके नृपतिकुञ्जररायबङ्ग

कामज्वरेण कृशता मृगलोचनागात् ।

चान्द्री कलेव रमणी तव सा विभाति  
 नीरेजनालगततन्तुरिवाथवालम् ॥ ५३ ॥  
 यत्र न क्षमते स्त्री वा पतिर्वा कामवर्धनम् ।  
 भाव न रोचते ताभ्या विषयद्वेषक स हि ॥ ५४ ॥  
 कामाग्निप्रशमार्थमालिनिकरैरानीयमान सती  
 चूताशोकलसत्प्रवालनिचय दृष्ट्वा भय गच्छति ।  
 बुद्ध्या मन्मथबाणजालमिति सा चान्द्री मरीचि मनो-  
 भ्रान्त्याकायजमल्लिकाशर इति श्रीरायपुष्पायुध ॥ ५५ ॥  
 अदृष्ट्वा गौरव यत्र मान त्यजति नायिका ।  
 नायको वा त्रपानाश कथितो रसिके म च ॥ ५६ ॥  
 मन्दानिलेन मकरन्दरसेन मत्त-  
 भृङ्गीस्वरेण शुककोकिलनि स्वनेन ।  
 चन्द्रातपेन शिखिताण्डवडम्बरेण  
 त्वा यातुमिच्छति मनी विमदा नृपेन्द्र ॥ ५७ ॥  
 यत्र पत्यु स्त्रिया वा वा चित्तोन्मादो भ्रमादसौ ।  
 मोह इत्युच्यते सद्भिः कलाशास्त्रविशारदैः ॥ ५८ ॥  
 चन्द्रातप पिबति चुम्बति पल्लवालि  
 चन्द्रोदये निजपदेन निजाकृतिं सा ।  
 सताडयत्युरुगुण सहकारभूज  
 श्लिष्यत्यहो तव सती भ्रमतो नरेन्द्र ॥ ५९ ॥  
 यत्र कामस्य सतापात् कामिनी रमणोऽथवा ।  
 न जानाति कमप्यर्थं सा मूर्च्छा गदिता बुधैः ॥ ६० ॥  
 पुष्पास्त्रबाणपतन क्षमते न सोढु  
 या सा सती तव वियोगवशात् प्रयान्ती ।  
 मूर्च्छा पटे लिखितमन्मथकामिनीव  
 भात्यद्य ता मदनराज नृपेन्द्र रक्ष ॥ ६१ ॥

म्रियते यत्र रमणी रमणो वाप्यलाभत ।  
 द्वयोरन्यतरस्यात्र मरण तत् प्रकीर्तितम् ॥ ६२ ॥  
 कादम्बनाथ तव पुण्यफल किमत्र  
 तस्या पुरातनसुकर्मफल किमत्र ।  
 कामस्य बाणनिवहो दशमीमवस्था  
 ता नायिका नयति नो खलु रक्ष रक्ष ॥ ६३ ॥  
 ज्ञातभावचतुष्केण नीयते व्यक्तरूपताम् ।  
 हासाख्यस्थायिभावो यो हाम्यनामा रसो मत ॥ ६४ ॥  
 आलम्बनविभावोऽत्र रसे हास्ये मतो बुधै ।  
 विदूषकजनो निन्द्यपदार्थनिवहोऽथवा ॥ ६५ ॥  
 विदूषकस्य भाषा वा तदाकारस्य विक्रिया ।  
 उद्दीपनविभावोऽत्र निन्द्यदोषगणोऽथवा ॥ ६६ ॥  
 चक्षुर्विकाशो देहस्य चलनादी रसाच्च ये ।  
 रमभोक्तृनरे प्रोक्ता अनुभावा विशारदै ॥ ६७ ॥  
 विस्वगत्वाश्रुवैवर्ण्यस्वेदादि सात्त्विको मत ।  
 औत्सुक्यगर्हचापल्यश्रमा सचारिणो मता ॥ ६८ ॥  
 उत्तमो मध्यमो लोके जघन्यस्त्रिविधो मत ।  
 हास्यनामरसस्तत्र स्मित हसितमुत्तमे ॥ ६९ ॥  
 ततो विहमित मध्ये तथोपहृमिन मतम् ।  
 'अन्त्येऽवहसित चात्र रसेऽर्तिहसित मतम् ॥ ७० ॥  
 विकमितगण्ड त्वीषल्लक्ष्यदन्त मृदुस्वनम् ।  
 शिर कम्प साश्रुकम्प विक्षिप्ताशेषदेहकम् ॥ ७१ ॥  
 एतेषा लक्षण प्रोक्त यथामख्यमित परम् ।  
 उदाहरणमेतस्य रसस्य प्रोच्यते मया ॥ ७२ ॥

१. रसादये । २. अन्त्येन हसित ।

श्रीरायक्षितिनायकस्य समरे ता वैजयन्ती परे  
 दृष्ट्वा भीतिवशात् पतन्ति कतिचिद्धावन्ति मूर्च्छन्ति च ।  
 ता दृष्ट्वा स्मयते हसन्ति विहसन्त्यन्ये परे चेतरे  
 केचिच्चोपहसन्ति चावहसन कुर्वन्ति हास परम् ॥ ७३ ॥  
 शोकाख्यस्थायिभावो यो व्यक्तो भावचतुष्कत ।  
 करुणाख्यरस सोऽत्र प्रोच्यते कविपुगवै ॥ ७४ ॥  
 इष्टानिष्टविनाशाप्तिजातत्वात् करुणो द्विधा ।  
 नष्ट वानिष्टयुक्त वा वस्त्वालम्बनमुच्यते ॥ ७५ ॥  
 स्वजनाक्रन्दन बन्धुदर्शनादि निरूप्यते ।  
 उद्दीपनोऽनुभावस्तु नि श्वासरुदितादिक ॥ ७६ ॥  
 विस्वरत्वाश्रुपौतादि सात्त्विको व्यभिचारिण ।  
 विषादबाध्यदीनत्वमृतिचिन्तादय स्मृता ॥ ७७ ॥  
 कादम्बक्षितिपेन भीकरमहासग्रामभूमौ हत  
 श्रुत्वा वैरिगण तदीयवनिता शोकाब्धिपार गता ।  
 हारालम्बिमनोज्ञमौक्तिकगण नीरेजरागव्रज  
 रायक्षमापतिकीर्तिविक्रमसम मुञ्चन्ति दिङ्मण्डले ॥ ७८ ॥  
 रायक्षमापतिना भयकरमहायुद्धे विपक्षव्रज  
 जित्वानीय सशृङ्खल जडमिम कारागृहे बन्धितम् ।  
 श्रुत्वा तद्वनिता परा शुचमिता केशार्वालि श्यामला  
 श्रीरायस्य कृपाणवल्लिसदृशी मुञ्चन्ति मूर्च्छन्ति च ॥ ७९ ॥  
 क्रोधाख्यस्थायिभावोऽय व्यक्तो भावचतुष्टयात् ।  
 रौद्र सोऽपि रसो द्वेधा मात्सर्यद्वेषजन्मत ॥ ८० ॥  
 आलम्बनविभावोऽस्य मात्सर्यद्वेषगोचर ।  
 उद्दीपनस्तु तद्भाषा तच्चेष्टादिक उच्यते ॥ ८१ ॥

अनुभावस्तु विक्षेपो भ्रुवा लोचनरक्तता ।  
 ऊरुहस्तोष्ठचलनप्रमुख पङ्क्तिर्कीर्तित ॥ ८२ ॥  
 सात्त्विक स्वेदरोमाञ्चद्विस्वरत्वादिको मत ।  
 सचारी द्वेषगर्वोद्यभावोऽपि प्रणिगद्यते ॥ ८३ ॥  
 श्रीरायश्चमापशक्ति पटनग्नमरे भूरिदोर्दण्डचार्वी  
 ज्ञात्वा वैरिक्षितीशा अपि निजहृदयोपात्तमात्सर्यदोषा ।  
 अस्माक साम्यभाजो नहि नहि भुवने कर्णपार्थादयो वा  
 मूले तिष्ठन्तु के वा समरधुरमहा गर्वमेन वदन्ति ॥ ८४ ॥  
 घोरार्थायुद्धरङ्गे समरदुर्गमह वैरिभूपालवर्ग  
 दृष्ट्वा कादम्बनाथा दिशि दिशि विकिरन् कोपवह्निस्फुलिङ्गम् ।  
 कल्पान्तद्राद्धदेव प्रकटितमहिमा शत्रुभूमिग्वराणा  
 महाग साधु कृत्वा विलसति भुवने युद्धरङ्गत्रिणेत्र ॥ ८५ ॥  
 उत्साहस्थायिभावोऽत्र व्यक्तो वीररमो मत ।  
 भावश्चतुर्भि रस त्रिविध एनरुच्यते ॥ ८६ ॥  
 दानवीरदयावीरयुद्धवीरप्रकारभाक् ।  
 सत्पात्र दीनपुरुषो वैरिलोको यथाक्रमम् ॥ ८७ ॥  
 आलम्बनविभावस्तूहीपन क्रमतो मत ।  
 दानस्तवनदीनोक्तिरयुद्धभेरिस्वरादिक ॥ ८८ ॥  
 अनुभाव क्रमाच्चिन्तप्रमत्ति शस्त्रमग्रह ।  
 सात्त्विको रोमहर्षादि सचारी प्रोच्यतऽधुना ॥ ८९ ॥  
 गर्वहर्षमहाक्रावदृत्यादिर्वह्निभेदभाक् ।  
 बुध्यता कविताप्रौढगुणभागिभ कवीश्वरे ॥ ९० ॥  
 यद्दानाद्धनदा भवन्ति कतिचित् केचिच्च कर्णा परे  
 जायन्त मुग्धनायकास्त्रिभुवन व्याप्नोति कीर्ति परा ।  
 कल्पानोकहकर्णरामनृपतीन् हित्वा यशस्कामिनी  
 य भूप श्रयते स रायनृपति श्रीदानवीरो भुवि ॥ ९१ ॥

दीनानाथजनान् विलोक्य हृदये दुःखाग्निदग्धान् बहून्  
 कारुण्यामृतभासुर परिलसद्दानेन पीनेन वै ।  
 रक्ष रक्षमतीव याति न हि यस्तृप्तिं परा चेत्तसि  
 श्रीरायक्षितिनायक स भुवने कारुण्यवीरो भवेत् ॥ ९२ ॥  
 य दृष्ट्वा प्रलयान्तभैरवमिम दोर्दण्डचण्ड नृप  
 वैरक्षमापगणा भयज्वरमिता धावन्ति मूर्च्छन्ति च ।  
 नीर यान्ति तरु श्रयन्ति तृणक चुम्बन्ति वल्मोकक  
 चारोहन्ति स रायबङ्गनृपति सग्रामवीरो भुवि ॥ ९३ ॥  
 भयाख्यस्थायिभावोऽत्र व्यक्तो भावचतुष्टयान् ।  
 भयानकरसस्तस्यालम्बभाव प्ररूपित ॥ ९४ ॥  
 निर्घातिव्याघ्रसर्पारिभल्लूकेभहरिव्रज ।  
 उद्दीपनो घनस्तस्य गर्जनादि प्रकीर्तित ॥ ९५ ॥  
 अनुभावोऽत्र वैवर्ण्यस्वेदकम्पादिको मत ।  
 स एव सात्त्विको भाव सचारी तु प्रकीर्त्यते ॥ ९६ ॥  
 सन्नमत्राममोहोरुदीनभावादिभेदभाक् ।  
 एते चतुर्विधा भावा योज्या काव्यविशारदै ॥ ९७ ॥  
 युद्धे रायनरेन्द्रहस्तकलित खड्गोरुकालोरग  
 दृष्ट्वा भीतिवशाद्विपक्षधरणीनाया प्रकम्प गता ।  
 धावन्तो गिरिगङ्गारास्थितमहाघोराब्धकार श्रिता-  
 स्तास्तत्रापि भय नयन्ति वनिता दिव्याङ्गसत्कान्तय ॥ ९८ ॥  
 जुगुप्सास्थायिभावोऽय व्यक्तो बीभत्सनामक ।  
 रम्भा जुगुप्स्यवैराग्यहेतुजन्मा द्विधा मत ॥ ९९ ॥  
 आलम्बनविभावोऽत्र जुगुप्स्योऽर्थो मन प्रिय ।  
 उद्दीपनस्तु दुर्गन्धदुष्टदोषादिको मत ॥ १०० ॥

१ उद्दीपन हनं ।

अनुभावोऽस्य वक्त्रस्य नासिकायाश्च कूणनम् ।  
 वेगप्रभृतिक चोक्त पुलकादिस्तु मात्त्विक ॥ १०१ ॥  
 निर्वेगोद्वेगकोपादि सचारी परिकीर्त्यते ।  
 इति भावचतुष्क तु योज्य सत्कविकुञ्जरै ॥ १०२ ॥  
 श्रीरायक्षितिपेन घोरममरे जित्वा विनि कासिला  
 देगाद् वैरिनृपा निजैष्टरमणीयुक्ताश्चरन्तोऽनिशम् ।  
 सर्वाङ्गव्रणपूयजर्जरतकाष्टाङ्गा जुगुप्स्या जना-  
 वर्तन्तेऽ गतिका दरिद्रमनुजा भिक्षाटने तत्परा ॥ १०३ ॥  
 श्रीरायवगभूपतिनिर्जितगात्रवगणस्य कष्ट वै ।  
 दृष्टवते लोकेऽसौ जनाय कि रोचते मपत् ॥ १०४ ॥  
 विम्मयस्थायिभावस्तु भावैर्व्यक्तोऽद्भुतो मन ।  
 जनचेतश्चमत्कारि वस्त्वालम्बनमुच्यते ॥ १०५ ॥  
 अहोवचनमित्यादिर्भावस्तूहीपनो मत ।  
 अनुभावस्तु दृष्ट्यास्यकपोलस्फुरणादिक ॥ १०६ ॥  
 रोमाञ्चस्वेदभावादि मात्त्विक परिकीर्तित ।  
 हर्षसभ्रमभावादि सचारी तु निगद्यते ॥ १०७ ॥  
 श्रीरायक्षितिपस्य राजसदन तत्राद्भुता सत्सभा  
 तत्र स्थापितविष्टर रुचिकर तत्र स्थित भूपनिम् ।  
 तद्देह तदनूनभूषणगण तत्कान्तिजाल पर  
 तद्व्याप्त जनता विलोक्य परमा चित्रीयते सनतम् ॥ १०८ ॥  
 शमाख्यम्यायिभावोऽयं विभावादिचतुष्टयात् ।  
 व्यक्त शान्तरम प्रोक्तो गुणशालिकवीरवरे ॥ १०९ ॥  
 आलम्बनविभावस्तु पञ्चाना परमेष्ठिनाम् ।  
 स्वरूप निजरूप वा निश्चयव्यवहारत ॥ ११० ॥  
 उद्दीपनास्तु स्याद्वादवेदिसभापणादय ।  
 सर्वत्र समभावादिरनुभाव प्रकीर्तित ॥ १११ ॥



पुलकस्तम्भभावादि सार्विकं परिकीर्तितं ।  
 सचारिभावो निर्वेदधृतिमत्यादिको मतः ॥ ११२ ॥  
 श्रीरायक्षितिनाथपालितमहादेशे कवीन्द्रस्तुते  
 योगीन्द्रा जिनतत्त्वबोधमहिता सम्यक्त्वरत्नाकरा ।  
 रागद्वेषविमुक्तशान्तमनसश्चारित्रपूज्याङ्गका-  
 ध्यायन्त परमात्मतत्त्वममल श्राम्यन्ति मौख्यास्पदम् ॥ ११३ ॥  
 रसलक्षणमत्रोक्त रसभेदोऽपि निश्चितः ।  
 स्थायिभावादिसामग्री रसाना कथिता मया ॥ ११४ ॥  
 इतः परं रसानां तु वर्णस्तदधिदेवता ।  
 कार्यकारणभावश्च विरोधोऽप्यविरोधिता ॥ ११५ ॥  
 निरूप्यते जगत्ख्यात कादम्बाम्बुधिचन्द्रिणः ।  
 शृणु राय महीनाथ काव्यगोष्ठिविशारद ॥ ११६ ॥  
 स्यादिन्दीवरवर्णस्तु रसशृङ्गारनायकः ।  
 तस्याधिदेवता लोके वासुदेवः प्रकीर्त्यते ॥ ११७ ॥  
 सुधाधवलवर्णः स्यादरसो हास्याभिधानकः ।  
 लोकेऽधिदेवता तस्य विघ्नराजो निरूपितः ॥ ११८ ॥  
 कषायवर्णता याति करुणाख्यो रसो भुवि ।  
 तस्याधिदेवता प्रोक्ता श्राद्धदेवः कवीश्वरः ॥ ११९ ॥  
 जपाकुसुमवद् रक्तवर्णो रौद्रो रसो मतः ।  
 तस्याधिदेवता लोके रुद्रनामा निरूप्यते ॥ १२० ॥  
 गौरवर्णेन बाभर्ति लोके वीररसोऽनिशम् ।  
 तस्याधिदेवता लोके शतमन्युः प्ररूप्यते ॥ १२१ ॥  
 भयानकरसोऽप्यत्र धूम्रवर्णः प्रकथ्यते ।  
 तस्याधिदेवता लोके महाकालोऽनुमन्यते ॥ १२२ ॥  
 रसो बीभत्सनामा च नीलजीमूतसन्निभः ।  
 तस्याधिदेवता लोके नन्दिनामा निबुध्यताम् ॥ १२३ ॥

अद्भुताख्यरसो लोके हेमवर्णेन राजते ।  
 तस्याधिदेवता लोके विघाता प्रणिगद्यते ॥१२४॥  
 शान्तनामरसो लोके शुद्धस्फटिकवर्णभाक् ।  
 तस्याधिदेवता लोके परब्रह्म प्रकाशयते ॥१२५॥  
 शृङ्गाराज्जन्म हास्यम्य करुणो रौद्रजन्मभाक् ।  
 अद्भुतो जायते वीगद् बीभत्साच्च भयानक ॥१२६॥  
 इतरम्माद्रमाज्जन्म नास्ति शान्तस्य शान्तता ।  
 इतरो वा रसो लोके जायते न कदाचन ॥१२७॥  
 शृङ्गारस्य विरोधी हि बीभत्स कथ्यते बुधै ।  
 भयानकविरोधी तु लोके वीररसो भवेत् ॥१२८॥  
 अद्भुतो रौद्रवंरी तु करुणो हास्यबाधक ।  
 शान्तस्य केनचिन्नास्ति मित्रत्व वा विरोधिता ॥१२९॥  
 नानाभावमनोज्ञभावविलसत्तारावलीराजिते  
 नानारम्यसौघचारुतरसज्ज्योत्स्नावलीभासिते ।  
 सत्काव्ये गगने नृसिहनृपते कादम्बवशाम्बुधे  
 भो भो धीर भवान् मनोज्ञ<sup>१</sup> विलसत्कीर्तिश्च ते वर्धतात् ॥१३०॥

इति रसभावनिश्चयनामा तृतीय परिच्छेद ।

१ विवरसो । २ <sup>०</sup>विलसत्कीर्ती च हृदायता ।

## नायकभेदनिश्चयो नाम

### चतुर्थः परिच्छेद

गुण्यभावे गुणो नास्ति यद्वन्नेतुरसभवे ।  
 रमभावा जगत्यत्र सभवन्ति कदापि न ॥१॥  
 यतस्तनो नायकस्य नायिकायाश्च लक्षणम् ।  
 तद्भेदाश्च निरूप्यन्ते तन्निश्चयफलार्थिनाम् ॥२॥  
 जनानुराग प्रियवादिभावो वाग्मित्वशौचे विनय स्मृतिश्च ।  
 कुलीनतास्थैर्यदृढत्वमाना माधुर्यशौर्ये नवयौवन च ॥३॥  
 उत्साहो दक्षता बुद्धिस्त्यागस्तेज कला मति ।  
 धर्मशास्त्रार्थकारित्व प्रज्ञा नेतृगुणा इमे ॥४॥  
 एतद्गुणविशिष्टोऽयं नायक कथ्यते बुधै ।  
 स नायक पुन प्रोक्तश्चातुर्विध्ययुतो भवेत् ॥५॥  
 धीरोदात्तस्तथा धीरलालितो धीरशान्तक ।  
 धीरोद्धत इति ख्याताश्चत्वारो नायका भुवि ॥६॥  
 क्षमासामर्थ्यगाम्भीर्यदयागुणविराजित ।  
 आत्मश्लाघामानशून्यो धीरोदात्तो मत सताम् ॥७॥  
 राजसर्वज्ञकल्पोऽयं रायबद्धमहीपति ।  
 महासमुद्रदेशीयो भूमिदेश्यो विराजते ॥८॥  
 भोगे कलाया लोलो यश्चिन्तातीतमुखोदय ।  
 मन्त्र्यर्पितात्मसिद्धिश्च स्याद्धीरलालितो मृदु ॥९॥  
 श्रीरायबद्धरमणो निजकामिनीना-  
 मालोकन दृढतर परिरम्भण च ।

वाणीविलासमधरामृतचारूपान्

कुर्वन् महारुचिरसौधतले सदास्ते ॥१०॥

विवेकशौचसौभाग्यसुप्रसन्नत्वभूषित ।

विलासरसिको धीरशान्त इत्युच्यते बुधै ॥११॥

कादम्बनाथ परिपालितरम्यराज्ये

केचिद् विलासरसिकास्सुभगा प्रमत्ता ।

नित्य विवेकगुणभासुरमूर्तयस्ते

स्वेष्टाङ्गनासु कमनीयतरा रमन्ते ॥१२॥

मायामात्सर्यचण्डत्वचलचित्तसमन्वित ।

आत्मस्तुतिपरो मानी धीरोद्धत इतीरित ॥१३॥

सप्ताम्भोनिधिपानक कुलगिरिवातस्य सचालन

दिग्दन्तिव्रजकम्पन गगनतारानीकनिष्फालनम् ।

एषामात्मविलासन प्रकटित तेऽमी वय दुर्दमा

इत्येव वदतो रिपूञ्जयति तान् श्रीरायभूमीश्वर ॥१४॥

चत्वारो नायका एते रसेषु नवसु क्रमात् ।

अवस्थाभेदत सर्वे वर्तन्ते गुणशालिन ॥१५॥

एषा चतुर्णा नेतृणा धीरोदात्तादिभेदिनाम् ।

शृङ्गाराख्यारसे प्रोक्ता प्रत्येक चतुरात्मता ॥१६॥

अनुकूल शठो धृष्टो दक्षिणो नायका मता ।

शृङ्गागख्यरसे सिद्धिश्चत्वारो गुणराजिना ॥१७॥

एकस्या नायिकाया य सक्तचित्तो न बुध्यते ।

अन्यस्त्र्यसगम मोऽत्रानुकूलो नायको मत ॥१८॥

विचकिलकुसुमाना सौगमे मग्नभृङ्ग

परकुसुमपराग याति नेवात्र तद्वत् ।

सुरतमधुरकेल्यां नायिकाया प्रसक्तो  
 न हि परवर्तितानां संगम याति राय ॥१९॥  
 एकस्या रागशून्योऽपि सराग इव भासते ।  
 सलापादिविशेषेण य सोऽपि शठ उच्यते ॥२०॥  
 कादम्बनाथ वचनं सुदयासम ते  
 ज्योत्स्नासमानमवलोकनचैष्टित च ।  
 तन्मल्लिकादिवरदानमिदं च चित्त  
 कार्यं न दृष्टमिति वक्ति वधू शठ त्वाम् ॥२१॥  
 दृष्ट्वान्यकामिनीसङ्गचिह्नोऽपि वितथ वदेत् ।  
 वैयात्येन स धृष्ट स्यान्नायक कथितो बुधै ॥२२॥  
 नमनवचनदम्भो मास्तु मास्तु त्वदीय  
 कपटमिदमनेक दृष्टमत्यन्तदृष्टम् ।  
 तव सकलशरीरेऽन्याङ्गनासगचिह्न  
 सर सर वरकान्ता रायबङ्गं ब्रवीति ॥२३॥  
 एकाङ्गनालोलचित्तं समभावेन वर्तते ।  
 अन्याङ्गनासु स प्रोक्तो दक्षिणो नायको बुधै ॥२४॥  
 \* त्रुटितं दुर्बोधं च पद्यस्यास्य चरणद्वयं यथा पादटिप्पण्या लिखितम्  
 कर्पूराणि वितीर्य चारुमणीवृन्दाय दूतीजना  
 श्रीरायो नृपकुञ्जरं प्रहितवान् साहित्यरत्नाकर ॥२५॥  
 इदमपि दक्षिणनायकनिदर्शनम्—  
 नीरेज वरमल्लिका किसलय चूतस्य नीलोत्पल  
 कङ्कलस्थितपल्लव निजमहामाहात्म्यससूचकम् ।

१ चित्र, २ रोरगापरमादिवर्णविलम्बनामानि \* समुदयकान्ताममहा-  
 त्कस्तूरिरागाक्षर ।

दत्वालीजनपञ्चकस्य हि करे कान्ताजनेभ्यो मुदा

श्रीरायो वरदक्षिण प्रहिनवान् शृङ्गारदुग्धाम्बुधि ॥२६॥

धीरोदात्तादिनेतृणा शृङ्गारे षोडशात्मनाम् ।

उत्तमादिविभेदेन प्रत्येक त्रिविधात्मता ॥२७॥

शृङ्गारान्यरमे नेतृभेदा लोके निरूपिता ।

अष्टसम्योत्तराश्चत्वारिंशत्सख्या कवीश्वरं ॥२८॥

एतेषा नायकानां तु सहाया उन्नायका ।

विदूषक पीठमर्दो विटो नागरिको मता ॥२९॥

नायकस्य प्रसंगे च नानाहासकरो मतः ।

विदूषक मता लोकव्यवहागदिविच य ॥३०॥

नायकोक्तेषु कार्येषु पटुर्नायकमदगुणात् ।

किञ्चिन्मन्युनगुणं प्रोक्तं पीठमर्दो बुधोत्तमै ॥ ३१ ॥

नायकानां चित्रवृत्तेरानुकूल्यपरो विटः ।

नानाकलाप्रौढियुक्तो मतो नागरिको बुधैः ॥ ३२ ॥

लुब्धाधीरोद्धता ये च स्तब्धा पापपरायणाः ।

ते पुनर्नायिकाभासा पुरुषा प्रतिनायकाः ॥ ३३ ॥

पूर्वोक्तानां नायकानां योवने तु गुणाष्टकम् ।

मत्त्वसजातमित्युक्त्वा मधुना तन्निरूप्यते ॥ ३४ ॥

तेजो विलामो माधुर्यं शोभा स्थाय्यं गभीरता ।

औदार्यं ललितं चेति गुणाष्टकमिति स्मृतम् ॥ ३५ ॥

प्राणाभावेऽपि पुरुषो धिक्कारादिपराभवम् ।

क्षमते जानु नो यत्तत्तेजः प्रोक्तं विशारदं ॥ ३६ ॥

१ प्रसङ्गे ह, २ व्यवहारादि विषय, ३ लुब्धादिरोद्धता

ए च स्तब्धा, ४ तेषु नर्नायिकाभासाः ।

सधैर्यं गमनं दृष्टिं सधैर्यां स्मितभाषणम् ।  
 विलासाख्यगुणं प्रोक्तं गुणोद्भासिकवीश्वरै ॥ ३७ ॥  
 महत्यपि च सक्षोभे सूक्ष्मा चर्चां करोति यत् ।  
 तन्माधुर्यं गुणं पुमां बुध्यतां बुधमत्तमै ॥ ३७ ॥  
 शोभायां दक्षतां शौर्यं स्पर्धां नीचैर्गुणाधिकैः ।  
 उद्योगाच्चलनाभावस्थिरत्वं विघ्नकोटिभिः ॥ ३९ ॥  
 यत्प्रभाववशात् पुंसि विकृतिर्न कदाचन ।  
 तद्गाम्भीर्यं सतामिष्टजगत्त्रयमनोहरम् ॥ ४० ॥  
 यत्प्राणानपि तद्वापि प्रियोक्त्या सज्जनानलम् ।  
 सत्करोति तदौदार्यं लोकोत्तरगुणो मतम् ॥ ४१ ॥  
 शृङ्गाराकृतिचेष्टां तु सहजां कोमलां बुधैः ।  
 ललिताख्यगुणो लोके कथ्यते गुणशालिभिः ॥ ४२ ॥  
 लक्षणं नायकानां हि प्रतिपाद्याधुना पुनः ।  
 नायिकालक्षणं तासां भेदोऽपि च निरूप्यते ॥ ४३ ॥  
 सामान्यनायकप्रोक्तविनयादिगुणान्विता ।  
 नारी तु नायिका प्रोक्ता मार्पि नारी चतुर्विधा ॥ ४४ ॥  
 स्वकीया परकीयाप्यनूढा साधारणा स्मृता ।  
 अनूढा परकीयैव इत्येकेषां मते त्रिधा ॥ ४५ ॥  
 धर्मार्थकामयुक्तानां स्वकीया नायिका नृणाम् ।  
 अन्यास्तु नायिका लोके मता केवलकामिनाम् ॥ ४६ ॥  
 त्रिवर्णनायकेनेय देवतागुरुमाक्षिका ।  
 उपात्ता नायिका स्वीया सदाचारक्षमायुता ॥ ४७ ॥  
 शीलार्जवधैर्यशौर्यलज्जायुक्ता पतिव्रता ।  
 त्रिवर्गसाधिका लोके स्वकीया ललनोत्तमा ॥ ४८ ॥

१. त्रिवर्ति° । २. शीलार्जवव्रतितरा शौर्य° ।

कादम्बेश्वररायदिचित्तो (?) रूपधाकरे  
 हसी वीरनृसिहरायकृतसद्धर्मम्बुधे कौमुदी ।  
 राज्ञी पट्टकृताभिषेकमहिता कन्दर्पकान्तोपमा  
 कान्ता शीलवती सती मधुरवाक् श्यामासमा राजते ॥४९॥  
 अनुरागवता केनचित् पुमा स्वीकृता तु या ।  
 स्वयमप्यनुरक्ता च सानूढा नायिका मता ॥ ५० ॥  
 यथा दुष्यन्तनृपतेर्नायिका सु शकुन्तला ।  
 तथा लोकानुसारेण सानूढा परिकीर्तिता ॥ ५१ ॥  
 परकीयाप्यनूढेव ज्ञातव्या विद्यते नयो ।  
 ईषद्भेद स्वय रक्तानूढा नायकमिच्छति ॥ ५२ ॥  
 परकीया मखीवाचा याति नायकसन्निधिम् ।  
 इति केचिद्वदन्त्येके न हि भेदस्तयोरिति ॥ ५३ ॥

तद्यथा—

परेण परिणीता च परकीया मता पुन ।  
 अनूढा कन्यका चापि परकीया प्रकीर्तिता ॥ ५४ ॥  
 परेण परिणीता तु नास्ति मुख्यरसे क्वचित् ।  
 अनूढा कन्यका प्रोक्ता गौणमुख्यरसे यथा ॥ ५५ ॥  
 परपरिणीता नायिका मुख्यरसे उदाहर्तुमयोग्या । अनूढा  
 कन्यका तु गौणमुख्ये च रसे उदाहर्तु योग्येत्यर्थ ।  
 मनसिजनृपरूप रायबङ्ग सुधाब्धि  
 तदमलगुणराश्याकर्णनाद् राजकन्या ।  
 मदनकदनबाणे पीडिता कामयन्ते  
 नुतरतिसमरूपा दिव्यलावण्यभाज ॥ ५६ ॥

१ काय ममा राजते । २ सनिवाचा ।



कलाप्रौढियुतम सैयंराजिता दम्भपण्डिता ।

वेश्या साधारणा प्रोक्ता नायिका विदुषा वरे ॥ ५७ ॥

दातैव नायकस्तस्या न हि कश्चित् परो भुवि ।

रक्तेव सदने पुसि निर्धन वजयेन्नरम् ॥ ५८ ॥

कादम्बनाथनृप चारुमहासमृद्ध-

वेश्याजना रतिसमानमनोज्ञरूपा ।

कामैन्द्रजालिककृताद्भुतमोहविद्या-

कल्पा विभान्ति कुसुमास्त्रै शरौघदेश्या ॥ ५९ ॥

स्वकीया नायिका मुग्धा मध्या लोके तथा मता ।

प्रगल्भेति त्रिधा सिद्धस्तासा लक्षणमुच्यते ॥ ६० ॥

नवीनयौवना नारी नवमन्मथविक्रिया ।

वक्रा सुरतलीलाया मुग्धा किंचिद् रुषा युता ॥ ६१ ॥

आस्य नापि ददाति चुम्बनविधौ स्वाङ्ग निजालिङ्गने

नो धत्ते नवमन्मथग्रहयुता लज्जाभरात् कुप्यति ।

क्षेत्रारम्भसमानयौवनयुता कन्या नवोढा सती

रायक्षमापतिनायकस्य जनयत्युल्लासन चेतसि ॥ ६२ ॥

उत्पन्नयौवनोद्भूतकामा मध्या च नायिका ।

रतिक्रियापरवशा न जानाति किमप्यसौ ॥ ६३ ॥

चुम्बन्त परिरम्भण दृढतर कुर्वन्तमङ्गोद्भव

श्रीराय निजनायक परमसतोष नयन्ती सती ।

शृङ्गाराम्बुधिकौमुदी रतिमुखाम्भोधौ निमग्ना पर

नो जानाति सुखातिरेकवशगा केलि<sup>३</sup> परा कामपि ॥ ६४ ॥

अत्यन्तयौवनात्यन्तकामा नायकवक्षसि ।

लीनेव सुरतारम्भे प्रगल्भा पारतन्त्र्यभाक् ॥ ६५ ॥

१. महासवेश्याजनारति । २. शवाघ । ३. केशि ।

श्लिष्यन्त स्मररायनायकवर स्पृष्ट्वा प्रगल्भा सती  
 मोहोद्रेकवशान् पर परवशा केलीविधौ राजते ।  
 लक्ष्मीर्वक्षसि वा स्मरेशलिखित तज्जीव(?) सज्जीव)चित्र रते  
 शृङ्गाराम्बुधिजातनिश्चलतरा श्रीकल्पवल्लीव सा ॥६६॥  
 धीरात्वधीरा लोके हि धीराधीरेति सा मता ।  
 त्रिविधा नायिका मध्या गुणशालिकवीश्वरे ॥ ६७ ॥  
 उपहासयुता या च वक्रवाचा स्वनायकम् ।  
 खेदयेत्सापराध सा मध्या धीरा प्ररूप्यते ॥ ६८ ॥  
 श्रीराय ते नभसि वक्षसि कौमुदीय  
 भाले वरे मकरिका वरवज्रमस्ति ।  
 तत्पुण्यमत्र महदस्ति तथा फल च  
 तत्रैव तिष्ठ न तु मा स्पृश याहि याहि ॥ ६९ ॥  
 सापराध निजेश या वचसा कर्कशेन हि ।  
 रुदती भेदयेत् सा त्वधीरा मध्या मता यथा ॥ ७० ॥  
 श्रीराय निजगेहमागतमिमं दृष्ट्वा मनीत्यब्रवी-  
 न्नाथात्रागमन नवीनमिदमाश्चर्यं च पुण्य मम ।  
 मौक्तिक विचर्किलमृगगन्धवज्र त्वया  
 धन्याह मुकृती त्वमेव भुवने नेत्राश्रुवारान्विता ॥ ७१ ॥  
 प्रगल्भा नायिका त्रेधा धीराधीरे पुनस्तथा ।  
 धीराधीरेति कथिता नेतृनिश्चयकोविदे ॥ ७२ ॥  
 कृतापराध सुरते नायक दुःखयेद् रूपा ।  
 या च या वादरेणास्ते सावहित्था सकोपना ॥ ७३ ॥  
 तादृश प्रति भर्तार सावशा वा प्ररूप्यते ।  
 प्रगल्भधीरा भुवने कामसिद्धान्तवेदिभि ॥ ७४ ॥

कोपालिङ्गितलोलकेन वचसा मर्मस्पृशा मालती-  
 मालाघातनलीलया निजपतिं भीतिं नयन्ती सती ।  
 श्रीरायं निजकामिनी तममल हारं गृहे नागसे (? गृहेऽनागत)  
 कोपं भावजपूज्यराज्यसदन(?) चित्तेऽकरोत्कोविदा ॥ ७५ ॥  
 श्रीराये गृहमागते हरिलसस्पीठं प्रदाय स्वयं  
 ताम्बूल हरिचन्दन विचकिलं कर्परसारोच्चयम् ।  
 सा कान्ता चतुरङ्गचारुकलया केलीर्विधिं कुर्वती  
 नानालीजनसंनिधौ गतरतिं कोपं कृतार्थं व्यधात् ॥ ७६ ॥  
 निजेशं तर्जनं कृत्वा सताडयति यां वधूः ।  
 अधीरा सा प्रगल्भा च नायिका परिकीर्तिता ॥ ७७ ॥  
 कांपान्नायिकया निजेनृपतिं श्रीरायबङ्गो गृही  
 मालत्या कृतमालया श्रुतिगतैः श्रीकर्णपूरैरपि ।  
 वामेनाङ्घ्रितलेन रोधनयुजा सताडयमानो हसन्  
 शान्तस्तोषपरं कृती सुकृतिनामग्रेसरो जायते ॥ ७८ ॥  
 वक्रवाच सोपहासा या ब्रूते रमणी क्रुधा ।  
 धीराधीरा प्रगल्भा सा नायिका कथिता बुधैः ॥ ७९ ॥  
 श्रीरायं भो नगसि पश्यसि दैन्यवाच  
 ब्रूषे मनोजतरवस्तुततीमुदासी ( ? ) ।  
 सत्यं तथैव भुवने न च कोऽपि दोषो  
 दृष्टस्तथापि यमपाटिजनस्य कोपं (?) ॥ ८० ॥  
 त्रिभेदसयुता मध्या प्रत्येकं द्विविधा पुनः ।  
 ज्येष्ठा चेति कनिष्ठा च षड्विधाभूत् सता मते ॥ ८१ ॥  
 एव प्रगल्भा कथिता षड्विधा कविपुङ्गवैः ।  
 ज्येष्ठकनिष्ठयोरत्र दृष्टान्तं प्रतिपाद्यते ॥ ८२ ॥

कासार जललीलया परिगते दृष्टो रमण्या नृप

श्रीरायो जलसेवनं परिलसद्वन्त्रेण कृत्वा सतीम् ।

भजन्ती सरसीजले भयवशात्कृत्वा परा कामिनी

चुम्बित्वाघरपानं सज्जलधौ तन्तन्यते मज्जनम् ॥ ८३ ॥

चुम्ब्यमाना नारी ज्येष्ठा । इतरा कनिष्ठा ।

नायिकालक्षणं तासां भेदं चोक्त्वाधुना पुनः ।

तासामष्टावस्थास्ताः प्ररूप्यन्ते भूश मया ॥ ८४ ॥

स्वाधीनपतिका नारी काचिद्वासकसज्जिका ।

कलहान्तरिता काचिद्विप्रलब्धा परा मता ॥ ८५ ॥

विरहोत्कण्ठिता काचित् काचित् प्रीषितभर्तुका ।

खण्डिता रमणी काचित् काचिदन्त्याभिमारिका ॥ ८६ ॥

यस्या सामीप्यमाश्रित्य यदधीनं पतिं सदा ।

स्वाधीनपतिका नारी सा प्रोक्ता रसकोविदैः ॥ ८७ ॥

काञ्चीनारी नृपतितिलको रायबङ्ग सदाल

स्वारुह्याङ्कं पिबति मधुर चाघरं प्रेक्षतेऽङ्गम् ।

तत्सलापं निशमयति वै सौरभं जिघ्रतीदं

स्पृष्ट्वा स्पृष्ट्वा वरकुचयुगं मोदते कामतन्त्र ॥ ८८ ॥

प्रियस्यागमनं श्रुत्वा मुदा भूषणभूषिता ।

या नारी सा स्तुता लोके सता वासकसज्जिका ॥ ८९ ॥

श्रीरायागमनोत्सुका रतिसमा नारी मनोहारिणी

मालकाररसोरुवृत्तिगुणसद्गीतिप्रभावान्विता ।

नानावर्णनया कवीन्द्रकृतया युक्ता सशय्या सदा

सार्थां सुक्तिविलासिनी गतमला चारु प्रबन्धायते ॥ ९० ॥

आगतं नायकं कोपात्तिरस्कृत्य तदर्थिनी ।

या दुःखपीडिता सात्र कलहान्तरिता यथा ॥ ९१ ॥

१ सङ्ख्येयं । २ सशय्या सदा ।

भो भो निष्ठुरभाषिणि प्रियतमे श्रीरायबङ्ग. पति-  
 निर्धतो रतिनाथव्याहृतकरोऽप्यज्ञानदोषात्त्वया ।  
 दुःखं त्वं विदधासि चेत् पुनरसौ नायाति पुण्याम्बुधि.  
 शेषस्त्रीसरसीजचारुनिकरे श्रीराजहसायते ॥ ९२ ॥  
 नागते नायके मेहं सकेतविषयं यदा ।  
 तदावमानिता नारी विप्रलब्धा मता यथा ॥ ९३ ॥  
 सरसमधुरवाणीभाषिता नायकेन  
 तदमलवचनेऽहं प्रत्ययं साधु कुर्वे । \*  
 उत्तरसमयालीप्रापिता तेन दूति  
 नहि नहि मम नाथ प्रत्ययो नापि कुत्र ॥ ९४ ॥  
 असत्यरहिते नाथे विलम्बनयुते सति ।  
 उत्कण्ठा कुरुते या सा विरहोत्कण्ठिता मता ॥ ९५ ॥  
 श्रीराये निजनायके रतिपतौ कालं चिरं नागते  
 नारी चन्द्रमसं न पश्यति मनोजातेष्टचापेहया ।  
 नारीवृन्दवचं शृणोति न कलकण्ठानां स्वराणां धिया  
 द्रष्टुं नेच्छति कौमुदी विचकिला (? विचकिता) सारोर्लबाण-  
 भ्रमात् ॥ ९६ ॥  
 देशान्तरं गते नाथे या नारी मानसी व्यथाम् ।  
 करोति सा मता लोके बुधैः प्रोषितभर्तुका ॥ ९७ ॥  
 राये दिग्विजयाय सैन्यकलिते याते स्वकीया सती  
 स्नानं मुञ्चति भूषणं च मलिनं गृह्णाति चीनाम्बरम् ।  
 माला चन्दनलेपनं परिलसत्कस्तूरिकाचित्रकं  
 त्यक्त्वा गायति वीणया निजपते सौभाग्यमाला पराम् ॥ ९८ ॥  
 ज्ञातमन्मथचिह्ने या नारीर्ष्यां विदधाति सा ।  
 खण्डिता रमणी प्रोक्ता नायके रसिकोत्तमे ॥ ९९ ॥

मनसिज तव कार्यं मन्मथो वेत्ति सर्व-

महमपि तव काये गोपिते वेशि किञ्चित् ।

अनिकटनिवासी वामपादोऽर्पितोऽस्या

विलसदरुणवर्णो दृश्यते राय साक्षात् ॥ १०० ॥

नाथ सरति या नारी दूती वा सारयत्यसौ ।

प्रोक्ताभिसारिका लोके नायिकाभेदवेदिभि ॥ १०१ ॥

बञ्चित्वात्मीयलोक या पति गच्छति सागसम् ।

सा रायबङ्गभूमीशशासनाद्धीतिमृच्छति ॥ १०२ ॥

रसप्रकरणं प्रोक्तश्चतुर्धा विप्रलम्भक ।

पूर्वानुरागो मानश्च प्रवास करुणात्मक ॥ १०३ ॥

वियुक्तनायकस्यासौ वियुक्ताया स्त्रियोऽपि च ।

शृङ्गारो विप्रलम्भाख्यो वक्तव्यो वदता वरे ॥ १०४ ॥

नवीनालोकनाज्ञातरागयोरवितृप्तयो ।

पूर्वानुरागो दम्पत्योरवस्था परिकीर्त्यते ॥ १०५ ॥

अन्यस्त्रीसगमादीर्घ्या विकारो मान उच्यते ।

परदेश गते नाथे प्रवासो विरहात्मक ॥ १०६ ॥

अनुरक्तस्य नाथस्य नायिकायाश्च तादृश ।

एकस्य मरणे जात शृङ्गार करुणात्मक ॥ १०७ ॥

खण्डिताया नायिकाया शृङ्गारो मान उच्यते ।

प्रोषितप्रियनारोपु प्रवास परिकीर्तित ॥ १०८ ॥

कलहान्तरिता या वा विप्रलम्भा च या सती ।

विरहोत्कण्ठिता या च तासु पूर्वानुरागक ॥ १०९ ॥

परलोक गते नाथे कामिन्या वा प्ररूप्यताम् ।

अवशिष्टजने सद्भि शृङ्गार करुणात्मक ॥ ११० ॥

१ अनिकटनिवासी वामपादोऽर्पितोऽस्या ।

आसा स्त्रीणा सखी दासी लिङ्गिनी प्रतिवेशिनी ।  
 घात्रेयी शिल्पिका कारुर्दूत्य, प्रोक्ता स्वय तथा ॥ १११ ॥  
 भो भो राय मनोजपातकमहो क्रूरेण सपीडयते  
 नारी मुञ्चति वाग्विलाससरणी घत्ते तनुत्व तनो ।  
 आहारोऽपि न रोचते भ्रमवशा त्वद्भावचित्र दृशा  
 दृष्ट्वाऽलिङ्गति चुम्बति त्वरितमागत्येह ता रक्षतात् ॥ ११२ ॥  
 पूर्वोक्तनायिकानां तु यौवने सत्त्वसमवा ।  
 अलङ्कारा प्ररूप्यन्ते विंशति कविकुञ्जरे ॥ ११३ ॥  
 भावहावौ तथा हेला शोभा कान्तिश्च दीप्तिका ।  
 मधुरत्व तथा चोक्ता प्रागल्भ्य च वदान्यता ॥ ११४ ॥  
 धैर्यं लीला विलासश्च विच्छित्तिर्विभ्रमस्तथा ।  
 किलकिञ्चित्तमप्युक्ता तथा मोट्टायित तथा ॥ ११५ ॥  
 अथ कुट्टमित चोक्ता बिम्बोको ललित तत ।  
 विहृत परिकीर्त्यन्ते लक्षणानि पृथक् पृथक् ॥ ११६ ॥  
 एषामाद्यास्त्रयो देहसमवा, कथितास्तत ।  
 सप्तालङ्कृतयो गीतास्तत स्वाभाविका दश ॥ ११७ ॥  
 चित्तवृत्तिविशेषोऽयं कन्दर्पविकृतिच्युत ।  
 सत्त्व तस्याद्यविकृतिर्भावो मन्मथयोगिनी ॥ ११८ ॥  
 भाविहावाद्यलङ्कारमाधनीभूत उच्यते ।  
 भावोऽयं सर्वशृङ्गाररसहेतुश्च कोविदै ॥ ११९ ॥  
 जात्यश्वारूढराय पुरमरणिगत राजकन्या विलोक्य  
 भ्रूविक्षेपाक्षिलौल्यं कुसुमशरशराघातमपीडयमाना ।  
 मन्द मन्द स्वचेतो विशदपि नवपुष्पायुधाश्चारुरूपा  
 ररम्यन्ते मनोज्ञप्रकटितनिजलावण्यभाजो गृहाग्रे ॥ १२० ॥

१ त्वरितागत्य प्राण रक्षतात् ।

चित्तशृङ्गारभूतोऽयं भ्रूलोचनविकारकृत् ।

भाव एव बुधैर्लंकि हावालङ्कार उच्यते ॥ १२१ ॥

आस्येन्दुनिर्गतमनोहरचन्द्रिकामै

पुष्पेषुबाणसदृशैस्तरलैः कटाक्षैः ।

शृङ्गारभावगमकैर्नृपरायबङ्ग

नारी भवन्तमवलोक्य सुखाब्धिगाभूत् ॥ १२२ ॥

शृङ्गारगमको हावो यः सुस्पष्टः प्रवर्तते ।

स एव हेला विबुधेः कथ्यते गुणराजिते ॥ १२३ ॥

चकोरीसदृशीदृष्टिकटाक्षायतजिह्वया ।

रमण्या तव रायेश रूपं पेयीयतेऽमृतम् ॥ १२४ ॥

रूपोपभोगनारूप्यैः शरीरालकृतिः कृता ।

या सैव शोभा गदिता महाकविमतानुगैः ॥ १२५ ॥

तरुण्या रूपसौन्दर्यं स्मरचेतोहरं वरम् ।

दृष्ट्वा चित्रीयते रायो भूषणापेक्षया विना ॥ १२६ ॥

मनोरागेण निबिडा सैव शोभा निगद्यते ।

कान्तिः स्त्रीणां मनोज्ञाज्ञाशालिनीनां बुधोत्तमैः ॥ १२७ ॥

आरामकुञ्जगतमुग्धमती बिभेति

ध्वान्ते गते निजकटाक्षमयूखजालं ।

पादान्जचारुनखदीधितिभिश्च राय-

बङ्गान्विता मुरतकेलिविदं सकाशात् ॥ १२८ ॥

विस्तारं याति या कान्तिः सैव दीप्तिर्मता सताम् ।

पुष्पायुधमहासेनादेश्यस्त्रीषु प्रवर्तते ॥ १२९ ॥

श्रीरायबङ्गसहिता गुस्तुङ्गसौध-

मारुह्य मारतरुणीनिभकोमलाङ्गी ।

सिंहासने स्थितवती निजदेहदीप्त्या-

काशं प्रकाशयति चारुतडिल्लतेव ॥ १३० ॥



अवर्णनोयवस्तूना सबन्धेऽपि प्रवर्तते ।

यद्द्रव्यत्वं तदेवात्र माधुर्यं प्रतिपादितम् ॥ १३१ ॥

नृपतितिलकराये कोपिते कोमलाङ्गी

मलिनवसनयुक्ता रम्यता नो जहाति ।

घनकृतवरणेयं कौमुदी सत्कला वा

शितितनुमदनो वा रम्यता नो जहाति ॥ १३२ ॥

मनोवचनकायेभ्यः समुत्पन्नभयस्य या ।

प्रगल्भता निवृत्तिः सा ज्ञातव्या बुधकुञ्जरः ॥ १३३ ॥

मनोवचनकायजनितभीतिरहितं कलाशास्त्रप्रयोगचातुर्यं प्रागल्भ्य-  
मिति भावः ।

यद्गानं परमामृतं श्रुतिहरं श्रुत्वा मुदा कोकिलो

रौति प्राप्तसुखं शुकोऽपि वचनं श्रुत्वा यदीयं प्रियम् ।

ब्रूते सूक्तिमिमं यदीयनटनं दृष्ट्वा शिखी नृत्यति

स्वात्मानन्दसमन्विता जयति सा श्रीरायकान्ता सती

॥ १३४ ॥

आयासे सति कामिन्या बहावपि गुणोत्तमः ।

विनयोत्कर्षं औदार्यमुच्यते कविनायकैः ॥ १३५ ॥

नवकेलिविनोदेन श्रान्ता पानोयलीलया ।

तन्वी विमुक्तनिद्रापि रायशय्या न मुञ्चति ॥ १३६ ॥

चापल्यरहिता चित्तवृत्तिः स्थिरतराथवा ।

तरुणीजनसबद्धा या सा धैर्यं निरूप्यते ॥ १३७ ॥

रायनाथस्य रागे या यादृशी रमणी तु सा ।

कोपेऽपि तादृशी जाता महादेवीपदे स्थिता ॥ १३८ ॥

१ लौति आतसुखं सुखोपि ।

क्रियाविशेषैरधिकैर्मनोहरतरंरपि ।  
 नायकाभिनयो लीला नायिकाविहितो यथा ॥१३९॥  
 हसति वसति चास्ते लोकते याति दत्ते  
 गदति नदति शेते याचते राजतेऽलम् ।  
 लिखति पिबति भुङ्क्ते रोदति<sup>१</sup> मोदते च  
 नृपतितिलकरायो यादृशस्तादृशी सा ॥१४०॥  
 दृष्टे निजेशे कामिन्या देहसजनितो भृशम् ।  
 क्रियाद्यतिशय प्रोक्तो विलासो रसिकैर्यथा ॥१४१॥  
 रायेश स्मरसनिभ स्मरसख क्षीराब्जिचन्द्र मुदा  
 दृष्ट्वा स्विद्यति कम्पते सृतिकर धैर्यं च मुञ्चत्यहो ।  
 उत्कण्ठा<sup>२</sup> मनुते न नोति सरसालोक शरच्चन्द्रिका—  
 मकाश रमणीमनोजनशठो कन्दर्पसिद्धान्तवित् ॥१४२॥  
 तरुणीकायदेशे स्वीकृता स्वल्पाप्यलक्रिया ।  
 करोति जनतानन्द या सा विच्छित्तिरुच्यते ॥१४३॥  
 किसलययुतकर्णा मल्लिकाकुङ्कुमलौघं  
 कृतरुचिकरहारा मालतीसूग्विभूषा ।  
 मलिनवसनयुक्ता माघवी कन्दुकेन  
 विहरति रमणी या साकरोद्रायसौख्यम् ॥१४४॥  
 आयात नायक श्रुत्वा संभ्रमेण मुदा मती ।  
 अस्थाने भूषण धत्ते यत्तद्विभ्रम उच्यते ॥१४५॥  
 आगच्छन्त निजेश रतिपतिसदृश रायबङ्ग निशम्य  
 प्रोद्भिन्नानन्दमूर्ति परवशगमनादञ्जनैर्लप्यकण्ठा ।  
 पीनोत्तुङ्गस्तनाग्रे मृगमदतिलकालकृता भालभागे  
 हारालकारयुक्ता रतिसमरमणी चास्ता<sup>३</sup>मूर्तिरास्ते ॥१४६॥

१ रोदते, २ मस्तेन नोति, ३ नूर्तिचित्ते ।

कृताश्रूणां शङ्कादीनां सांकर्यं रमणीजने ।  
 किलकिञ्चित्तमित्युक्तं शृङ्गाररसकोविदे ॥१४७॥  
 कादम्बनाथमदनेन सुधाधरेऽल  
 सपीडिते मधुरचुम्बनपानपूर्वम् ।  
 तन्वी तनोति मुदमश्रु च तर्जनं च  
 सीत्कारताडनविनोदपदप्रहारात् ॥१४८॥  
 नाथस्य चित्रे वस्त्रे च प्रतिमाभरणादिषु ।  
 नाथभावेन या बुद्धिः सा मोट्टायितमुच्यते ॥१४९॥ \*  
 स्मृत्वा निजेश स्वाङ्गस्य भङ्गो जृम्भणपूर्वकः ।  
 पृष्ठादिनमनादिर्वा मोट्टायितमुदगोरितम् ॥१५०॥  
 रायरूपपटी दृष्ट्वा तन्वी मोहेन चुम्बति ।  
 आलिङ्गति च रायेन्द्र इति मत्वा प्रमोदिनी ॥१५१॥  
 आलीजनेन नृपकुञ्जररायबङ्गे  
 सर्वर्णिके मनसि तत्स्मरणं विधाय ।  
 गात्रं विवर्तयति बाहुयुगं च तन्वी  
 'वक्रं करोति मदनग्रहपीडिता सा ॥१५२॥  
 आलिङ्गने चुम्बनादौ कृते वा जीवितेशिना ।  
 अन्तरङ्गे मुखं बाह्ये रोषं कुट्टमितं यथा ॥१५३॥  
 आलिङ्ग्य चुम्बति नृपे सति रायबङ्गे  
 नारी मनोजमुखवार्धिगतापि चित्ते ।  
 हस्तेन कम्पनयुतेन निवारयन्ती  
 रोषं करोति पुलकालिविराजमाना ॥१५४॥  
 गर्वगौरवमालम्ब्य तरुण्यानादरं कृतं ।  
 जीवितेऽग्रे स बिम्बोकं कथ्यते रसिकैर्जनैः ॥१५५॥

आगत्य रायनृपतौ निजपादयुग्मे  
 नत्वापराधमखिल रमणि क्षमस्व ।  
 इत्युक्तिमात्तविनया वदति प्रवीणा  
 भर्मज्ञया वनितया न कृत कटाक्ष ॥१५६॥  
 शरीरावयवव्यास स्निग्धकोमलतायुत ।  
 तरुणीजनसंबन्धी ललित प्रतिपाद्यते ॥१५७॥  
 भ्रूविक्षेप किसलयमृदु वाग्विलास सुमार्भ  
 नेत्रालोक कुवलयनिभ पादपङ्केजयानम् ।  
 चन्द्रोपम्य मधुरहसनं कौमुदीसाम्ययुक्तं  
 कृत्वा कान्ता जनयति मुदं रायभूमीश्वरस्य ॥१५८॥  
 वक्तु योग्यमपि स्वान्तस्स्थित नारी निजेशिना ।  
 न ब्रूते लज्जया यत्तद्विहृत परिभाषितम् ॥१५९॥  
 उद्याने प्रीतियुक्ता विमलसलिलसत्क्रीडनेच्छापि कान्ता  
 प्रासादारोहरक्ता मधुरतरलसत्कन्दुकक्रीडनेच्छा ।  
 दोलालीलामनीषा सुकविकृतमहाकाव्यगोष्ठीप्रसक्ता  
 न ब्रूते व्रीडया या मुदमनयदिमा तन्मनोज्ञो निजेश ॥१६०॥  
 विनयादिगुणा प्रोक्ता नेतृसाधारणा हरा ।  
 गुणाष्टकं च दृष्टान्तास्तेषामूह्या विवेकिभि ॥१६१॥  
 यथोचित नायकोक्तभावहावादयो गुणाः ।  
 तेषामुदाहृतिर्ज्ञेया नायकेऽपि विशारदे ॥१६२॥  
 भो भो वीरनृसिहराय नृपते लोकत्रये सन्ति ये  
 नेतारो बह्वश्च तेऽपि सुलभाश्चेतोहरा नो सताम् ।  
 नानावाग्मिकवीश्वरस्तुतिपदानेकोरुकीर्तिप्रथ  
 धीरोदात्ततया प्रसिद्धपुरुषो लोके भवानेव वै ॥१६३॥  
 इति नायकभेदनिश्चयो नाम चतुर्थ परिच्छेद ।

१. गाणाष्टक, २. श्चेतोहरी ।

## दशगुणनिश्चयो नाम

पञ्चमः परिच्छेदः

गुणरीतिवृत्तिशय्यापाकाना लक्षणं मया ।  
तल्लक्षणार्थिना नृणा बोधाय प्रतिपाद्यते ॥ १ ॥  
निर्गुणा रमणी लोके यथा सद्भिर्न पूज्यते । \*  
निर्गुण काव्यबन्धोऽपि तथा नाच्यं कवीश्वरै ॥ २ ॥  
अतो गुणा प्रकीर्त्यन्ते पूर्वशास्त्रानुसारत ।  
कामिराय नराधीश श्रूयता भवताघुना ॥ ३ ॥  
सुकुमारत्वमौदार्यं श्लेषः कान्तिः प्रसन्नता ।  
समाधिरोजो माधुर्यमर्थव्यक्तिस्तु साम्यकम् ॥ ४ ॥  
एते दशगुणा प्रोक्ता दश प्राणाश्च भाषिता ।  
यथासख्य मया तेषा लक्षण प्रतिपाद्यते ॥ ५ ॥  
श्रुतिचेतोद्वयानन्दकारिणा कोमलात्मनाम् ।  
वर्णाना रचनान्यास सौकुमार्यं निरूप्यते ॥ ६ ॥  
श्रीरायबङ्गक्षितिनायकस्य कीर्तिर्विशाला वरचन्द्रिकैव ।  
न चेत् त्रिलोकीजनचित्तजातं सतापजालं क्व निराकरोति ॥ ७ ॥  
अर्थचारुत्वगमक पदान्तरविराजितम् ।  
पदानां यदुपादानं तदौदार्यं मतं यथा ॥ ८ ॥  
शब्दानामभिधेयानां <sup>१</sup>गुणोत्कर्षा यदाथवा ।  
तदौदार्यं मतं लोके तदुदाहरणं यथा ॥ ९ ॥  
कादम्बनाथस्य मदन्धशूरक्षोणीघरोत्तुङ्गमहागजेन्द्र ।  
<sup>३</sup>दिग्दन्तिनैरावतनामकेन स्पर्धा विधत्ते जगदद्भुतोऽसौ ॥ १० ॥  
१ <sup>०</sup>जाता, २ गुणोत्कर्षाय योऽथवा, ३ दिगन्तिनैरावत<sup>०</sup> ।

परस्पर प्रयुक्तानि स्यूतानीव पदानि वै ।

निबिडानि प्रवर्तन्ते यत्र स श्लेष उच्यते ॥ ११ ॥

यस्योत्तुङ्गविशालकीर्तिविसर दृष्ट्वा जगन्मोदते  
क्षीराब्धिर्दिगिभो महाघवलिमा व्योमपगाबन्धुरा ।

नानाकारविचित्रशारदमहामेधावलीप्रोल्लस-

त्कैलासाचलभूतिसारमिति ता मत्वा जगज्जृम्भितम् ॥ १२ ॥

अल्पप्राणाक्षराण्येव निबिडानि पदानि वै ।

यत्र स श्लेष इति वा केचिल्लक्षणमूचिरे ॥ १३ ॥

तदुदाहरणमिदम्—

उल्लसन्ती त्वदीयेय कीर्तिश्रीर्मूर्तिराजिनी ।

जगद्वर्तिकवीन्द्राणा सूक्तिजाले प्रकाशते ॥ १४ ॥

प्रयुक्तो लौकिकार्थोऽपि यथा भवति सुन्दर ।

सा कान्तिरुदिता सद्भिः कलागमविशारदैः ॥ १५ ॥

अथवा पदबन्धस्योज्ज्वलत्व कान्तिरुच्यते ।

उदाहरणमेतस्या गीयते शृणु भूपते ॥ १६ ॥

उपवनजलकेलीमकनकान्ताजनाना

करकृतजलसेक मोधधारानिषेक ।

विगलितकचबन्धान्मालतीमालिकाया

विगलनमर्तितोष रायबङ्गे व्यदत्त ॥ १७ ॥

प्रयुक्तस्य पदस्यार्थो यत शीघ्र प्रतीयते ।

पदेन वा प्रसन्नोऽर्थो यत्र सा वा प्रमन्नता ॥ १८ ॥

भो रायबङ्ग कीर्तिस्ते शरदभ्रविलासिनी ।

व्योमगङ्गाप्रवाहाभा बम्भ्रमीनि जगत्त्रये ॥ १९ ॥

१ \* भूरिसारमिति का मत्वा ।

अन्यवस्तुगुणारोपोऽन्यत्र योज्यं प्रकीर्तित ।

स समाधिरिति ज्ञेयः कवितागुणकोविदे' ॥२०॥

आरोपादन्यधर्मस्य प्रकृतार्थस्य गौरवम् ।

समाधिरुच्यते सद्भिरिति वा लक्षण मतम् ॥२१॥

श्रीरायस्य यक्षोऽमित कुसुमित त्यागाम्भसा तेजसा-

नल्प तत्फलित द्विवेकगुणतो ध्वस्तश्च कल्पद्रुम ।

खङ्गोऽय नैरकालराहुरमलस्तद्विक्रमस्तुङ्गत

सूक्ति सारमुधा प्रतापतपनो लोकत्रये द्योतते ॥२२॥

पद्मे समासबाहुल्य गद्ये वा हृद्यमुच्यते ।

ओजो गुण कलाशास्त्रविशारदकवीश्वरे ॥२३॥

रङ्गान्तुङ्गतरङ्गसगविलसद्गम्भीर<sup>१</sup> शङ्खध्वनद-

म्भोराशिसमानभीकरमहासेनासमूहाद्भुत ।

बन्दित्रातविनूयमानगुणसन्दोहप्रभावोज्ज्वल

सग्रामाङ्गणराजमानतुरगो जेजीयते राजराट् ॥२४॥

सरसो यत्र शब्दश्च सरसोऽर्थोऽपि जायते ।

तन्माधुर्यमिति प्रोक्तं कर्णानन्दविधायकम् ॥२५॥

सरसवचनलोला चारुलीला कटाक्षा

मधुरहसनचञ्चद्वक्त्रनीरेजशोभा ।

मदगजगतिराजपादपङ्केजयुग्मा

रतिसमवरकान्ता रायतोष तनोति ॥ २६ ॥

अर्थनियत्वमित्युक्ते सुखगम्यत्वमुच्यते ।

कष्टकल्पनया शून्यमर्थव्यक्तिस्तदेव हि ॥२७॥

श्रीरायकीर्तिजालेन व्याप्त जगदिद सदा ।

शरच्चन्द्रिकया व्याप्तमिवाभाति मनोहरम् ॥२८॥

१ 'धर्मप्रकृतार्थस्य, २ वर', ३ शुभद्विदाम्भो' ।

मृदुस्फुटोभयाकारवर्णविन्यासशालिनः ।

बन्धस्य साम्य समता कथ्यते कविकुञ्जरे ॥२९॥

श्रीरायबङ्गकान्ताया वदन चन्दिरायते ।

हासो ज्योत्स्नायते नेत्रयुग्म नीलोत्पलायते ॥३०॥

एतैर्गुणैर्भामुरकाव्यबन्धं महाकवीना मृदु वाग्विलासम् ।

श्रुत्वा गुणौघ परिभाष्य चित्ते श्रीरायबङ्गेन्द्र मुद प्रयाहि ॥३१॥

इति दशगुणनिश्चयो नाम पञ्चम परिच्छेदः ।





## रीतिनिश्चयो नाम

षष्ठः परिच्छेदः

रीतिशून्या यथा कस्या न मान्या धरणीतले ।  
तथा काव्य रीतिशून्य न मान्य रसिकैर्जनैः ॥१॥  
रीतीनां लक्षण तस्माद् वर्ण्यते मेदसगतम् ।  
शृणु रायन्नराधीश काव्यसारविशारद ॥२॥  
माधुर्यादिगुणोपेतपदानां घटनात्मिका ।  
रीतिरित्युच्यते सा च चतुर्भेदा सता मता ॥३॥  
वैदर्भी-गौडिका-लाटी-पाञ्चालीति चतुर्विधा ।  
इय रीतिश्च काव्यस्य स्वरूपमिति बुध्यताम् ॥४॥  
शब्दाश्रितप्रसादादिगुणवैशिष्ट्यसम्भवात् ।  
रीते काव्यस्वरूपत्व निश्चित कविपुङ्गवैः ॥५॥  
प्रसादादिगुणपेता समासरहिताथवा ।  
समस्तद्वित्रपदका स्वल्पघोषाक्षरावली ॥६॥  
वर्गद्वितीयबहुला वैदर्भी रीतिरिष्यते ।  
उदाहरणमेतस्या कथ्यते शृणु धीमन ॥७॥  
छत्रसितदण्डयुतधृतते सनीलरत्नकृपराय भाति ।  
सचञ्चरीकखरदण्डमब्जसितयथा राज्यपदस्य चिह्नम् ॥८॥  
ओजकान्तिगुणोपेता महाप्राणाक्षरान्विता ।  
अत्यद्भुत (अत्युद्भूत) समासा च गौडी रीतिरितीष्यते ॥९॥  
कल्पान्तानिलवेगधूर्णितचलत्तुङ्गोरुभृङ्गावली-  
राजद्वीकरशीकरान्वितमहाडिण्डीरषिण्डाकरः ।

श्रीमद्भूरिमहासमुद्रसमसेनानीकसंभूतधू-

लिजालस्थगिताशुमालिकिरणो जेजीयते रायराट् ॥१०॥

सुकुमारत्वमाधुर्यकान्त्योजोगुणसयुता ।

पञ्चषट्पदसक्षिप्ता पाञ्चाली रीतिरुच्यते ॥११॥

नानारत्नविराजमानमुकुटो हारावलीभूषितो

राजद्राजकदम्बपूजितपदो गाम्भीर्यवीर्यान्वित ।

त्यागोपात्तविशालकीर्तिविसर सिंहासनाधीश्वरो

जीयाद् वीरनृसिंहरायनृपति संसारसारोदय ॥१२॥

उक्तरीतित्रययुता भूरिद्वित्वाक्षराच्युता ।

अल्पघोषाक्षरा लाटी वृत्ति कोमलतायुता ॥१३॥

गङ्गातुङ्गतरङ्गशारदधनक्षीराब्धिचन्द्रातप

श्रीराजद्वरकीर्तिभासुरगुणो गम्भीरचित्तस्मर ।

नानावाग्मिकवीश्वरस्तुतगुण सर्वज्ञकल्पो महान्

श्रीवीरो नरसिंहबङ्गनृपतिर्जीयाद्वरित्रीतले ॥१४॥

शृङ्गार करुण शान्तो हास्यो मधुरतागुण ।

ओजोगुणयुता शेषा रसा पञ्च निरूपिता ॥१५॥

प्रसादगुणसयुक्ता रसा सर्वे नव स्मृता ।

शेषा सप्तगुणा योज्या यथायोग विशारदं ॥१६॥

रीतिनीरेजपण्डंढमहाकाव्यसरोवरे ।

कुरु केलीविधि राजहसदेशीयरायराट् ॥१७॥

इति रीतिनिश्चयो नाम षष्ठ परिच्छेद ।



## वृत्तिनिश्चयो नाम

सप्तमः परिच्छेदः

वृत्तिशून्यो न सूत्रार्थो नृणां चेतसि भासते ।  
 वृत्तिरिक्तं तथा काव्यं रसिकाय न रोचते ॥१॥  
 वृत्तीनां लक्षणं तासां भेदोऽपि प्रणिगद्यते ।  
 शृणु कादम्बदुग्धाब्धिजातकौस्तुभं रायराट् ॥२॥  
 सरसार्थोऽथ सदभंलक्षणा वृत्तिरिष्यते ।  
 कैशिक्यारभटी भारती मता सात्वती बुधे ॥३॥  
 अत्यन्तकोमलार्थानां शृङ्गाररसयोगिनाम् ।  
 कृष्णाख्यरसे वाचा सदभो वायु कैशिकी ॥४॥  
 अत्यन्तकंशार्थानां रौद्रबोभत्सयोगिनाम् ।  
 सदभंरूपारभटी वृत्तिरुक्ता कवीश्वरे ॥५॥  
 हास्यशान्ताद्भुतरसोपेतार्थानां पृथक् पृथक् ।  
 ईषन्मृदुना सदभो भारतीवृत्तिरुच्यते ॥६॥  
 ईषत्कठिनवाच्यानां सदभं सात्वतीष्यते ।  
 भयानकेन वीरेण रसेन सह योगिनाम् ॥७॥  
 शृङ्गारकण्ठौ लोकेऽत्यन्तकोमलता गतौ ।  
 अत्यन्तकठिनौ रौद्रबोभत्सौ रसनामकौ ॥८॥  
 हास्यं शान्तोऽद्भुतश्चेति स्वल्पकोमलता गता ।  
 ईषत्कठिन्यसंपृक्तौ मतौ वीरभयानकौ ॥९॥  
 चतसृणां वृत्तीनां क्रमेण निदर्शनानि निरूप्यन्ते ।

१. तस्या, २. कृष्णाख्यरसेदाना ।

कैशिकी यथा —

शृङ्गारसारतरुणीजनकोमलाङ्ग—

सर्वस्वचारुदमवृन्दवसन्तकल्प ।

नारीकटाक्षशरजालविताड्यमान

श्रीरायनायकवर सुकृतीति भाति ॥१०॥

भारभटी यथा —

घण्टाटङ्कारभीकृद्रणपटुतरगन्धेभविभ्राजमान

कोपाजापेन राजत्प्रलयगतमहावह्निकीलाभकेन ।

धिक्कुर्वन् वैरिवर्गं गुरुविपिनसम शाकिनीढाकिनीभ्यो

दत्त्वा रक्तास्थिमज्जाबहुपललबलिं भाति रायो रणाग्रे ॥११॥

भारती यथा—

कीर्तिस्तेऽप्यतिलङ्घते जगदिदं गम्भीरिमा वारिधिं

हस्तं कल्पतरु पराक्रमगुण कण्ठीरव धीरता ।

स्वर्णाद्रि नयजालमुग्रभरत सत्यं च भीमाग्रज

रूपं मन्मथभूभुजं मृदुवच पीयूषपिण्डं नृप ॥१२॥

सात्वती यथा—

सग्रासाङ्गभूतले प्रलयकालाग्निस्फुलिङ्गाकृति-

क्रोधाडम्बररक्तलोचनयुगं श्रीरायचक्रेश्वरम् ।

दृष्ट्वा वैरिनृपा भयज्वरवशान्मूर्च्छन्ति केचित् परे

दानन्ति प्रतपन्ति यान्ति शरणं बल्मीकवीराधिकम्(?) ॥१३॥

अत्यन्तकोमलार्थार्थेऽल्पप्रौढसदर्भलक्षणा ।

मध्यमा कैशिकी सर्वरससाधारणा मता ॥१४॥

१ नयजालमुदधभरत ।

ईषन्मृदुसदभ्याप्यतिप्रौढार्थगोचरा ।

मध्यमारभटी सर्वरससाधारणा स्मृता ॥१५॥

शब्दगतप्रसादमाधुर्यादिदशगुणाश्रितानामर्थविशेषनिरपेक्षाणां वेद-  
भ्यादिरोतीनामर्थविशेषापेक्षविशिष्टकैशिक्यादिवृत्तिभ्यो भेदो द्रष्टव्यः ।

असयुक्तमृदुवर्णबन्धोऽतिमृदुसदभः । सयुक्तकोमलवर्णबन्ध ईष-  
न्मृदुसदभः । अविकटपरुषवर्णबन्ध ईषत्प्रौढसदभः । प्रागुक्तसदभ-  
चतुष्टयस्य लक्षणचतुष्टयं ज्ञातव्यम् ।

सद्वृत्तिबालविलसद्भ्रूगणप्रभावे

सत्काव्यबन्धगगने तव कीर्तिचन्द्र ।

लोकस्य तापहरणे चतुरो मनोज्ञ

कादम्बनाथ चिरकालमय विभातु ॥१६॥

इति वृत्तिनिश्चयो नाम सप्तमः परिच्छेदः ।



## शय्यापाकनिश्चयो नाम

अष्टमः परिच्छेद

अशय्या कामकेली वा कृतिलोके न शोभते ।

यतस्ततो बुधैर्वाच्य शय्यालक्षणमुत्तमम् ॥ १ ॥

पदानामानुगुण्य वान्योन्यमित्रत्वमुच्यते ।

यत् सा शय्या कलाशास्त्रनिपुणैर्विदुषा बरे ॥ २ ॥

कादम्बेश्वररायबङ्गनृपते सत्कीर्तिजाल मह-

ल्लोकाभोगविराजित कविजनै क्षीराब्धिरित्वुच्यते ।

कल्पानोकहपुष्पमम्बरनदीनीहारजाल हर-

स्तत् सर्वं सदृश न तेन तदिदं तस्योपमा गच्छतु ॥ ३ ॥

अपूर्वं भोज्यमप्यत्र नि पाक नैव रोचते ।

अपाककाव्यबन्धोऽपि तत् पाको निरूप्यते ॥ ४ ॥

चतुर्विधानामर्थानां गाम्भीर्यं पाक उच्यते ।

द्राक्षापाको नालिकेरपाकोऽपि द्विविधो मत ॥ ५ ॥

आलम्ब्य शब्दमर्थस्य द्राक् प्रतीतिर्यतोऽजनि ।

स द्राक्षापाक इत्युक्तो बहिरन्तस्फुरदस ॥ ६ ॥

आलम्ब्य शब्दमर्थस्य द्राक्प्रतीतिर्यतो न हि ।

स नालिकेरपाक स्यादन्तर्गूढरसोदय ॥ ७ ॥

द्राक्षापाको यथा—

रायनाथमनोज्ञाङ्गे लावण्यममृतोपमम् ।

आलकनेन तरुणी पीत्वा पोत्वा प्रमोदते ॥ ८ ॥

१. नालिकेरपाकश्च ।

नालिकेरपाको यथा—

चन्द्र दृष्ट्वा सरोज विकसति मधुरं नीलनीरेजयुग्मं  
 सकोच याति कोकद्वयममितसुखं याति राहुश्च याति ।  
 भृङ्गीसकाशमन्दं तिमिरमभिमुखं याति बालातपश्च  
 श्रीराय कामतन्त्री मनसिजनूपतन्त्रस्य जानाति तत्त्वम् ॥९॥  
 शम्बाविरेजसयुक्ते पाकपानीयभासुरे ।  
 काव्यपद्माकरे रायकीर्तिहसो विराजताम् ॥ १० ॥

इति शम्बापाकनिश्चयो नाम द्रष्टव्य परिच्छेदः ।

## अलंकारनिर्णयो नाम

नवमः परिच्छेदः

स्त्रीरूप निरलंकार न विभाति यथा भुवि ।  
 तथा काव्य ततो ब्रूहि नानालंकारसग्रहम् ॥ १ ॥  
 काव्याङ्गभूतौ शब्दार्थौ श्रिताश्चित्रोपमादय ।  
 अलंकारा प्रकीर्त्यन्ते काव्यचारुत्वहेतवः ॥ २ ॥  
 काव्यशोभाकर काव्यघर्मोऽलंकार उच्यते ।  
 काव्यप्रयुक्तशब्दार्थान्समालम्ब्य प्रवृत्तिमान् ॥ ३ ॥  
 शब्दार्थयोरलंकारौ द्विविधौ परिकीर्तितौ ।  
 यमक चित्रवक्रोक्तिरनुप्रासश्चतुर्विध ॥ ४ ॥  
 शब्दालंकृतय प्रोक्ता अर्थालंकृतय पुन ।  
 स्वभावोक्त्यादिभेदेन बहुधा प्रतिपादिता ॥ ५ ॥  
 गम्भीरामलसूक्तिरलंकारविलसत्सत्कीर्तिफेनाम्बुधे  
 वैरिध्वान्तविघातदक्षसकलोपायाम्बुजश्रीकर ।  
 भानो भासुरूपचारुललनारत्युत्सवानन्दकृत्-  
 कन्दर्पाद्भूतभूषणानि शृणु भो श्रीरायबङ्गप्रभो ॥ ६ ॥  
 विहाय शब्दालंकारमर्थालंकार उच्यते ।  
 अर्थमाश्रित्य काव्यस्य चारुत्व जनयत्यसौ ॥ ७ ॥  
 स्वभावोक्त्युपमे रूपकावृत्ती हेतुदीपके ।  
 उत्प्रेक्षार्थान्तरन्यासौ व्यतिरेकविभावने ॥ ८ ॥  
 आक्षेपातिशयो सूक्ष्मसमासौ च लवक्रमौ ।  
 उदात्तापह्नुती प्रयोविरोधौ रसवत्तथा ॥ ९ ॥



ऊर्जस्थ्यप्रस्तुतस्सोमे विशेषस्तुल्ययोगिता ।  
 पर्यायोक्त सहोक्तिश्च परिवृत्ति समाहितम् ॥ १० ॥  
 श्लिष्टं निदर्शनं व्याजस्तुतिराशीस्समुच्चयः ।  
 वक्रोक्तिरनुमान च विषमावसरौ तथा ॥ ११ ॥  
 प्रतिवस्तूपमा सार भ्रान्तिमत्सशयौ तथा ।  
 एकावली परिकर. परिसंख्या ततः परम् ॥ १२ ॥  
 प्रश्नोत्तरं संकरश्च समुद्देश. कृत क्रमात् ।  
 एतेषा लक्षण लक्ष्य प्रोच्यते च यथाक्रमम् ॥ १३ ॥  
 येन रूपेण यद्वस्तु वर्तते तस्य वस्तुन ।  
 तेन रूपेण कथन स्वभावोक्ति प्रकीर्त्यते ॥ १४ ॥  
 सक्रिय निष्क्रिय वस्तु यथा जगति वर्तते ।  
 तथा तद्रूपकथन जातिरित्युच्यतेऽथवा ॥ १५ ॥

सक्रियवस्तुजात्युदाहरणं यथा—

कारुण्योपेतचित्त सकलजनतते पालको धैर्यशाली  
 राजद्राजाधिराजोत्करमणिमुकुटप्रोत्सृज्यसत्पादपद्म ।  
 राज्यश्रीभारधारी सकलगुणगणोद्भासिपञ्चाङ्गमन्त्र  
 सिद्धीशो रायबद्धक्षितिपतिरधुना भाति शक्तित्रयाढ्य ॥ १६ ॥  
 हरिनीलच्छविभासुरा वनगजोदीर्णोरुमुक्तावली-  
 कृतदिव्याभरणा वरालिनिभधम्मिल्लास्ता मृगीलोचना ।  
 वरशिष्टीकृतमालिका निजकराश्लिष्टात्मजातोत्करा  
 वररायावनिप किरातवनिता पश्यन्ति दूरादिमा. ॥ १७ ॥

हीनेषु त्रस्तेषु बालादिषु च विशेषतो रम्या जातिरिति द्वितीय-  
निदर्शनम् ।

निष्क्रियोदाहरणं यथा—

अयं श्रीरायभूमीशस्त्रिद्वगंकलितो महान् ।

शूरो धीरो महात्यागी राजनीतिविशारदः ॥ १८ ॥

आरामे रायबङ्गस्य कोकिला श्यामविग्रहा ।

मधुरस्वरसपूक्ता वसन्ते चित्तहारिणः ॥ १९ ॥

कलकण्ठजातिस्वभाववर्णनम् ।

चुम्बति स्पृशति प्राणनायिकां जिघ्रति क्षणम् ।

पिबति प्रेक्षते गाढमालिङ्गति च रायराट् ॥ २० ॥

क्रियास्वभाववर्णनम् ।

रतौ रायमहीनाथे सुखमन्तातिगं महत् ।

काममिद्धान्तविज्ञानं कामिनीचित्तरञ्जकम् ॥ २१ ॥

कलाज्ञानकामसुखगुणस्वभाववर्णनम् ।

कोटीरगजितो हारदिव्यकुण्डलभूषितः ।

सिंहासनसमारूढो रायबङ्गो विराजते ॥ २२ ॥

किरीटहारादि विशिष्टद्रव्यस्वभाववर्णनम् । जातिक्रियागुण-

द्रव्यस्वभावापेक्षया जात्यलंकारश्चतुर्विधः । पक्षान्तरमिदम् ।

येनोपमीयते यत्र यत्किञ्चिद्येन केनचित् ।

प्रकारेणोपमा सा तस्या भेदोऽयं प्रत्यन्यते ॥ २३ ॥

कादम्बनाथ सा कीर्तिर्धवला कौमुदीव ते ।

प्रतापमण्डलं रक्तं भाति वालार्कबिम्बवत् ॥ २४ ॥

धावल्यरक्तत्वधर्माभ्यामुपमेति धर्मोपमा ।

श्रीरायभूष कीर्तिस्ते शारदी कौमुदीव सा ।

तेजोमण्डलमुद्यति बालभास्करबिम्बवत् ॥ २५ ॥

अत्र धर्मनिरूपणं न कृतमिति उपमानोपमेयवस्तुमात्रकथनसद्  
वस्तुपमा ।

महाभागस्य रावस्य कामं दोग्धि महान्करः ।

कामधेनुरिवाशेषजगदानन्ददायिनः ॥ २६ ॥

कामधेनौ कामदोहकृत्वप्रसिद्धिः । विपर्ययसिन् हस्ते निरूप्यत इति  
विपर्ययोपमा ।

कादम्बनाथ कीर्तिस्ते शारदी कौमुदीव सा ।

शारदी कौमुदी भाति त्वत्कीर्तिरिव विष्टपे ॥ २७ ॥

परस्परोत्कर्षसिनी चान्योन्योपमा ।

श्रीराय कीर्तिजालं ते तुल्यं क्षीराब्धिनैव तत् । \*

अन्वेन केनचित् साम्यं न प्रयाति जगत्त्रये ॥ २८ ॥

परवस्तुसादृश्यं व्यावृत्तेनियमोपमा ।

कादम्बेश्वर कीर्तिस्ते चन्द्रातपसमाभक्तः ।

अस्ति चेत् सदृशं वस्तु तत्समापि विराजताम् ॥ २९ ॥

अन्यसादृश्यसम्भवकथनादनियमोपमा ।

इन्दुमन्वेति कीर्तिस्ते कान्त्या चाह्लादनेन च ।

भानुमन्वेति तेजस्ते महिमा रागतोऽपि च ॥ ३० ॥

आह्लादनकान्तिमहत्त्वारुणत्वधर्मसमुच्चयात् समुच्चयोपमा ।

श्रीराय भवत कीर्तिविशाला भवदाश्रया ।

सुधाकराश्रया ज्योत्स्ना भिदेवेयं न चेतरे ॥ ३१ ॥

भेदान्तरनिरासेन अतिशयोपमा ।

त्वत्कीर्तिविव धावत्य न कौमुद्या तदस्ति चेत् ।

शारदाभ्राभ्रगङ्गादावपि श्रीराय विद्यते ॥ ३२ ॥

साधारणधावत्यस्य अन्यथाकल्पनादुत्प्रेक्षोपमा ।

शारदी कौमुदी सप्तबार्धिं यदि विलङ्घ्यते ।

वर्तते यदि नित्यं सा घृता कीर्तिस्तवोपमाम् ॥ ३३ ॥

१ \* निर्मितेनियमोपमाः ।

सप्तवर्धिलङ्घननित्यवर्तनस्य असंभविन कथनादद्भुतोपमा ।

चकोरनिकरो दृष्ट्वा त्वत्कीर्तिरिति कौमुदीम् ।

उपेक्ष्य भवतः कीर्तिं याति ज्योत्स्नेति विभ्रमात् ॥ ३४ ॥

मोहोपमा ।

सकलङ्क सुधाशु किं किं साकाशं यशस्तव ।

कम्पते जनताचित्तमिति श्रीरायभूपते ॥ ३५ ॥

सशयोपमा ।

इन्दुना जीयते पुण्डरीकं त्वत्कीर्तिरेव तत् ।

सकलङ्केन्दुजयिनी पुण्डरीकं यतस्तत् ॥ ३६ ॥

निर्णयोपमा ।

धवला श्रीमती सर्वजनसंतापहारिणी ।

कादम्बराय कीर्तिस्ते राजते कौमुदी यथा ॥ ३७ ॥

श्लेषोपमा ।

साम्बरराजं विभाति (च) कौमुद्यत्यन्तवर्धिनो भाति [?] ।

रायनृप कौमुदी वा कीर्तिस्ते सर्वदा भुवने ॥ ३८ ॥

उपमानोपमेययोः सदृशरूपशब्दवाच्यत्वात् सतानोपमा ।

क्षीराब्धिना समानापि कीर्तिस्ते शीतभानुना ।

क्षीराब्धिं पीडितो देवैः सकलङ्क सुधाकरः ॥ ३९ ॥

निन्दोपमा ।

क्षीराब्धिरमृतस्थानं चन्द्रं सतापहृत् सदा ।

क्षीराब्धिचन्द्रौ त्वत्कीर्त्या सदृशौ राय धीधनः ॥ ४० ॥

प्रशसोपमा ।

१. In Kāvyaḍarsa's this variety of Upamā is known as Samānopamā ( v l सन्दानोपमा, रूपीया )

क्षीरवाराशिना तुल्या त्वत्कीर्तिरिति मे मन ।

आचिख्यासति दोषो वा गुणो वा भवतु प्रभो ॥४१॥

आचिख्यासोपमा ।

पुण्डरीक चन्द्रबिम्ब त्वच्चशस्त्रितय प्रभो ।

परस्परविरुद्धं भो भाति कादम्बरायराट् ॥४२॥

विरोधोपमा ।

भुवनव्यापिनी कीर्तिं भवदीया सदातनीम् ।

पुण्डरीकं न शक्नोति जेतु तादृक् क्रमोज्झितम् ॥४३॥

प्रतिषेधोपमा ।

त्वत्कीर्तिं स्वाङ्गसजाता क्षीराब्धिजनितो विषु ।

तथापि सम एवेन्दुर्नाधिको रायभूपते ॥४४॥

चटूपमा ।

न कौमुदीय कीर्तिस्ते न भानुस्तेज एव हि ।

न राहु खड्ग एवाय प्रचण्डतरविक्रम ॥४५॥

सुव्यक्तसादृश्यसंभवात्तत्त्वाख्यानोपमा ।

क्षीराब्धिशारदाभ्रादिवस्तूनामुपमा सदा ।

विलङ्घ्य भूरिकीर्तिस्ते घत्ते स्वेनैव तुल्यताम् ॥४६॥

असाधारणोपमा ।

क्षीराब्धिशरदिन्द्रादिश्वेतवस्तुप्रभावति ।

एकत्रमिलितेवेय कीर्तिस्ते राय राजते ॥४७॥

वृत्तिरिय कदापि नाभूदिति अभूतोपमा ।

अमावास्यातिथौ रात्रौ शारदी चन्द्रिका यथा ।

कलौ काले तथा भाति कीर्तिस्ते रायमन्मथ ॥४८॥

असमावितोपमा ।

शरन्वचन्द्रनभोगङ्गाशारदाभ्रपयोर्णवान् ।

अन्वेति हारनीहारी कीर्तिस्ते रायकायज ॥४९॥

बहूपमा ।

शरदिन्दोरिवोत्पन्ना जनितेव पयोम्बुधे ।

शरदभ्रादिवोद्भूता कीर्तिस्ते भाति रायराट् ॥५०॥

विक्रियोपमा ।

इन्दौ ज्योत्स्नेव दुग्धाब्धौ चन्द्रो वा दुग्धवारिधि ।

धरायामिव कीर्तिस्ते भाति श्रीरायभूपते ॥५१॥

मालोपमा ।

श्रित्वा रायनृप भाति कीर्तिलोकत्रये भृशम् ।

श्रित्वा सुधाकर व्योम्नि कौमुदीव सुनिर्मले ॥५२॥

वाक्यार्थेन कश्चिद्वाक्यार्थो यद्युपमीयते सा वाक्यार्थोपमा । सा पुनर्द्विविधा एकेवशब्दा अनेकेवशब्दा इतीयमेकेवशब्दा वाक्यार्थोपमा ।

इन्दोरिव नृमहस्य कीर्ति ज्योत्स्नामिवामलाम् ।

चकोरीव विलोक्यासौ जनता याति समदम् ॥५३॥

इयमनेकेवशब्दा वाक्यार्थोपमा ।

नृसिहाराय कीर्तिस्ते जगत्येकैव राजते ।

एक एव नभोमार्गे ननु भाति सुधाकर ॥५४॥

इवादिशब्दप्रयोगाभावेऽपि साम्यप्रतीतिरस्तीति प्रतिवस्तूपमा ।

आह्लादनाय देवाना ज्योत्स्ना वसति चन्द्रे ।

नृलोकवर्तिजीवाना कीर्ति कादम्बभूपतौ ॥५५॥

एकक्रियाविधौ अधिकेन हीन सदृशीकृत्य कथन तुल्ययोगोपमा ।

रूपेणाङ्गजवत्कलायुततया शीताशुबत्तेजसा

तीक्ष्णेनार्कवदद्भुतोन्नततया देवाद्विवत् सपदा ।

देवाधीशवदुद्धतविक्रमतया पञ्चास्यवद्भाजते

गाम्भीर्येण समुद्रवज्जयति स. श्रीरायबङ्गो भुवि ॥५६॥

हेतूपमा ।

उद्वेगो विदुषा यत्र नास्ति तत्रोपमा मता ।  
लिङ्गस्य वचनस्यापि भेदे हीनेऽधिकेऽपि च ॥५७॥  
शारदाभ्रमिवापूर्वा कीर्तिस्ते चन्द्रिका इव ।  
भवानिव महामेरुस्त्वयुरेन्द्र इवासि भो ॥५८॥

चतुर्णामेक इलोकः ।

उद्वेगो यदि वर्तेत भिन्नलिङ्गादिके सति ।  
तत्रोपमा न वक्तव्या कलागमविशारदे ॥५९॥  
बलाकेव शरच्चन्द्रो वेशन्त इव नारिधि ।  
भ्रामस्वामीव देवेन्द्र प्रदीपो भानुबिम्बवत् ॥६०॥  
एतादृशी सभासद्भिर्न वक्तव्या कदाचन ।  
धर्ममात्रविवक्षायामुपमा कीर्त्यते बुधे ॥६१॥  
शृगालवत्पुरालोकी मुनिराजो विराजते ।  
भ्रूतावासको लोके फणीव मुनिसत्तम ॥६२॥  
यथेववाद्यव्ययानि कल्पादिप्रत्ययास्तथा ।  
अञ्जास्यादिसमासश्च निभादिसमवाचकाः ॥६३॥  
उपमालङ्कृतावेते शब्दा वाच्या कवीश्वरे ।  
स्पर्धन्ते हसतीत्यादि शब्दा वाच्याश्च कोविदे ॥६४॥  
यत्रोपचर्यतेऽभेद उपमानोपमेययो ।  
तद्रूपकमलङ्कारस्तस्य भेदः प्रतन्यते ॥६५॥  
कान्ता त्राटङ्कचक्रं विरचितकबरीबन्धकान्तारदुर्गं  
लावण्याम्भस्सुदुर्गं घनकुचगिरिदुर्गं नखोदारखड्गम् ।  
चक्षुर्लोलावलोकामितनुतशरजाल लसद्दृष्टिकेतु  
कन्दर्पालापमन्त्रो विलसति चतुरो रायकन्दर्पराज्ये ॥६६॥

समस्तरूपकम् ।

श्रीरायो जलधि सुधाशुरमृत मेरुः सुरानोकहो  
भानु सिद्धरसो मनोजननृपतिश्चिन्तामणिर्देवराट् ।  
भोगीन्द्रः सुरधेनुरम्बरमिदं काले कलौ सर्वदा  
भूत्वा तीर्थकरोऽपि सर्वजनतानन्दाय सर्वतताम् ॥६७॥

व्यस्तरूपकम् ।

कामिन्या पदपङ्कजेद्धमधुपो वक्त्राब्जसर्वार्धिता-  
म्बोधिस्त्व वरनाभिचारसरसि श्रीराजहस सदा ।  
अङ्कालाननिबद्धभावजगज्स्तुङ्गस्तनाद्रिस्थित-  
व्याधोऽपाङ्गनिरोक्षणेषुविलसल्लक्ष्योऽसि बङ्गप्रभो ॥ ६८ ॥

समस्तव्यस्तरूपकम् ।

श्रीरायस्य मुखेन्दुस्ते (? इव) स्मितज्योत्स्नाविराजित ।  
कस्तूरीतिलकाङ्कद्वो भाति सूक्तिसुधारस ॥ ६९ ॥

स्मितादिषु ज्योत्स्नादित्वं मुखे च चन्द्रत्वमारोप्य तद्योग्यस्थान-  
विन्यासादेतत् सकलरूपकम् ।

स्मितज्योत्स्ना मुखं धत्ते कस्तूरीतिलकाङ्कनम् ।  
सूक्तिपीयूषसारं ते कादम्बेश्वर रायराट् ॥ ७० ॥

मुखस्यावयवानां स्मितादीनां ज्योत्स्नादिष्वारोपाद् अवयविनो  
मुखस्यानारोपाद् अवयवरूपकम् ।

मुखेन्दुस्ते जनानन्दं करोति भ्रूविराजित ।  
विशालनेत्रो निटिलधरन् श्रीरायभूपते ॥ ७१ ॥

अत्र भ्रूनेत्रनिटिलानामवयवानामनारोपं अवयविनो मुखस्य चन्द्र-  
त्वारोपाद् अवयविरूपकम् ।

१, व्याधोपाग, २, मुखदत्ते ।



मुखं विशालनेत्रं ते कपोलादर्शभासुरम् ।

दृष्ट्वा रज्यति लोकोऽत्र रायकादम्बनायक ॥ ७२ ॥

अत्र मुखस्यावयविनोऽनारोपाद् एकस्यावयवस्य कपोलस्य दर्पणत्वा-  
मारोप्य नेत्रस्यानारोपाद् एकावयवरूपकम् । एवं द्वयवयरूपक  
त्रयवयरूपकमित्यादि योज्यम् ।

स्मितज्योत्स्नाविलास ते चारुनेत्रचकोरकम् ।

दृष्ट्वा मुखं मुदं याति नारीवृन्दं नृसिंहं भो ॥ ७३ ॥

अत्र ज्योत्स्नाचकोराणां सगे सति युक्तरूपकमिदम् । \*

नारीजनो मुखं दृष्ट्वा नेत्रेन्दोवरभासुरम् ।

स्मितचन्द्रिकया युक्तं मोदते तव रायराट् ॥ ७४ ॥

अत्र चन्द्रिकेन्दोवरयोरयोगाद् अयुक्तरूपकमिदम् ।

मुखेन्दुना कपोलाक्षिभ्रूयुगाघरशालिना ।

त्वं रूपकेतुर्नारीणां करोषि रतिसमदम् ॥ ७५ ॥

अवयविनो रूपणादवयवानां रूपणारूपणाद् विषमं रूपकम् ।

कादम्बनाथं लोकेऽत्र भवानेव विराजते ।

जगन्मोहकरापूर्वरूपभासुरमन्मथ ॥ ७६ ॥

विशेषणविशिष्टमन्मथारोपणात्सविशेषणरूपकम् ।

रायप्रतापभानुस्ते न मीलयति कैरवम् ।

अस्मत्पतिविभूत्यञ्जणं सकोचयत्वहो ॥ ७७ ॥

भानुकार्यस्य अकरणदर्शनादितरकार्यस्य करणदर्शनाच्च विरुद्धरूपकम् ।

तुङ्गत्वेन महामेरुमन्मथो रूपसंपदा ।

विभूत्या सुरराजोऽसि रायकादम्बनायक ॥ ७८ ॥

तुङ्गत्वादिहेतुना कनकाचलादिरारोप्यत इति हेतुरूपकम् ।

अतिरक्तं बालभानुं विडम्बयति गर्वतः ।

तेजोभानुरयं रक्तो भवतो रायभूपते ॥ ७९ ॥

तेजोभानुबालभान्वोर्गोणमुख्ययोः साधर्म्यदर्शनादुपमा रूपकम् ।

अरुण पद्मिनी तेजोभानुर्बीर धिक् तव ।  
 आनन्दयति रक्तोऽसौ कदाचित्सर्वदाप्यधम् ॥ ८० ॥  
 अनयोर्भन्विर्बेधम्यदर्शनाद् व्यतिरेकरूपकम् ।  
 तेजोभानुस्समो भानुर्यदि तापविधानतः ।  
 ततोऽन्योऽपि ततस्तस्य न सवादी तवाधिप ॥ ८१ ॥  
 भानुसाम्यप्रतिषेधादाक्षेपरूपकम् ।  
 कटाक्षचन्द्रिकापीय परसतापहारिणी ।  
 सतापयति मा देव मत्पाप तव रावराट् ॥ ८२ ॥  
 आक्षेपस्य समाधानकरणात् समाधानरूपकम् ।  
 सत्कीर्तिचन्द्रिकाहार बृत्वा दिक्कामिनीरति ।  
 श्रीरायचन्द्रकन्दर्पं श्रुत्वा गायति गात्रति ॥ ८३ ॥  
 रूपकरूपकम् ।  
 नाय राय 'सुधासूतिर्नेयं कीर्तिश्च कौमुदी ।  
 नेद तिलकमङ्गोऽयं नाभरो बटपल्लवसु ॥ ८४ ॥  
 रायनृपत्वादिक निवर्त्य चन्द्रादित्वेन रूपणात् प्रकटीकृतगुणातिशय  
 तत्त्वापह्नुतिरूपकम् ।  
 त्रयस्त्रिंशत् समाख्याता उपमालङ्कृतेभिदा ।  
 विशती रूपकस्यापि भेदा प्रोक्ता मया पुनः ॥ ८५ ॥  
 अन्तो नास्ति विकल्पानामुपमारूपकद्वये ।  
 विङ्मात्र कथित शेषो विचार्या बुद्धिशालिभि ॥ ८६ ॥  
 उक्तस्य पुनरुक्ति स्याद्बहुधावृत्तिरीरिता ।  
 अर्थावृत्तिः पदावृत्तिरुभयीति त्रिधा मता ॥ ८७ ॥  
 अर्थावृत्तिर्यथा -  
 रुवन्ति कोकिला कीरा वदन्ति मधुपा वने ।  
 वदन्ति राजहसाश्च रणन्ति श्रीधरेशितुः ॥ ८८ ॥  
 १. श्रीधरेशिनः ।

पदावृत्तिर्यथा -

श्रीरायक्षितिनाथकीर्तिवनिता भाति त्वदीया भृश  
सप्ताम्बोधिवु भाति सर्वगगने सर्वत्र दिग्मण्डलं ।  
भाति क्षमासु च भाति भाति सकले स्वर्गेऽप्यधोविष्टे  
भातीय कविराजचारुवचने भातीयमत्यद्भुता ॥८९॥

उभयावृत्तिर्यथा -

क्रीडयत्यङ्गनालोको भवान् नृपगृहे सदा ।  
गुहामु क्रीडयत्यद्य नारीवर्गं रिपुव्रज ॥९०॥  
एतदावृत्यलकारत्रय दीपकालकारस्थान एव समतम् ।  
हिनोति कार्यं व्याप्नोति ज्ञाप्य वा हेतुरुच्यते ।  
उत्पत्तिसाधनत्वेन जप्तिमाधननोऽपि वा ॥९१॥  
कारकज्ञापकौ हेतू उत्पत्तिज्ञप्तियोग्यौ ।  
यत्रोच्येते स हेत्वाख्योऽलकारोऽनेकधा मत ॥९२॥  
हरिचन्दनहारेण मल्लिकामालया युत ।  
प्रीतिं करोति नारीणां शृङ्गारार्णवचन्द्रमा ॥९३॥

निर्वर्त्यकारकविषयहेत्वलकार ।

आरक्तमालतीमालातिलकाभरणोज्ज्वल ।  
मालिङ्ग्य नायिका नाथश्चिन्ताभावाय कल्पते ॥९४॥

अभावरूपनिर्वर्त्यविषयहेत्वलकार । पूर्वो भावविषय ।

रूपातिशयसपन्नो नुतदक्षिणनायक ।  
रायबद्धो व्यवान् स्त्रीणां मनःकौतूहलान्वितम् ॥९५॥

विकार्यविषयकारकहेत्वलकार ।

इक्षुचापसमाकार कामसिद्धान्तवेद्यसौ ।  
रावबद्धोऽवनीनाथो नारीरूपं प्रपश्यति ॥९६॥

प्राप्यविषयकारकहेत्वलकार ।

तव पल्लववज्रेण 'मुक्तेनार्घमुधाशुना ।

मन सुबोधमित्येव नायिका वक्ति नायकम् ॥९७॥

ज्ञापकहेत्वलकार ।

जातिक्रियागुणद्रव्यसज्ञाभेदाभिधायिना

आदिमध्यान्नवृत्तेन पदेवैकत्रवर्तिना ।

वाक्यार्थनिर्णयो यत्र भवेत्तद्दीपक मत

दहुधा वर्तमानस्य तस्य लक्ष्य प्रतन्यते ॥९८॥

काकिला रणन कृत्वा नृसिह मोदयन्त्यलम् ।

खेदयन्ति च कान्ताया खण्डिताया मन परम् ॥९९॥

आदिवर्तिजातिपददीपकालकार ।

चरन्ति मदनोद्याने नृसिहरमणीजना ।

त्वद्वैरियनितालोका विपिनेषु गुहासु च ॥१००॥

आदिवर्तिक्रियापददीपकालकार ।

रक्त कादम्ब्रनाथेऽस्मिन् कामिनीना मनो भृशम् ।

प्रजाना मित्रलोकाना चिन् च विदुषामपि ॥१०१॥

आदिवर्तिगुणपददीपकालकार ।

हारेण रायबङ्गस्य कण्ठस्थेन मनो हृतम् ।

नारीजनस्य शीनाशोर्मयूखोऽपि तिरस्कृत ॥१०२॥

आदिवर्तिद्रव्यपददीपकालकार ।

चैत्रेण सेवकेनासौ रायबङ्गो विनम्यते ।

पश्चाद्राजाधिलोकस्य वार्ता मस्यग्निरूप्यते ॥१०३॥

आदिवर्तिसंज्ञापददीपकालकार ।

आरामे रायबङ्गस्य नृत्य कुर्वन्ति केकिन ।

प्रेक्षकाणां जनानां च जनयन्ति मनोमुदम् ॥१०४॥

मध्यवर्तिजातिपददीपकालकार ।

रायबङ्गमनोजात नारीलोको विलोकते ।

दिदृक्षावशतो गत्वा देवनारीजनोऽपि च ॥१०५॥

मध्यवर्तिक्रियापददीपकालकार ।

सत्कीर्त्या रायबङ्गस्य नृलोको धवलीकृत ।

पाताललोकमर्वस्वमूर्ध्वलोकोऽपि भासुर ॥१०६॥

मध्यवर्तिगुणपददीपकालकार ।

कादम्बनायको हारभूषितो नृपरायराट् ।

आस्ते सिंहासने दिव्ये पूज्यते च नरेश्वरे ॥१०७॥

मध्यवर्तिद्रव्यपददीपकालकार ।

कादम्बेशेन रायेण डिन्थोऽयं परिपालित ।

अन एव निजावासे स्थित्वा दीर्घं प्रमोदते ॥१०८॥

मध्यवर्तिमज्ञापददीपकालकार ।

कादम्बरायमदनाद्ब्रह्मरुचानवामिन ।

वदन्ति मवुरालाप फलं चुम्बन्ति ते शुक ॥१०९॥

अन्त्यवर्तिजातिपददीपकालकार ।

कादम्बरायभूनाथं कुमुमायुवमनिभम् ।

दृष्ट्वा मुदं स्वकीयोऽपि परकीयोऽपि ढौकते ॥११०॥

अन्त्यवर्तिक्रियापददीपकालकार ।

कादम्बरायनाथस्य सत्कीर्त्या विमलात्मना ।

जायते मानवानां च स्वर्गिणामपि सत्सुखम् ॥ १११ ॥

अन्त्यवर्तिगुणपददीपकालकार ।

सिंहासने महारत्नकीलिते प्रतिभासते ।

क्रीडत्याराममदोहे हारालकृतरायराट् ॥ ११२ ॥

अन्त्यवर्तिद्वयपददीपकालकार ।

कादम्बनाथ रायेन्द्र लोकते प्रणमत्यपि ।

नानादेशगता वार्तां ब्रूते रम्या कपिध्वज ॥ ११३ ॥

अन्त्यवर्तिसज्ञापददीपकालकार ।

शास्त्र धर्मस्य सवृद्धयै स च पुण्यस्य तच्छिष्य ।

सा श्री रायमहीनाथे मुखस्य खलु जायते ॥ ११४ ॥

इति दीपकत्वेऽपि पूर्वपूर्वापेक्षया वाक्यमाला प्रयुक्तेति  
मालादीपकम् ।

श्रिय विपक्षवर्गस्य वर्धयन्ति जलानि वै ।

ह्यामयन्ति नृसिंहस्य मन्त्रा पञ्च सुनिश्चिता ॥ ११५ ॥

क्रियाया परस्परविरोधाद् विरुद्धार्थदीपकम् ।

मनोवेगयुना सत्त्वा दिव्यलक्षणभूषिता ।

दिवि भान्ति पतङ्गाश्वा भुवि रायतुरगमा ॥ ११६ ॥

मनोवेगादिधर्मेण उभयेषा समानाना भानुक्रियासम्बन्धात् श्लिष्टार्थ-  
दीपकम् ।

कान्तास्य वरमीक्षते घनकुचद्वन्द्वं स्पृशत्युन्नतं

श्लिष्यत्यङ्गं मनङ्गतन्त्रविदिय श्रीरायबङ्गो दरम् ।

चुम्बत्यङ्गति भावयत्यमति सस्त्रीणाति समोदते

जानीते विनयत्युदेति कुरुते सभाषते भासते ॥ ११७ ॥

नान्यक्रियाणामेककर्तृकारकेण सबन्वादेकार्थदीपकम् ।

अब्ज कूर्ममनङ्गराजशरधि कामेभसद्वन्धना-

लान सिंहमपूर्वसारसरसी नाग गिरि वल्लग्निम् ।

शङ्ख शीतकर तिलस्य कुसुम वज्र प्रवाल क्षण

चापं भृङ्गतर्ति मयूरमसम दृष्ट्वा सदा मोदते ॥ ११८ ॥

श्रीरायबद्ध इति अध्याहार कर्ता । एतदन्यक्रियादीपक प्राक  
प्रदर्शितमपि भावचमत्कारसंभवात्पुन प्रदर्शितम् । अनग्रा दिशा  
विचक्षणैर्दीपकान्तराण्यभ्यूहानि ।

यत्रार्थस्य स्वरूपेण विद्यमानस्य कल्पना ।

अन्यथा तमलकारमुत्प्रेक्षाख्य प्रचक्षते ॥ ११९ ॥

नून प्रायो ध्रुव शङ्के मन्ये सत्यमिवादिभि ।

शब्दे प्रकाश्यते सेयमुत्प्रेक्षा कविपुङ्गवे ॥ १२० ॥

वाच्या प्रतीयमानेति सा चोत्प्रेक्षा द्विधा मता ।

मन्ये शङ्के ध्रुवादीना प्रयोगे प्रथमा मता ॥ १२१ ॥

मन्ये शङ्के ध्रुवादीना शब्दानामप्रयोगत ।

प्रतीयमानोत्प्रेक्षा तु द्वितीया विबुधैर्मता ॥ १२२ ॥

वाच्योत्प्रेक्षा पुन प्रोक्ता षट्पञ्चाशद्विधा बुधै ।

प्रतीयमानोत्प्रेक्षाष्टचत्वारिंशद्विधा मता ॥ १२३ ॥

तदुदाहृतिरन्यत्र बोद्धव्या बुद्धिगालिभि ।

मूलभेदौ निरूप्येते द्वाविमौ सग्रहत्वत ॥ १२४ ॥

शशधरसुरगङ्गा क्षीरवाराशिमुख्यान्

धवलगुणविशिष्टान् केचिदाहु स्वतोऽमून् ।

तव विशदयशोऽशस्पर्शनादर्जुनास्ते

मुकुविबिनुतवङ्गक्षमाप मन्ये सदाहम् ॥ १२५ ॥

स्वभावेन धवलाना चन्द्रादीना कीर्त्यशस्पर्शनाद् धावत्य-  
मन्यथा कल्पितम् । इय वाच्योत्प्रेक्षा ।

तव तेजोगुण लब्धु बालभानुरय पुन ।

पुन पूर्वोद्दिमारुह्य वसतीव तपस्यलम् ॥ १२६ ॥

क्रियायोगिना इवशब्देन व्यञ्जितोत्प्रेक्षा इयमपि वाच्योत्प्रेक्षा ।  
प्रतीयमानोत्प्रेक्षायास्तु (? गुरुत्वा) निशयाभावादुदाहरण पूर्वशास्त्रे  
न कृतमिति नास्माभिरपि कृतम् ।

प्रस्तुतीकृत्य यत्किञ्चिद्वस्तुनस्सिद्धये पुन ।

अन्यस्यार्थस्य योग्यो योऽर्थान्तरन्यास एव स ॥ १२७ ॥

कीर्तिप्रतापौ रायेण भुवनत्रयवर्तिनौ ।

लब्धौ पुण्यवता केन किं पुमा न लभ्यते ॥ १२८ ॥

विश्वव्यापिनामार्थान्तरन्यास ।

वक्षोरङ्गनिवासिनी श्रियमिमा कृत्वा मुखाब्जस्थिता

वाग्देवी जयकामिनी विलमिता दोर्दण्डसद्यस्थिताम् ।

कान्दम्बक्षितिपे स्थिते वरयशस्कान्ता गृहान्निर्गता

लोके स्त्री महते विवर्धनगता का वा सपत्नी श्रियम् ॥ १२९ ॥

अयमपि विश्वव्यापी ।

श्रीकामिरायबङ्गोऽय कलौ काले सता मुदम् ।

उत्पादयति शीताशु कलावपि मुदे न किम् ॥ १३० ॥

विशेषस्यार्थान्तरन्यास ।

कान्तास्यचुम्बने सक्तो रायेन्द्रो याति समदम् ।

पद्मिन्या पङ्कजासक्तो भ्रमर किं न तुष्यति ॥ १३१ ॥



श्लिष्टार्थान्तरन्यास । भ्रमर मधुकर कामुक इति ध्वनि ।  
मधुद्रो भ्रमरश्चेति द्वाविमौ कामुकेऽपि च ।

नृसिहोऽप्यभय दत्ते श्रीरायो जगता सदा ।

लोके विचित्रशक्तीना वस्तूना शक्तिरीदृशी ॥१३२॥

विरुद्धार्थान्तरन्यास ।

नीतियुक्तोऽपि रायस्य विक्रमो वैरिणा मन ।

सतापयति शत्रूणा पूर्वपाप हि तादृशम् ॥१३३॥

अयुक्तार्थान्तरन्यास ।

तिलकाङ्कितरायास्य मोदयत्यङ्गनाजनम् ।

साङ्कचन्द्रसम तोषवर्धन युज्यते ननु ॥१३४॥

युक्तार्थान्तरन्यास ।

रायप्रतापभानुस्तान् सनापयतु वैरिण ।

कीर्तिचन्द्रो धुनोतीमान् किं किं युक्त सदीपिण ॥१३५॥

युक्तायुक्तार्थान्तरन्यास ।

कीर्तिज्योत्स्नापि तापाय न किं तेजो वनानल ।

धुनोति चन्द्रपक्षञ्चेद्वह्निपक्षो दहेन्न किम् ॥१३६॥

विपर्ययार्थान्तरन्यास ।

जगत्यर्थान्तरन्यासभेदा अन्येऽपि सन्ति हि ।

तेषा निदर्शनं ज्ञेयं यथाशास्त्रं विचक्षणं ॥१३७॥

शब्दस्य वा प्रतीतेर्वा 'मादृश्ये' विषये सति ।

वस्तुनोर्भेदकथनं व्यतिरेकस्तयो पुन ॥१३८॥

जगन्मोहनरूपेण कुसुमास्त्रस्य सनिभ ।

रायबङ्गस्ततस्तस्य भेदो दृश्यत्वधर्मत ॥१३९॥

१ नादृश्ये

रायबङ्गवर्तिना दृश्यत्वधर्मेण भेदकथनादुभयगतभेदस्य प्रतीति-  
सिद्धत्वादेकव्यतिरेकालकार ।

यश प्रतापी भवतो जगद्व्याप्तौ कविस्तुतौ ।

यश शारदचन्द्राभ बालभानुसम पर ॥१४०॥

यश प्रतापोभयभेदसाधकवावल्यरक्तत्वधर्मद्वयस्य पृथक्कथनादुभय-  
व्यतिरेकालकार ।

उन्नतस्थानवृत्तोज्ज्वलतेजस्व्यपि महानपि ।

राय त्वत्समता याति न भानू राहुपीडित ॥१४१॥

साक्षेपव्यतिरेकालकार ।

धरन्नपि महाभाग्यजनिता पूर्णसपदम् ।

एकदिक्पालनादिन्द्रस्त्वत्तो राय निरुध्यते ॥१४२॥

सहेतुव्यतिरेकालकार ।

उक्तव्यतिरेकालकारपञ्चक शब्दोपात्तसादृश्यम् । बालातप प्रतापश्च  
धरतो भेदमीदृशम् । बालातपो भानुवर्तो प्रतापस्त्वयि वर्तते ।  
रक्तत्वधर्मेण प्रतीयमानसादृश्ययोर्बालातपप्रतापयोर्भेदकथनात्प्रतीय-  
मानसादृश्यभेदमात्रव्यतिरेकालकार ।

सकलङ्को निराधार कलाहीनश्च चन्द्रमा ।

श्रीरायबङ्गभूमीश त्वत्सम कथमुच्यते ॥१४३॥

जगदानन्दजनकत्वजगत्सतापहारित्वादिधर्मेण प्रतीयमानसादृश्ययो-  
श्चन्द्ररायबङ्गयोर्मध्ये रायबङ्गस्याधिक्योपेतभेदकथनादाधिक्योपेत-  
भेदलक्षणव्यतिरेकालकार ।

कादम्बरायो मारश्च रूपवन्तौ मनोहरौ ।

राय मिहध्वजो मारो मीनकेतुर्विराजते ॥१४४॥

२ आक्षेपालङ्कार ।

शब्दोपात्तसादृश्ययो श्रीरायमारयो सदृशध्वजद्वयस्य भेदगमकत्वा-  
त्सदृशव्यतिरेकालकार ।

राय कादम्बनाथोऽय नारीलोलदृगोक्षित ।

कुसुमास्त्रधरो भाति रतिदेवीदृगर्कित ॥१४५॥

प्रतीयमानसादृश्ययोर्मराराययो सदृशरतिलोचननारीलोचनानां  
भेदगमकत्वादपर सदृशव्यतिरेकालकार ।

मुरराजश्रियो रम्य भोगीन्द्रमुखलालितम् ।

रायस्य राज्यं क्रमते प्रजापालनभासुरम् ॥१४६॥

रावराज्यं प्रजापालनभासुरत्वेन राज्यजातेस्तुल्य सुरेन्द्रविभूति-  
भोगीन्द्रमुखलालितत्वेन भिन्नमिति सजातिव्यतिरेकालकार ।

प्रकृत कारणं त्यक्त्वा यत्र हेत्वन्तर मतम् ।

विभाव्यते स्वभावो वा यत्र सा हि विभावना ॥१४७॥

अचन्द्रा चन्द्रिका कीर्ति प्रतापो भानुना विना ।

बालातपो मुख चन्द्रो क्षीराब्धेस्ते नृमिह भो ॥१४८॥

चन्द्रादिकारण परित्यज्य कीर्तिचन्द्रिकादे श्रीरायनामकारणान्तर-  
कल्पनात्कारणान्तरकल्पनाविभावना ।

अकारणमहाबन्धुरकारणसहृद्भवान् ।

अकारणदयालुश्च जनानां रायभूपते ॥१४९॥

अकारणपदेन हेतु निराकृत्य स्वभावेन बन्धुत्वादिकथनात्स्वभाव-  
विभावना ।

प्रतिषेधस्य कथन प्रतीतिर्वा प्रजायते ।

स यत्राक्षेप इत्युक्तस्त्रिधा कालत्रयाश्रयात् ॥१५०॥

१ भास्करम् २ आचन्द्रा ।

रायौ रणाङ्गणेऽरीणा जल प्रविशता तृणम् ।  
दशता कृतबल्मीकारोहणान्न व्यधादधम् ॥१५१॥

अतीताक्षेपालकार ।

कृतो ललाटे तिलक करोति नृपरायराट् ।  
साङ्गमिन्दु स्वकीयस्य सममिच्छति किं कृती ॥१५२॥

वर्तमानाक्षेपालकार ।

सापराधो नृपो राय कान्ताडम्बरकोपत ।  
भीत्वा रतगृहं रम्य सोत्कण्ठोऽपि न यास्यति ॥१५३॥

अनागताक्षेपालकार ।

कीर्तिचन्द्रातपे शैत्यं न मर्त्यं तव रायराट् ।  
यदि सत्य विपक्षाणां सतापयति किं पुन ॥१५४॥

शैत्यविरोधिना मतापकर्मणा केनचित्पुसा शैत्यधर्मस्य आक्षिप्तत्वाद्ध-  
र्माक्षेपालकार ।

रायवङ्गस्य कीर्तिर्वा नेति को बुध्यते भिदाम् ।  
दृश्यते शुद्धधावल्यप्रभा जगति नाश्रय ॥१५५॥

धावल्यप्रभालक्षण धर्ममाश्रित्य कीर्तिरूपो धर्म्याक्षिप्त इति  
धर्म्याक्षेपालकार ।

राय कल्पान्तक युद्धे दृष्ट्वापि रिपवोऽवशा ।  
भयं न यान्ति बल्मीकतृणपानीयमश्रिता ॥१५६॥

भीते कारणं वधो बल्मीकाद्याश्रितैर्वैरिभिर्निषिद्ध इति कारणाक्षेपा-  
लकार ।

रायस्यायल्लके ज्योत्स्नाहिमाम्बुमलयानिल- ।  
कर्पूरसगमेऽप्यस्या शीतभावो न जायते ॥१५७॥

१ रिपवोवदा ।

चन्द्रातपादिवस्तुसंगमे कारणे सनिहितेऽपि शैत्यकार्यं न जातमिति  
कार्यक्षेपालकार ।

रणे गृहीतो रायेण रिपुवर्गो वदत्यलम् ।

वधाभिलाषो यदि ते हन्तव्यो रणभैरव ॥१५८॥

हन्तव्य इत्यङ्गीकारमुखेनैव काक्वा स्ववधो निषिध्यत इत्यनुज्ञाक्षे-  
पालकार ।

कलौ काले महादुष्टौल्लुण्टाकादिकदुर्जनान् ।

निराकरोति श्रीराय प्रभुत्वेनैव राजते ॥१५९॥

आदिपदेनैव दुर्जननिषेधात् प्रभुत्वाक्षेपालकार ।

स्थितिर्वा ते गतिर्वा ते रमणास्तु ममाकृति ।

द्रष्टुं न शक्यते पञ्चानन्दे तत् सुविचार्यताम् ॥१६०॥

इति वदन्त्या नायिकया सादर वचनं प्रयुक्तमिति सामर्थ्यादिनादरो  
निषिद्ध इति अनादराक्षेपालकार ।

पश्य पश्यमि चेदन्यामस्तु तद्दर्शनं शुभम् ।

यावदागमनं तावत्तच्चिन्तास्तु मम प्रिय ॥१६१॥

इति वदन्त्या कान्तयाशीर्वचनमुखेन काक्वा कान्तगमनं निषिध्यत  
इत्याशीर्वचनाक्षेपालकार ।

दास्यामि हारं गन्तव्यं त्वया तुभ्यं नमो नमः ।

अन्यथा वामपादो मे तव बुद्धिं वदिष्यति ॥१६२॥

इति ब्रुवाणयातिरक्तया कान्तया गमनसहायताकरणव्याजेन  
प्रियप्रयाणं निषिद्धमिति साचिव्याक्षेपालकार ।

याहि याहि निजेश त्वं मम यत्नस्तथैव भो ।

तव प्रयाणे पाथेयं प्रागेव विहितं मया ॥१६३॥

प्रियगमनकार्ये यत्नकरणव्याजेन प्रियया निजेशगमन निषिद्धमिति  
यत्नाक्षेपालकार ।

क्षणालिङ्गनविघ्नाय रोमहर्षायि कुप्यता ।

प्रेम्णा निषिद्ध गमन तवेश न मया पुन ॥१६४॥

प्रेमाधीनतया कान्तया निजेशगमन निषिद्धमिति परवशाक्षेपालकार ।

पुनरुज्जीवनोपाय सजीवनमहापदम् ।

दत्त्वा याहि निजेश त्व कन्दर्पो मा हनिष्यति ॥१६५॥

जीवनोपायदुर्घटत्बनिवेदनव्याजेन निजेशगमन निषिद्धमित्युपाया-  
क्षेपालकार ।

यामोति वचन नाथ ते मुखान्निर्गत वरम् ।

याहि वा वस<sup>१</sup> यत्त्वत्तो मम किञ्चित् फल न हि ॥१६६॥

अत्यधिकस्नेह्या<sup>२</sup> सकोपया मुकान्तया कान्तगमनं निषिद्धमिति  
रोषाक्षेपालकार ।

स्पृष्ट मया न ताम्बूल न दृष्ट स्वदित न वा ।

<sup>३</sup>शून्य तवास्तु नष्ट वा मार्जारो वास्तु मत्प्रिय ॥१६७॥

प्रागनागत्य पुनरागतेन जीवितेशेन सहैवमुक्त्वा कान्तया ताम्बूलस्य  
सानुक्रोश दोषोद्भावन कृतमित्यनुक्राशाक्षेपालकार ।

कलौ काले प्रजा धर्म नाचरन्ति न चासते ।

न्यायमार्गे अहो कष्ट<sup>४</sup>मनुशोचति हि रायराट् ॥१६८॥

धर्मपालचूडामणिना रायघरणीयेन कलौ प्रजाना धर्माचारव्यावृत्त्या-  
दिक दृष्ट्वा पश्चात्ताप कृत इत्यनुशयाक्षेपालकार ।

१. मत्त्वतो २. सकोपयासि कान्तया ३. शून्यास्तगस्तु ४. मनु-  
शेषते ।

विपक्षतमसा शत्रौ सुहृत्पक्षप्रकाशके ।

रायप्रतापमार्तण्डे सति किं भानुना भुवि ॥१६९॥

साम्यं दर्शयित्वा मुख्यभानुनिषिद्ध इति श्लिष्टाक्षेपालकार ।

किमियं चन्द्रिकाहोस्वित् कीर्ति किं रायभूभुज ।

रात्रावह्निं च दृश्यत्वात् कीर्तिरेव न चन्द्रिका ॥१७०॥

सदादृश्यत्वधर्मेण चन्द्रिका निषिध्यते इति सशयाक्षेपालकार ।

कृत्वापि दानं जगतो न तृप्यति हि रायराट् ।

इष्टं दत्त्वापि भुवने न तृप्यति सुरद्रुम ॥१७१॥

अर्थान्तराक्षेपालकार ।

कादम्बराय कीर्तिस्ते कविराजैर्न वर्ण्यते ।

वाचामगोचरत्वात्ता दृष्ट्वा नन्दन्ति मानसे ॥१७२॥

हेत्वाक्षेपालकार ।

कादम्बक्षितिपस्य तीर्थममले गौरीशगौरं हृदि

श्रीनाथामरनाथ कर्णं नृपते पुष्पायुध क्षमापते ।

भोगीन्द्रार्जुन धर्मराजनृपते भानो सुधाशो गुरो

वार्धे मेरुगिरीन्द्र चन्दनतरो भूमौ नभो मा कुरु ॥१७३॥

गर्वरूपधर्मनिषेधाद् धर्माक्षेपालकार । भावचमत्कारसभवात् पुनरप्युक्त ।

अन्ये विकल्पा द्रष्टव्या आक्षेपाणां विचक्षणं ।

मया शास्त्रानुसारेण दिग्मात्र संप्रदर्शितम् ॥१७४॥

मनोवद् वक्तुरिष्टस्योत्कर्षं वक्तुं निरूप्यते ।

यत्रासभवि सा सिद्धिरुच्यतेऽतिशयाभिधा ॥१७५॥

१ मनो वक्तुमिष्टं ।

तव कीर्तिमहालता जगत्सुरभूजाग्रगता स्तुतादिकैः ।

अवलम्बपद विलोकते यवनस्तुत्यनृसिंहभूपते ॥१७६॥

कीर्तैरुत्कर्षकथनार्थमसभविलोकाग्रगमन लोकमतिक्रम्य गमनेच्छया  
विलोकन च कथितमित्यतिशयोक्ति ।

किमास्य शारद चन्द्रबिम्ब किं हसन तव ।

किं किं ज्योत्स्नेति रायस्य सदेहो जायते नृणाम् ॥१७७॥

आस्यहमनयोरुत्कर्षकथनाय वदनचन्द्रयोर्हसनचन्द्रिकयोर्भेत्तु शक्य-  
त्वेऽपि सशयपूर्वको विवेचनाभावो सभवी कथित इति मशयातिश-  
योक्ति ।

रणभेरीरव श्रुत्वा रायस्य जयशमिनम् ।

जय निश्चित्य दिक्कन्या गायन्ति जयकामिनीम् ॥१७८॥

निश्चयातिशयोक्ति ।

महाकवीना विस्तीर्ण हृदय जगदद्भुतम् ।

लोकादिर्वनिमत्कीर्तिविक्रमादरता गतम् ॥१७९॥

अद्भुतातिशयोक्तिर्विरोधातिशयोक्तिर्वा ।

आकारेणैङ्गितेनापि सूक्ष्मत्वाल्लक्ष्यते यदा ।

तदार्थो यत्र सप्रोक्त सूक्ष्म इत्याख्यया बुधै ॥१८०॥

सुरतसदननार्या रायवङ्गोऽनुयुक्त

क्व गत इति तदामौ भीतिमान् पृष्ठतोऽगान् ।

निजपतिहृदय साकारभेदेन बुद्ध्वा

वम वस वम तत्रैवेति वाच ब्रवीति ॥१८१॥

प्रियया प्रियेण कृतो नायिकान्तरसगम प्रियस्य पृष्ठगमनाकारेण  
सभयेन सूक्ष्म ज्ञात इति सूक्ष्मालकार ।



यत्र प्ररूपित वस्तु स्वसमानस्य वस्तुन ।

विदधाति प्रतीतिं सा समासोक्तिः सता मता ॥१८२॥

भो भो कल्पतरो त्वमत्र भुवने पुष्पासि सर्वान् जना-

नाकल्प तव कीर्तिवस्तु विदुषा स्तुत्य पर तिष्ठतु ।

काकोलूकपरेण निम्बतरुणानेनालमन्ये च ये

वृक्षा सन्ति बहुत्वधर्मसहितास्ते सन्तु मा सन्तु वा ॥१८३॥

अत्र कथित कल्पतरु स्वसदृश रायबङ्ग ज्ञापयति, निम्बतरु स्वसमान नीतिशून्यनृप, परे च तरु स्वसदृशभूपबाहुल्यसूचयन्ति तत्तद्विशेषणमुक्तानुक्तयो सममिति समानविशेषणभिन्नविशेष्य-समामोक्ति ।

मतापहारी चन्द्रोऽय कलामृतविराजित ।

अकलङ्क मदोद्भामी मया पुण्येन लभ्यते ॥१८४॥

अत्र कथितश्चन्द्र स्वसम रायबङ्ग गमयति, सतापहरण कलामृत-विराजन चन्द्रे राये च ममम्, अकलङ्कत्व सदाभासन रायनृपे न चन्द्र इति भिन्नाभिन्नविशेषणसमामोक्ति ।

मनिमेष सुराधीशो निष्कलङ्क सुधाकर ।

वदन्कल्पतरुलब्ध केनचिद्बहुपुण्यत ॥१८५॥

अत्र रायनृपसमानानामिन्द्रादीना निर्निमेषत्वादिधर्म निराकृत्य सनि-मेषत्वाद्यपूर्वधर्म निरूप्य रायबङ्गप्रतीतिसमर्थनादपूर्वसमासोक्ति ।

अस्यालंकारस्य अन्यापदेश इति नामान्तर वक्तव्यम् ।

अर्थस्य गोपन वाचा चेष्टया वा प्रकाशनम् ।

लेशतो लव इत्युक्त सद्भिनिन्दास्तुति परे ॥१८६॥

पूर्वाद्रि गतबालभानुमधुना तेजस्विन बीक्ष्य त

पञ्चास्यासनयातबङ्गनृपती कोप प्रयाते सति ।

शैलाग्रे स्थितवानहं तव गुणं तेजोऽभिधान तपो  
लब्धुं वै विदधामि चारुवचसां प्रासादयत्तं नृपम् ॥१८७॥

वचोगोपनलेशालकार । निन्दास्तुतिर्वा ।  
सेवार्थमागतमहाधरणीश्वराणा-  
मालोकनेन करुणास्मितभाजनेन ।  
सिंहामने स्थितवता नृपकुञ्जरेण  
चेत प्रसत्तिरमला प्रकटोकृताभूत् ॥१८८॥

चेष्टाप्रकाशनलेशालकार ।  
उक्तानां यत्र वाच्यानां योगो वाच्यान्तरे सह ।  
क्रमेण कथित सोऽत्र क्रमालकार उच्यते ॥१८९॥  
रूप वचोऽधररस स्तनकुम्भयुग्म  
नि श्वासगन्धविषय तरुणीतनुस्थम् ।  
आलोकनश्रवणपानसमागमोरु-  
घ्राणक्रियाभिरनुभूय मुखी नृपोऽभूत् ॥१९०॥  
क्रमालकार ।

भ्रूलोचनकटाक्षान् वै रायस्वालोकन कामिनी ।  
चापभृङ्गशरान्मत्वा जायते भयबिह्वला ॥१९१॥

अयमपि क्रम ।  
बुद्धेर्महत्त्व भूतेर्वा तन्यते यत्र कोविदे ।  
उदात्त तमलकार वदन्ति कविपुङ्गवा ॥१९२॥  
काले कलौ स्वहितमङ्गलचारुबुद्ध्या  
पाति प्रजा करुणया न बिभेति शत्रो ।  
शीताशुभानुसमनीतिपराक्रमाभ्या  
जेजीयतेऽरिर्नृपतीभघटामृगेश ॥१९३॥

१ प्रच्छन्नवास्ता कृद ।

बुद्धिमहत्त्वोदात्तालकारः ।

आस्थानमण्डपगते सुरशैलतुङ्गे

सिंहासने मदनरूपनृसिंहबङ्गः ।

आस्ते सता फणिपतिर्वरसार्वभौमो

गोर्वाणराज इति वाखिलमन्यमान ॥१९४॥

ऐश्वर्यमहत्त्वोदात्तालकारः ।

सत्यरूपमपह्नुत्य यत्रान्यार्थो निरूप्यते ।

अपह्नुनवमलकार तमाहुः काव्यकोविदा ॥१९५॥

अय श्रीरायबङ्गो न क्षीरवाराशिरेव वै ।

अन्यथा वरगाम्भीर्यगुणशाली कथं भवेत् ॥१९६॥

रायबङ्गत्वलक्षण स्वरूपमपह्नुत्य क्षीराम्बुधित्वस्य पररूपस्य  
निरूपणात् स्वरूपापह्नुनवालकारः ।

अय श्रीरायबङ्गो न समुद्रनवनीतकः ।

कादम्बक्षीरवाराशेरुत्पत्तिर्षट्ते कथम् ॥१९७॥

अयमपि पूर्वं एव ।

अय श्रीरायबङ्गो न सुरभूजोऽन्यथा कथम् ।

समस्तजनसकल्पदायको जाघटीत्ययम् ॥१९८॥

अयमपि तथैव ।

युद्धरङ्गत्रिनेत्रोऽय रायबङ्गमहीपतिः ।

कल्पान्तसमवर्त्येव किलान्यत्र दयानिधिः ॥१९९॥

दयानिधित्व परेष्वभ्युपगम्य स्वेषु रिपुवर्गेण तस्य प्रलयान्तकत्व-  
दर्शनाद्विषयापह्नुनवालकारः ।

उपमालङ्कृतौ पूर्वमुपमापह्नुनव स्मृतः ।

अन्यापह्नुतिभेदानां विस्तरो लक्ष्यता बुधैः ॥२००॥

१. कादम्बक्षीरवाराशो उत्पत्तिः ।

यत्र प्रियतरा वाणी प्रेमाधिक्यप्रकाशिनी ।  
 निरूप्यतेऽसौ विद्वद्भिः प्रयोऽल्लकार उच्यते ॥२०१॥  
 तरुणि चरणघातो मल्लिकापुष्पसङ्ग-  
 स्तव घनकुचघात कौमुदीस्पर्शकल्प ।  
 सरसमधुरकाञ्ची दामबन्ध प्रबन्धो  
 वदति सुरतकेल्या रायबङ्गक्षितीन्द्र ॥२०२॥

प्रेयोऽल्लकार ।

उक्तार्थानां विरुद्धत्व यत्र वाक्ये परस्परम् ।  
 शब्दार्थविहित नास्ति तत्त्वतः स विरोधक ॥२०३॥  
 कलाधरो न शीताशुस्तेजस्व्यपि न भास्कर ।  
 अभीष्टदो न मन्दारो रायबङ्गो गुणाम्बुधि ॥२०४॥

शब्दकृतविरोध ।

उत्तुङ्गोऽपि न मेरुर्न तापहृच्चन्दनद्रुम ।  
 श्रीमानपि न गोविन्द कादम्बाम्बुधिचन्द्रमा ॥२०५॥

अयमपि शब्दकृत एव ।

दयालुना पुण्यजनेन चापि देवेन सुज्ञातगुणेन तेन ।  
 श्रीरायबङ्गप्रभुणा विपक्षा जिता सुलोका परिपालिताश्च

॥२०६॥

अयमपि तथैव ।

श्रीरायक्षितिनाथ येन समये प्रस्थानभेरी महा-  
 कोणेन प्रहता जना रिपुहरे भीत्वाध्वनन्त्यद्रभुतम् ।  
 लोकेषु ध्वनिमत्सु तेषु धरणीभृद्भित्तयो दिग्गज-  
 व्रातस्य श्रुतयो विमानततयो भिन्ना वितीर्णा भृशम् ॥२०७॥

अयमर्थकृतविरोधाल्लकार ।

शृङ्गारादिरसाना तु नवाना यत्र कथ्यते ।  
 रूपोत्कर्ष पृथक्सोऽप्यल्लकारो रसवान् भवेत् ॥२०८॥

तरुण्या देहलावण्ये स्नात्वा स्नात्वा प्रमोदते ।

अधरामलपीयूषं पीत्वा पीत्वामरायते ॥२०९॥

शृङ्गाराख्यरसवदलकार ।

रणसद्यनि शत्रूणां वर्गं दत्त्वा बलिं धराम् ।

सागरान्ता विजित्याय रायशूरो विराजते ॥२१०॥

युद्धवीररसाख्यरसवदलकार ।

कृत्वा तृप्त जगत्सर्वं सुरागं विपिनद्रुमम् ।

कृत्वा दानेन महता पात्रं नास्तीति मन्यते ॥२११॥ \*

रायबङ्ग इति कर्तुरध्याहार । दानवीररसाख्यरसवदलकार ।

दृष्ट्वा शान्तिजिनं नत्वा स्तुत्वा स्मृत्वा समर्च्य च ।

आनन्दक्षीरवारीशौ रायबङ्गो निमज्जति ॥२१२॥

धर्मवीररसाख्यरसवदलकार ।

आयल्लकानलो दग्ध्वा तन्वङ्गी पीडयत्यहो ।

इति दूतीवचं श्रुत्वा करुणाब्धौ निमज्जति ॥२१३॥

राय इति कर्ता । करुणाख्यरसवदलकार ।

मक्षिकाजालपूयाद्रंघ्रणकोटियुतान् रिपून् ।

भिक्षार्थमागतान् दृष्ट्वा जनो वमति राय ते ॥२१४॥

बीभत्साख्यरसवदलकार ।

पश्चादगतेशबिम्बं सालोक्य चुम्बति दर्पणे ।

मत्वा निजेश श्रीरायं दृष्ट्वा हसति कौतुकात् ॥२१५॥

हास्याख्यरसवदलकार ।

रायारामस्थितान् वृक्षान् स्वनन्दनगतान् बहून् ।

दृष्ट्वावचिनुते पुष्पाण्यमरेन्द्रो विलासतु ॥२१६॥

अद्भुताख्यरसवदलकार ।

रायस्य दोर्बलं स्मृत्वा रिपुवर्गो गुहास्थितः ।

भीतो गच्छामि कुत्रेति भयज्वरगतो मृतः ॥२१७॥

भयानकाख्यरसवदलंकारः ।

कादम्बरायभूपस्य क्रोधाग्नौ विक्रमार्चिषि ।

दग्धवैरीन्धने लोकं व्याप्ते शुष्यन्ति वार्धय ॥२१८॥

रौद्राख्यरसवदलंकारः ।

देवसेवनकालेऽस्य रायबङ्गस्य चेतसि ।

शीते शान्तरसे व्याप्ते शीतिभूतं जगत्त्रयम् ॥२१९॥

शान्तरसाख्यरसवदलंकारः ।

रसवत्त्व गिरां लोके रसनैवभिरुच्यते ।

रसरष्टभिर्रित्येके शान्तवर्ज्यैर्वदन्त्यलम् ॥२२०॥

उत्कर्षो यत्र गर्वस्य कथ्यते मानशालिनाम् ।

तमलकारमूर्जस्विनामान मन्यते बुध ॥२२१॥

पीत वारिधिसप्तक जगदिदं हस्तेन संचारित

भोगोन्द्रस्य किरीटवर्तिमणय शोर्णिकृता पर्वता ।

सचूर्णा विहिता मयेति कदने यो वक्ति गर्व निजं

त जित्वा नृपकुञ्जरो विजयते कादम्बवशोत्तम ॥२२२॥

ऊर्जस्व्यलंकारः ।

यत्राप्रस्तुतवस्तूना वर्णना क्रियते जने ।

निर्विण्णमानसैस्तच्चाप्रस्तुतागसनं विदुः ॥२२३॥

हरिततृणं भक्षिणोऽग्नी हरिणा हर्षैर्वसन्ति पीतजला ।

इति वक्ति रायवङ्गक्षितिपतिशत्रुव्रजो वने सोऽयम् ॥२२४॥

रायनृपतिना तिरस्कृतत्वान्निर्विण्णमानसेन शत्रुवर्गेण हरिणानाम-  
प्रस्तुताना प्रशसा कृता यस्मात्तस्मादप्रस्तुतप्रशसालंकारः ।

१ रित्येते । २ भक्षिणो मि हरिणा हर्षैर्वसन्ति पीतजला ।  
३ वनसोऽयम् ।

देशोऽयं स्वर्गभूमिर्नृपसदनमिदं देवराजस्य मेहं

कान्तेयं कामभार्या मदभरितगजो दिग्गज सार्वभौम ।

अश्वोऽयं शक्रसप्तिः सुरतरुमलो जैनघर्मो जिनेन्द्रो

देवोऽयं रायबङ्गक्षितिपतिरघुना दिव्यपुण्यो विभाति ॥२२५॥

येन केनचित् कारणेन निर्विण्णचित्तं कश्चित् पुमानस्य नृपस्य  
विभूतिं धृत्वा वर्णयति तस्मादियमपि अप्रस्तुतप्रशसा ।

यत्र वैकल्यकथनं गुणादीना विधीयते ।

विशेषदर्शनार्थं सा विशेषोक्तिर्निरूप्यते ॥२२६॥

न शीतोऽपि यशोराशिजंगत्तापं हरत्यसौ ।

नोष्णोऽपि विक्रमं शत्रून् रायस्य दहति ध्रुवम् ॥२२७॥

शैत्वगुणवैकल्येऽपि जगत्तापहरणविशेषः । उष्णतागुणविकलत्वेऽपि  
वैरिदहनविशेषो यतस्ततो गुणवैकल्यविशेषोक्तिः ।

न कोकिला न वीणा वा न कीरा न च किन्नरी ।

कान्ता तथापि रायस्य चेतो हरति गानतः ॥२२८॥

कोकिलादिजातिवैकल्येऽपि कान्ता स्वरेण रायचेतोहारिणी यतस्ततो  
जातिवैकल्यविशेषोक्तिः ।

न कुप्यति न बध्नाति काञ्च्या कर्णोत्पलेन सा ।

न ताडयति रायेन्द्रं भयं नयति कामिनी ॥२२९॥

कोपनादिक्रियावैकल्येऽपि भयप्रापणमिति क्रियावैकल्यविशेष-  
कथनम् ।

सरससुरतयुद्धे विक्रमो नास्ति यस्याः ।

परमनिशितशस्त्रं नास्ति खेटादिकं च ।

मदनतुमुलयुद्धाघीशकादम्बनाथ

जयति सरसविद्या सा सती चित्रमेतत् ॥२३०॥

शस्त्रखेटादिद्रव्यवैकल्येऽपि जयति विशेषकथनमिति द्रव्यवैकल्य-  
विशेषोक्तिः ।

न सन्मित्र न सत्सगो न सम्यग्धर्मदेशना ।

तथापि पुण्यवान् रायो वसत्यानन्दसागरे ॥२३१॥

सन्मित्रादिसुखकारणवैकल्येऽपि पुण्यवानिति हेतुगर्भितविशेषणाद्धेतु-  
विशेषोक्तिः ।

अन्येऽपि भेदा सन्त्येव विशेषोक्तेर्विदावरै ।

अभ्यूह्या<sup>१</sup> शास्त्रमार्गेण विस्तरो न मयोच्यते ॥२३२॥

यत्र किञ्चित्समीकतुं युज्यते केनचित् क्रिया ।

एककाला समामो हि तुल्ययोगाभिधो भवेत् ॥२३३॥

स्तवन निन्दन चापि समाश्रित्य द्विभेदभाक् ।

अलकारस्तुल्ययोग कथ्यते विदुषा वरै ॥२३४॥

भरतस्सगरश्चक्री श्रेणिको बङ्गभूपति ।

श्रोतृमुख्यपद प्राप्ता भवन्ति भुवनत्रये ॥२३५॥

स्तुतिपरतुल्ययोगितालकार ।

चिन्तामणि कामधेनू रायबङ्ग. सुरद्रुमः ।

परोपकारे निरता इति रूढिर्जगत्त्रये ॥२३६॥

अयमपि पूर्वं एव ।

रायबङ्गक्षितीशस्य शत्रुजातश्रिय क्षणम् ।

सुरचापश्रियो विद्युन्मालालक्षा न चासते ॥२३७॥

निन्दापरतुल्ययोगितालकार ।

यत्र प्ररूप्यमाणेन वस्तुना तत्परत्वत ।

दृष्टार्थो गम्यते तद्विपर्यायोक्त सता मतम् ॥२३८॥

अस्मद्वैरिपुर त्वया बलपते श्रीमद्विधेय भूश

<sup>१</sup>कादम्बाम्बुचिन्दिरे निगदतीत्येव बलाधीश्वर ।

१ कादम्बाम्बुनि चन्दिरे



नानावज्रभुजङ्गकाञ्चनशिवामन्दारराजामरी—

स्त्रीविम्बार्कमयं ह्यदान्मदनकान्तावासमप्यद्भुतम् ॥२३९॥

पर्यायोक्तालंकार ।

गुणानां कर्मणा यत्र सहभाव प्ररूप्यते ।

सहोक्तिनामक प्राहुस्तमलकारमुत्तमा ॥२४०॥

रायस्य कीर्त्या धवल शत्रुकान्ताजन सह ।

विक्रमेषारुण सार्धं तत्कान्ताजनलोचनम् ॥२४१॥

गुणसहभावकथनसहोक्ति ।

श्रीरायक्षितिनाथ विक्रमगुणे नामा सदा वर्धते

वीरश्रीशरदभ्रकीर्तिवनिता त्यागेन साक तव ।

लक्ष्मी पुण्यपदेन साकममलज्ञानेन वाणी समं

कोशेनाहवदक्षदण्डनिकर संग्रामरङ्गोद्भुर ॥२४२॥

क्रियासहभावकथनसहोक्ति । अथवा

कार्यकारणयोर्यत्र वक्तुं युगपदुद्भव ।

कार्योत्पादनसामर्थ्यं ता सहोक्तिं प्रचक्षते ॥२४३॥

पुण्येन सार्धमाधत्ते धर्मं यानेन दिग्जयम् ।

त्यागेन कीर्तिं शौर्येण वीरलक्ष्मी च रायराट् ॥२४४॥

कार्यकारणसहजन्मकथनसहोक्ति ।

यत्राधत्ते पुनर्दत्त्वा किञ्चित्किञ्चित् समं न वा ।

तामाहुर्निपुणा लोके परिवृत्तिमलक्रियाम् ॥२४५॥

सुरलोके पुरी दत्त्वा रिरिपुभ्यः स्त्रीविराजिताम् ।

नरलोके पुरी हत्वा तादृशी भाति रायराट् ॥२४६॥

सदृशार्थपरिवृत्ति ।

१ विक्रमेषारुण सार्धं.... जनलोचनम् २ रिहभ्य ।

ज्ञान स्वीकुरु बङ्गराज विनय दत्त्वा गुरुभ्य सदा  
 पुण्यं स्वीकुरु देयवस्तुनिकरं दत्त्वा गुरुभ्य. सदा ।  
 वैरिभ्य सुरलोकसौख्यपदवी दत्त्वा तदीय महा—  
 देश स्वीकुरु युद्धरङ्गरमणीप्राणेश भूमीश भो ॥२४७॥  
 विसदृशार्थपरिवृत्ति ।  
 कार्यमारभमाणेन दैवात्तत्साधनागम ।  
 लभ्यते यत्र तत्प्राहुरलंकार समाहितम् ॥२४८॥  
 कोप निवारयितुमिष्टनिजाङ्गनाया  
 प्रारब्धवान् नृपतिकुञ्जरबडगनाथ ।  
 तावत् सुधाशुरुदयाद्रिमुपैति पूर्णो  
 रोरीति कोकिलगणो भगणश्चकास्ति ॥२४९॥  
 एकवाक्यमनेकार्थं यत्र श्लिष्टं तदुच्यते ।  
 अभिन्नपदमुद्दिष्टं श्लिष्टं भिन्नपदं द्विधा ॥२५०॥  
 'देवोऽयमम्बरोद्भासी लोकाह्लाद कविस्तुत ।  
 मरुत्सहायो राजाग्रे भासते भुवनोत्तम. ॥२५१॥  
 अभिन्नपदश्लिष्टम् ।  
 सदैव बलसपन्नो न दीनो जडसग्रह ।  
 कविरम्यो रायबङ्गो राजते मन्दरागत ॥२५२॥  
 भिन्नपदश्लिष्टम् ।  
 व्यतिरेकाद्यलंकारे श्लेषा प्राग् दर्शिता. परे ।  
 अन्ये केचन दृश्यन्ते श्लेषास्तत्कथनं यथा ॥२५३॥  
 आह्लादयन्ति<sup>१</sup> रायं च सानुरागा प्रजा प्रजा. ।  
<sup>३</sup> साकूत रक्षिता वृद्धा करमार्दवलालिता ॥२५४॥

१ देवोऽयमम्बरोद्भासि । लोकाह्लादी कविस्तुत २. रायस्य

३ साकूत ।

प्रजा जना. प्रजा. पुत्रा आह्लादयन्तीति क्रियंका अभिन्नश्लेषः ।

रायबङ्गो न दृश्यन्ते क्षिप्यन्ते च पयोधराः ।

उत्तुङ्गा अम्बराधारा मुक्ताफलविभूषिताः ॥२५५॥

अविरुद्धक्रियाश्लेषः ।

वियोगं प्राप्य रायेन्द्रो मोदते हृदये परम् ।

नारीजनस्तु क्लिश्नाति पयोधरसहायक ॥२५६॥

विरुद्धक्रियाश्लेषः ।

श्रीरामराज्ये काठिन्य तरुणीस्तनमण्डले ।

अपवादो निरोद्धयेषु काव्येषु न परत्र च ॥२५७॥

स्तनियमश्लेषः ।

मन्दानिला लुप्यन्ति दिव्योद्यानेषु सौरभम् ।

अथवा चञ्चरीकाश्च चोरयन्ति हि लोलुपाः ॥२५८॥

नियमनिषेधश्लेषः ।

रायबङ्ग समुद्रश्च भूभृदास्पदगौरव ।

गम्भीरो भूरिरत्नाढ्यो लावण्याढ्यो विराजते ॥२५९॥

अविरुद्धश्लेषः ।

पयोधरविलोलोज्यं नृसिंहश्चातकायते ।

सन्मानसगतो बङ्गो राजहसायते सदा ॥२६०॥

उपमाश्लेषः ।

अर्थयोर्यत्र समयोरन्वयः क्रिययाजनि ।

तन्निदर्शनमित्युक्त सदसल्लक्ष्मगोचरम् ॥२६१॥

सुजनसुरकुजोऽयं रायबङ्गक्षितीशो

वितरति फलमिष्टं सर्वलोकाय लोके ।

गगनतलनिवासी कौमुदीकामिनीशो

विलसदमृतदीप्तिं किं न लोकाय घत्ते ॥२६२॥

प्रशस्तनिदर्शनालकार ।

अन्याय इति शब्द च न वादयति बङ्गराट् ।

अपशब्द स्वशिष्यौघ न वादयति शाब्दिक ॥२६३॥

अप्रशस्तनिदर्शनालकार ।

निन्दाव्याजेन यत्रार्थं स्तौति कचिच्च सा मता ।

व्याजस्तुतिगुणा एव दोषा इव चकासते ॥२६४॥

वक्षोरङ्गे महाश्रीर्वरमुखकमले शारदा वीरलक्ष्मी-

दोर्दण्डे रायबङ्गक्षितिप तव महाशासनाद्वर्ततेऽसौ ।

आज्ञामुल्लङ्घ्य लोके तव विशदयशस्कामिनी बम्भ्रमीति

राज्ये सेय तवाज्ञा सुकविजननुता तत्कथ जाघटीति ॥२६५॥

व्याजस्तुत्यलंकार ।

देवताघ्निसस्तुत्या कीर्तिं सशोभते कथम् ।

सागरान्ता धरा कान्ता कथं जीवति राय ते ॥२६६॥

श्लिष्टव्याजस्तुति ।

व्याजस्तुतिविशेषाणामपर्यन्तं प्रविस्तर ।

बुद्धिशालिभिरभ्युह्यस्तस्मान्नास्माभिरुच्यते ॥२६७॥

इष्टानां यत्र वस्तूनामाशसनमिदं मतम् ( ? 'मिदं च यत् ) ।

तामाशिषमलकारं वदन्ति कविकुञ्जरा ॥२६८॥

सुरेन्द्रपूज्यं परिपूर्णसौख्यं

सुज्ञानसाम्राज्यमहापदस्थं ।

जिनेन्द्रचन्द्रो वरदानरुद्र

श्रीबङ्गराजस्य मुदेऽस्तु देव ॥२६९॥

आशीरलकार ।

नरेन्द्रकन्या परिपूर्णरूपा  
 शृङ्गारदुग्धाम्बुधिकौमुदी सा ।  
 तुङ्गस्तनी मङ्गलहारभूषा  
 श्रीबङ्गराजस्य मुदेऽस्तु कान्ता ॥२७०॥

इयमप्याशी ।

यत्रानेकपदार्थानामत्युत्कृष्टेतरात्मनाम् ।  
 एकत्र कथनं जातं स समुच्चय उच्यते ॥२७१॥  
 'श्रीशान्तिनाथदेवोऽयं स्याद्वादोऽमोघलाञ्छनो  
 धर्मश्रीरायबङ्गोऽत्र लोके रत्नानि त्रीणि वै ।  
 कादम्बवार्धिचन्द्रो लक्ष्मी कीर्त्यङ्गना गिरा देवी  
 जयकामिनी च पूज्या चत्वारि हि दिव्यवस्तूनि ॥२७२॥

अत्युत्कृष्टसमुच्चयालङ्कार ।

रायबङ्गक्षितीशस्य सन्ति शत्रुपुरेष्वमी ।  
 जम्बुका धूकभल्लूका तिन्दुका युगपत्रका ॥२७३॥

अत्यपकृष्टसमुच्चय ।

यत्र 'कोऽपि जनो वक्ति प्रीतियुक्तमिवाप्रियम् ।  
 अलङ्कृतिं ता वक्रोक्तिं प्राहुः काव्यविशारदाः ॥२७४॥  
 श्रीबङ्गेश्वर साधु साधु भवतः शृङ्गारशोभा परा  
 मुक्ताजालमलकृतं परिलसद्वज्रं च संभूषितम् ।  
 श्रीचन्द्राभरण महोदयकरं सर्वं त्वया संवृतं  
 वस्त्रेणेति निजालयागतपति सा<sup>३</sup> वक्ति कान्ता गिरा ॥२७५॥  
 वक्रोक्त्यलङ्कार ।

१ श्रीशान्तिनाथ देव स्याद्वादामोघलाञ्छनो धर्मश्री रायबङ्गभूपो  
 रत्नानि त्रीणि लोकेऽत्र (?) । २. कोपाध्वजो ३. वानक्ति ।

प्रसिद्धसाधनाद्यत्र कालत्रितयगोचरम् ।  
 साध्यं निश्चीयते प्राज्ञैरनुमान तदुच्यते ॥२७६॥  
 मानसोल्लासन दृष्टि शीला साधवगम्य सा (?) ।  
 कान्ता श्रीरायबङ्गस्य शृङ्गाराब्धौ निमज्जति ॥२७७॥  
 वर्तमानसाध्यगोचरानुमानालकार ।  
 श्रीरायभूपदिव्याङ्गे मुक्ताजाल विलोक्य सा ।  
 कान्ता कुप्यति बध्नाति काञ्चीदाम्ना निजेश्वरम् ॥२७८॥  
 अतीतसाध्यगोचरानुमानालकार\*  
 कादम्बवार्धिवन्द्रस्य वाग्विलासादनागतम् ।  
 फल निश्चित्य सा कान्ता निजेशेऽगात् परा मुदम् ॥२७९॥  
 भाविबाध्यगोचरानुमानालकार ।  
 यत्रासभाव्यसबन्धो वस्तुनोऽन्येन केनचित् ।  
 अनौचित्येन सप्रोक्तो विषमं त प्रचक्षते ॥२८०॥  
 कादम्बनाथ करुणारसदुग्धवार्धि  
 क्वायं त्वदीयहृदये सकलप्रजासु ।  
 रुद्रावतार घर धीर रिपुव्रजेषु  
 क्वाय चकास्ति च रसो वररौद्रनामा ॥२८१॥  
 उत्कृष्टतान्तर यत्र प्रकृतस्योपलक्षणम् ।  
 कथ्यतेऽवसर सोऽयमलकारो विबुध्यताम् ॥२८२॥  
 येन जिष्णुरपि ध्वस्य शत्रुर्भीमोऽपि सङ्गरे ।  
 तस्य श्रीरायबङ्गस्य दोर्दण्डेऽभूज्जयाङ्गना ॥२८३॥  
 अवसरालकार\* ।  
 यत्र साम्य प्रतीयेत वस्तुन प्रतिवस्तुना ।  
 इवादीनामप्रयोगे प्रतिवस्तूपमा हि सा ॥२८४॥

कादम्बवंशे विस्तीर्णे स एको रायभूपतिः ।

अब्धौ सकलरत्नानि कौस्तुभास्था भजन्तु किम् ॥२८५॥

प्रतिवस्तूपमा । अस्या उपमायामन्तर्भाव इति केचित् ।

यत्सारं निश्चितं यत्र तस्मात्सारं ततोऽपि तत् ।

सारं निश्चीयते व्याप्त्या सा सारालङ्कृतिर्मता ॥२८६॥

कादम्बाब्धौ सुसारो वरगुणनिलयो रायबङ्गामृताशु-

स्तस्मिन् सारा विवेकामलतरविलसत्कौमुदी लोकपूज्या ।

तस्या सतापहृत्त्व सुकविजननुत सारमस्मिन् सुसारं

सत्सौख्यापादकत्वावरविशदयशोदायकत्वं हि तस्मिन् ॥२८७॥

सारालङ्कारः ।

अन्यस्य वस्तुनोऽन्यस्मिन् साम्याद्वस्तुविनिश्चयः ।

स्वकारणवशाज्जातो यत्र स भ्रान्तिमान् भवेत् ॥२८८॥

सध्याराग वनार्गिर्गिरितटगतघातुव्रज बालभानु

कूपारार्गिर्नभोऽन्तर्गतदिवि जनधीरक्तनीरेजषण्डम् ।

‘दृष्ट्वा च बेभीयतेऽसौ सकलरिपुगणैस्त्वत्प्रताप सुतापो

मत्वेति श्रीविलासास्पदविजयरमानर्तकीनृत्यरङ्ग’ ॥२८९॥

भ्रान्तिमदलङ्कारः । मोहोपमेति केचित् ।

एतद्वेदमिदं वेति चलद्बुद्धिस्तु सशयः ।

हेतुना निश्चयो यत्र निश्चयान्तोऽपि सत्कृतः ॥२९०॥

शत्रुक्षयज्ञापकघूमकेतुं किं वैरिचन्द्रस्य विधुतुदं किम् ।

त्वद्धस्तखड्गं कवयो विलोक्य सशेरते वीरनृसिंहभूप ॥२९१॥

सशयालङ्कारः ।

किं किं कराब्जनिपतन्मधुपावली भो

वीरश्रियः कविनुतावररोमराजि ।

१ दृष्ट्वा भीयते २. ‘स्वप्रतापो सुतापो ।

त्वद्धस्तखङ्गमवलोक्य कवीश्वराणां

बुद्धि स्फुरत्यमलबोधपराक्रमेश ॥२९२॥

अयमपि संशयः ।

चिन्तामणि किं न जडत्वमस्य

किं वा मुरागो नहि पुष्पजालम् ।

विवेकवाक्प्रौढियुतेन तेन

त्यागेन कादम्बरनृप प्रबुद्ध ॥२९३॥

निश्चयान्तसशयालकार । सशय सशयोपमा, निश्चयान्तो  
निर्णयोपमेति केचित् ।

पूर्वपूर्वो विशिष्टोऽर्थो रच्यते तद्विशेषणम् ।

उत्तरोत्तरतन्निष्ठ यत्र सैकावली मता ॥२९४॥

श्रीराय क्षितिपालको वरमहालक्ष्मीपति सा रमा

वीरश्रीसहचारिणीजयवधू कीर्त्यङ्गना भूषिता ।

सा कीर्तिर्वरशारदासहचरी सा शारदामञ्जुल-

श्रोतुण्डाब्जनिवासिनीनुतमुख सपूर्णसीमोपमम् ॥२९५॥

एकावल्यलकार ।

अप्रयुज्यविशेष्य तद्विशेषणपदानि वै ।

साकूतानि प्रयुज्यन्ते यस्मिन् परिकर स हि ॥२९६॥

कुवलयकरसार श्रीचकोरीप्रमोद

नववररमपीयूपाश्रय सत्कलेशम् ।

कविदिविजसहाय सर्वलोकप्रिय क

वदति निजसमान रायबङ्गप्रवीण ॥२९७॥

परिकरालकार ।

वस्तुसाधारणं यत्र किञ्चिदेकत्र रूप्यते ।

निषिध्यते तदन्यत्र परिसख्या हि सा मता ॥२९८॥



कादम्बनाथसाम्राज्ये काठिन्यं करपीडनम् ।  
कान्तापयोधरद्वन्द्वे तत्केल्यामेव ताडनम् ॥२९९॥

परिसंख्यालंकार ।

याचनं चुम्बनादाने बन्धनं दुष्टनायके ।  
वियोगं पञ्जरे भीतिं क्रुद्धकान्तावलोकनात् ॥३००॥  
इयमपि परिसंख्या । सनियमश्लेष इति केचित् ।  
प्रश्नोत्तरद्वयं यत्र व्यक्तं गूढं च बोधयम् ।  
उच्येते तमलंकारमाह प्रश्नोत्तराह्वयम् ॥३०१॥  
प्रजानां पालनं कस्मान्निवृत्तिं पीडनस्य च ।  
रायबङ्गमहीपालाद्याम्भोनिधिचन्दिरात् ॥३०२॥

व्यक्तप्रश्नोत्तरालंकार ।

पयोनिधिसमानस्य रायबङ्गमहीपते ।  
क्रमाब्जभासुरस्याप्यमेयस्य श्रीं क्व वर्तते ॥३०३॥  
व्यक्तप्रश्नगूढोत्तरालंकार । अस्मिन् श्लोके पादचतुष्टयस्य प्रथमा-  
क्षरचतुष्टये गृहीते पराक्रमे इति भवति तदेव गूढोत्तरम् ।  
तव सबन्धिनिष्कामं तव सबोधनं कथम् ।  
कीदृशस्त्वपुनः कीदृग्मानवेशं प्रपूजितं ॥३०४॥

व्यक्तगूढोत्तरप्रश्नोत्तरालंकार ।

अलङ्कृतीनामुक्तानामुपमादिभिदात्मनाम् ।  
मध्ये द्वयोस्त्रयाद्रीनां सगो यत्र स सकरः ॥३०५॥  
श्रीवङ्गराजवदनं तव पूर्णचन्द्रं  
पादद्वयं कमलयुग्ममिव प्रभाति ।  
नाथ भुजोऽरिर्नृपवृन्दमुधाशुराह  
कीर्तिं करोति सकलाम्बुधिलङ्घनं च ॥ ३०६ ॥  
संकरालंकार ।

सकोशमपि नीरेजं सदण्डमपि निर्जितम् ।

रायबङ्गमुखाब्जेन निष्पुण्यस्य तथा भवेत् ॥३०७॥

अयमपि सकर ।

अलकृतीना सर्वासा गुणमुख्यव्यवस्थया ।

समकक्षतया यस्य सकरस्य द्वयी गति ॥३०८॥

अलकृतीना संगृह्यान्तविस्तरमप्यभूम् ।

एष मार्गं प्रमाणेन दर्शितोऽस्माभिरुत्तम ॥३०९॥

नानालकाररत्ने विशदतररसोदारपिण्डीरडिण्डे

नानाभावोरुरङ्गतरलतमरसच्चारुक्लोलमाले ।

शय्यापाकोरुवृत्तिप्रसरबहुगुणोदात्तरीत्यभ्रजाले

काव्यक्षीराम्बुराशौ जयतु तव महाकीर्तिचन्द्रो नृसिंह ॥३१०॥

इति परमजिनेन्द्रवदनचन्द्रिविनिर्गतस्याद्वादचन्द्रिकाचकोरविजयकीर्ति-

मुनीन्द्रचरणान्नचञ्चरीकविजयवर्णिविरचिते श्रीबीरनरसिंह-

कामिरायबङ्गनरेन्द्रशरदिन्दुसनिभकीर्तिप्रकाशके शृङ्गारा-

र्णवचन्द्रिकानाम्नि अलकारसंग्रहे अलकारनिर्णयो

नाम नवम परिच्छेद ।

अलकारनिर्णयो नाम नवम परिच्छेद ।



## दोषगुणनिर्णयो नाम

दशमः परिच्छेदः.

निर्दोषधर्मं पुण्याय यथा शक्तस्तथा भुवि ।

निर्दोषकाव्यं सत्कीर्त्यै वर्ज्यदोषानतो ब्रुवे ॥१॥

असमर्थं श्रुतिकटुं निरर्थकमवाचकम् ।

च्युतसंस्कृत्यप्रयुक्तं ग्राम्यमश्लीलकं परम् ॥२॥

नेयार्थं क्लिष्टसदिग्धे ततोऽप्यनुचितार्थकम् ।

अविमृष्टविधेयाशं विरुद्धमतिकृतथा ॥३॥

अप्रतीतमिति प्रोक्ता पददोषा विशारदै ।

प्रथमं लक्षणं तेषां कथ्यते क्रमतो मया ॥४॥

अङ्गीकृतार्थं यद्वक्तुं न शक्तं तत्पदं तदा ।

असमर्थमिति प्रोक्तं तदुदाहरणं यथा ॥५॥

ग्रामं भवति चैत्रोऽसौ नगरं हन्ति माघव ।

दिव्यन्ति साधवो मोक्षं दयतेऽरिं धराधिप ॥६॥

अत्र भवति—हन्ति—दिव्यन्ति—पदानां गत्यर्थसंभवेऽपि गत्यर्थे सामर्थ्या-

भावात् पदत्रयसमर्थम् । दयते—पदं हिंसार्थे सामर्थ्याभावादसमर्थम् ।

कठिनाक्षरसदर्थं पदं श्रुतिकटूदितम् ।

सूष्ट्रा विनिर्मिते वात्र राष्ट्रे भाति पुरं सदा ॥७॥

अत्र सूष्ट्रां राष्ट्रे इति पदद्वयं श्रुतिकटुः ।

पादपूरणमात्रार्थं यत् पदं प्रतिपाद्यते ।

तन्निरर्थकमित्युक्तं गुणदोषविशारदै ॥८॥

भाति वै नगर चात्र खलु शक्रपुरोपमम् ।

तदेव तु हि गन्तव्य त्वया सुखफलार्थिना ॥१॥

अत्र च वै 'खलु तु हि पदानि स्वार्थानि (न) सन्तीति निरर्थकानि ।

स्वाभिप्रेत न वक्त्यर्थं प्रयुक्तमपि यत्पदम् ।

तदवाचकमित्युक्त काव्यसारविचक्षणैः ॥१०॥

रणे जयाङ्गना चैत्रो भटत्वाल्लभते पराम् ।

शूरत्वादिति हेत्वर्थे भटत्व पदमीरितम् ॥११॥

अत्र भटसामान्यवाचक भटपद शूरवाचक न भवतीत्यवाचकं ज्ञेयम् ।

शास्त्रोक्तलक्षण नास्ति यत्र तच्च्युतसंस्कृति ।

भाते विधुर्नभोभागे नगरं तिष्ठते नर ॥१२॥

अत्र भाते तिष्ठते पदयोरात्मनेपदस्य लक्षण नास्ति । नगरमित्य-  
धिकरणे द्वितीयाया लक्षण नास्ति ।

प्रसिद्धमपि यच्छास्त्रे कविभिर्न प्रयुज्यते ।

तदप्रयुक्तं ज्ञातव्यं पदं दुष्टं विशारदैः ॥१३॥

अणिमादिगुणोपेतो देवतस्तं 'निरूपयन् ।

कविभिर्देवतशब्द पुल्लिङ्गे न प्रयुज्यते ॥१४॥

यत्पदं नोचितं यत्र तत्र तद्ग्राम्यमुच्यते ।

ग्रामवर्तिजनश्लाघ्यं निपुर्णं निन्द्यते यथा ॥१५॥

अधरभक्षयित्वासी तरुण्या <sup>३</sup>स्तनमण्डलम् ।

हस्तेनावृत्य तद्देहे शेते कश्चिन्नरो मुदा ॥१६॥

अत्र अधरभक्षणं हस्तेन स्तनावरणं कान्ताशरीरशयनं ग्राम्यवचनम् ।

१ खलु मही पदासी स्वार्थानि न । २ निरूपि सन् । ३ 'कुण्डलम् ।

पदेन येनासम्भ्यार्थो ज्ञाप्यते तत्पदं मतम् ।  
अश्लोल त्रिविध व्रीडामङ्गलार्थजुगुप्सकम् ॥१७॥

तरुण्या मदनावासो राजते सुखदायक ।  
मदनावासशब्दोऽयं लज्जोत्पत्तिविधायक ॥१८॥

कामिनीवदन पदम् विनाशयति लीलया ।  
विनाशयति नीरेजमेतत्पदममङ्गलम् ॥१९॥

रतौ तरुण्या नाथस्य क्षुते सति विशङ्क्यते ।  
क्षुते सति पदं चैतज्जुगुप्साजन्मकारणम् ॥२०॥

स्वसकेतितमर्थं यत्पदं मूलार्थसूचने ।  
सामर्थ्यरहितं वक्ति तन्नेयार्थं विदुर्बुधा ॥२१॥

अनन्तरानुजो धर्मपुत्रस्य परिपातु व ।  
रुद्रकान्तेक्षुवाटेषु प्रभाते रोरवित्यलम् ॥२२॥

अत्र धर्मपुत्रस्य अनन्तरानुजं भीमः । भीमो नाम महेश्वरः इति  
स्वसकेतः । रुद्रकान्ता शिवा । शिवा नाम जम्बुका इति स्वसकेतः ।

अर्थं व्यवहितं वक्ति तत्पदं क्लिष्टमुच्यते ।  
विनतानन्दनारोहकान्तापुत्रो जयत्यलम् ॥२३॥

विनतानन्दनो गरुडः तदारोहको विष्णुः तत्कान्ता लक्ष्मी तत्पुत्रो  
मन्मथ इति व्यवहितार्थद्योतकम् ।

अर्थं विवक्षितं तस्मादन्यार्थमपि यत्पदम् ।  
प्रकाशयति सदिग्धं तदुक्तं दोषवेदिभिः ॥२४॥

देवो नभसि यातीति सदिग्धं पदमुच्यते ।  
निर्जरो वा घनो वेति सशयस्य समुद्भवात् ॥२५॥

पदस्य यस्यानुचितो गम्यतेऽर्थस्तदुच्यते ।  
बुधैरनुचितार्थं हि तस्योदाहरणं यथा ॥२६॥

पुरुषो राजते राजसभाया वरधीवर ।  
 प्रकाशयत्यनुचित कैवर्त धीवर पदम् ॥२७॥  
 प्राधान्येन न वर्तेत स्वार्थे यत्पदभीरितम् ।  
 अविमृष्टविधेयाश तत्पद प्रणिगद्यते ॥२८॥  
 मार्गे याति नर कश्चिन्महाशूरो घनाधिप ।  
 घनाधिपमहाशूरपदे प्राधान्यतो न हि ॥२९॥

सङ्ग्रामदानप्रस्तावे महाशूरघनाधिपपदद्वयेन सार्थपरामर्शस्य  
 प्राधान्येन सभवान्मार्गे तदसभवात् अविमृष्टविधेयाशत्वम् ।

इष्टार्थादन्यदुष्टार्थप्रतीतिजनकक्षमम् ।  
 विरुद्धमतिकृच्चोक्त तत्पद विदुषा वरे ॥३०॥  
 सुरतरवे लोकोऽय गुरवे तुभ्य सदा नमति ।  
 जननी या भवत सा परोपकारे सदा क्रमते ॥३१॥

‘सुरतरवे’ ‘जननी या भवत’ इति पदद्वय विरुद्धार्थप्रतीतिकरम् ।  
 सुरतरवे सुरत-रवे ‘जननी या भवत’ ‘जननी याभवत’ ।

स्वकीयशास्त्रसिद्धार्थं यत्पद वक्ति तत्पदम् ।  
 अप्रतीतमिति प्रोक्त कथ्यते तदुदाहृति ॥३२॥  
 त्रैलोक्य वर्तते जीवमुखदु खविधायकम् ।  
 सृष्टिसंहारकरणे बहुधानकमुच्यते ॥३३॥

साख्यागमे त्रैलोक्यमिति बहुधानकमिति पदद्वय प्रधानतत्त्ववाचक  
 तद् आगमप्रसिद्धत्वाद् अप्रतीतम् ।

उक्त्वा पदगतदोषान् पदैकदेशेषु पूर्वकथितास्तान् ।  
 दोषान् वदामि शृणु भो राय नृपाधीश भो यथायोगम् ॥३४॥  
 सरसत्वान्मृदुत्वाच्च सुभगत्वाच्च सुन्दरी ।  
 जगन्मोहकरी चित्र कामेनापि विलोक्यते ॥३५॥

अत्र पदैकदेशस्य त्वत्प्रत्ययस्य बाहुल्यात् सरसत्वादिपदत्रयं श्रुति-  
कटूच्यते ।

आलिङ्ग्य कामुक सौख्य प्रमदाया पयोधरान् ।

यात्योदन सूपकार पचतेऽल ' धरेशिने ॥३६॥

अत्र पयोधरान् इति एककान्ताया बहुवचन पदैकदेशरूपं निरर्थकम् ।  
पचते इत्यात्मनेपदमपि पदैकदेशरूप निरर्थक फलेशत्वाभावात् ।

मा समानो न यातीति साधरामृतसौष्ठवाम् ।

अत्र मासमृतेत्येतत्पदाशोऽल्लीलमुच्यते ॥३७॥

अत्र मासेति जुगुप्साकरमल्लील मृतेत्यमङ्गलमल्लीलम् ।

देवतया पूज्योऽय नरनाथो धर्मसाररसशाली ।

देवेति तयेति तथा देवतया वेति भवति सदेह ॥३८॥

अत्र पदैकदेशरूप सदिग्धम् ।

त्यागवा कुर्वते युद्ध गीर्वाणस्सर्वदा समम् ।

लक्षको दानशब्दस्य त्यागशब्देन वाचक ॥३९॥

अत्र त्यागवा इति पदैकदेशस्त्यागशब्द दानशब्दगमको भवति । न  
पुनरसुरार्थवाचक ।

पददोष निरूप्याह वाक्यदोष ब्रुवेऽधुना ।

शृणु राय महीनाथ काव्यगोष्ठिविशारद ॥४०॥

उपहतलुप्तविसर्गं हतवृत्तं गर्भितं तथाकीर्णम् ।

न्यूनपद कथितपद प्रमिद्धिहतमक्रम विसर्गि तथा ॥४१॥

प्रतिकूलवर्णमपदस्थितपदमस्थानगतसमास च ।

अधिकपद रसरहित समाप्तपुनरात्तमनभिहितवाच्यम् ॥४२॥

अप्रस्तुतार्थममतपरार्थमर्धान्तरैकवाचि तथा ।

भग्नप्रक्रममभवन्मतयोगपतत्प्रकर्षयोर्युगलम् ॥४३॥

असकृद्याति विसर्गो यत्रोकार विलोप्यभाव वा ।

उपहतलुप्तविसर्ग तद्वाक्य दुष्टमिति वदन्ति बुधा ॥४४॥

नरो वरो हितोऽर्च्यो वा गम्भीरो दुर्लभो भुवि ।

अवरा अहिता ज्ञानहीना जीवा गृहे गृहे ॥४५॥

असकृद्विसर्गो पूर्वार्धे उकाररूप याति लोपमपरार्धे ।

यत्र छन्दोभङ्गो वर्णानां हीनतादितत्त्व वा ।

गुरुलघुवर्णस्थाने लघुगुरु तद्वाक्यमेव हतवृत्तम् ॥४६॥

कान्तेन नारीसमाना विदग्धा विलोकितापि प्रमद न याति ।

स्मरेण कान्ता हरिणनयना निपीडयतेऽसौ 'कुसुमोरुबाण' ॥४७॥

अत्र पूर्वार्धे समानेत्यत्र माकारस्थाने लघुना भवितव्यम् । अपरार्धे

हरिणनयनेत्यत्र णकारस्थाने यकारस्थाने च गुरुणा भवितव्यम् ।

गुरुलघोर्व्यत्ययाद्वतवृत्तम् ।

मृगाङ्ककरा शीता<sup>१</sup> हरन्ति तमसा ततिम् ।

वने चूतकिसलयानि वसन्ते भान्ति सर्वत ॥४८॥

अत्र पूर्वार्धे प्रथमपादे न्यूनाक्षरत्व तृतीयपादेऽधिकाक्षरत्व हतवृत्त तत ।

आरामस्यामलदेशे नारी सकलभूरिगुणरम्या ।

सक्रीडय पुन क्रीडति सरोवरे विदलदखिलकमलाढ्ये ॥४९॥

अत्र प्रथमपादे गणत्रयमतिक्रम्य यति छन्दोभङ्ग । द्वितीयपादे

नारीति पादमध्ये यति छन्दोभङ्ग । ततो हतवृत्तम् ।

१. कुसुमोरुबाण । २. शिता ।



छन्दःशास्त्रे यतिः प्रोक्तो यादृशस्तादृशस्य वै ।  
यतेरभावो विद्वद्भिः छन्दोमङ्गो निरूप्यते ॥५०॥  
अन्यवाक्यस्य मध्येऽस्ति यत्रान्यद्वाक्यमीरितम् ।  
तद्वाक्यं गर्भितं प्राहुः काव्यालंकारकोविदाः ॥५१॥  
शृगाररसवार्ताशौ निमग्नाङ्गी विलोक्ते ।  
रमते प्रमदारामे तरुणी निजनायकम् ॥५२॥

अत्र रमते प्रमदारामे इति वाक्यं वाक्यान्तरमध्यगतमिति गर्भितम् ।

बहुवाक्यानां यत्र प्रविशन्ति पदानि मिश्रितानि मिथः ।  
तत् सकीर्णं कथितं क्लिष्टं पुनरेकपदवाक्यवृत्तिः ॥५३॥  
कुप्यति रमणो नारी नमति रुषं च चरणपङ्कजे त्यजति ।  
परिरम्य मोदतेऽसौ चुम्बति मज्जति वरार्णवे सौख्ये ॥५४॥

अत्र नारी कुप्यति रमणश्चरणपङ्कजे नमति । नारी रुषं त्यजति  
रमणं परिरम्य चुम्बति वरसौ मोदते रमणं सौख्येऽर्णवे मज्जतीति  
बहूनां वाक्यानां पदानि परस्परमिश्रितानि इति सकीर्णम् । एक-  
वाक्यगतपदानि मिथो मिश्रितानि चेत् क्लिष्टं वाक्यं ज्ञेयम् ।

पदेन येन यद्वाक्यं विना न्यूनं भवेद्यदा ।  
तदन्यूनपदमित्युक्तं तस्य लक्ष्यं प्ररूप्यते ॥५५॥  
रतिक्रियार्थी रमणो जगन्मोहनरूपिणीम् ।  
विलोक्यालिङ्ग्य सौख्याब्धौ निमज्जति मनोहरे ॥५६॥

अत्र नायक इति विशेष्यपदाभावाद् न्यूनपदवाक्यम् ।

पदस्य कथनं यत्र कथितस्य पुनर्यदा ।  
तदा सद्भिस्तु कथितपदं तद्वाक्यमुच्यते ॥५७॥  
स्मरकेलिविनोदेन कान्ता कान्तस्य ताडनम् ।  
करोति केलिनीलाब्जकर्णपूरेण चारुणा ॥५८॥

अत्र केलीति प्रागुक्त पुनरपि केलीति कथितं ततः कथितपदं वाक्यम् ।

प्रसिद्धिरहितं यत्र पदमुक्तं तदुच्यते ।

प्रसिद्धिहृतमेतद्धि वाक्यं दुष्टं विचक्षणैः ॥५९॥

पद्माकरे सरोजाक्षी केका हंसा विकुर्वते ।

ता निशम्य मम स्वान्तं बिभेति मदनातुरम् ॥६०॥

अत्र केकाशब्दो मयूरवाण्या प्रसिद्धो न हंसध्वनौ इति प्रसिद्धिहृतं वाक्यम् ।

लोकशास्त्रक्रमो नास्ति यत्र तद्वाक्यमक्रमम् ।

तदुदाहरणं वक्ष्ये तद्वाक्यप्रतिपत्तये ॥६१॥

उद्यानकैरवाम्भोजवृद्धीनां हेतवो मताः ।

दिवाकरवसन्ताब्जा मोदयन्तु सतां मनः ॥ ६२ ॥

अत्र कमलारामकैरवाणा वृद्धिहेतुत्वे भानुवसन्तचन्द्राणां वाक्ये व्यत्ययकरणादक्रमं वाक्यम् ।

योगसौगतसाख्यानां मते देवाः प्ररूपिताः ।

कपिलेश्वरबुद्ध्यास्तु क्षणिकेतरवादिनः ॥६३॥

अत्र स्पष्टमुदाहरणम् ।

यत्र वाक्ये विरूपत्वं विश्लेषोऽश्लीलता तथा ।

कष्टता संधिदोषाः स्युः विसंधिः तदनुस्मृतम् ॥६४॥

वने आस्ते वरा नारी तद्दृष्ट्वा अतिचञ्चले ।

तदूरु अधिकौ भातस्तज्जङ्घे अतिमोहने ॥६५॥

अत्र प्राप्तेऽपि संधौ सकृदविहिते सति, निषिद्धेऽपि संधौ तथैव असकृद्विहिते सति वैरूप्यं दोषः, ततो विसंधिः वाक्यम् ।

ईश आगत उदात्तसंपदा भूषितो<sup>१</sup> रमणि पश्य पश्य ते ।

एष ऊर्जितगुणस्तवाधुना कामसौख्यममितं करोत्यलम् ॥६६॥

अत्र निषिद्धे सन्धौ तथैवासकृद्विहिते सति विश्लेषो दोष । ततोऽपि विसन्धि वाक्यम् ।

सुभगेश निजं नारी विलोक्य परिरम्य चुम्बति प्रमदम् ।

अरुणामृत अमृताभ (अधरामृतममृताभं) पायं पायं रसाब्धि-  
मग्नाभूत् ॥६७॥

अत्र सुभगेशमिति सुभगमीशं सुष्ठु भगेशमिति व्रीडाकरमश्लीलं सधिकरण ततोऽपि विसधि वाक्यम् ।

गुर्बालोकनपात्रचार्वमलं पूर्वपूर्वसौन्दर्यम् ।

ऊर्वङ्गजगजनिगडं चित्रमिद भाति कामिनीरूपम् ॥६८॥

अत्र बहुकृत्व श्लिष्टतया संधेर्दोष कष्टत्वमुच्यते । ततोऽपि विसधि वाक्यम् ।

रसानुकूलवर्णातिरिक्त यद्वाक्यमुच्यते ।

तदुक्त प्रतिकूलादिवर्णं काव्यविचक्षणै ॥६९॥

शठेन दृढमालिङ्ग्य नाथेन कठिनस्तनौ ।

कम्बुकण्ठ्या मन खेद विभिद्याप्त स्थिर सुखम् ॥७०॥

अत्र शृंगाररसे कठिनाना ठादिवर्णानामनुकूलता नास्तीति प्रति-  
कूलवर्णं वाक्यम् ।

यत्रास्थाने पद वृत्त तद्वाक्य दीर्घदर्शिभिः ।

अस्थानस्थपद प्रोक्त तस्य लक्ष्य निरूप्यते ॥७१॥

तन्वङ्गीतनुमालोक्य सोत्कण्ठो नायको मुदम् ।

परमा याति लावण्यवार्धचन्द्रकलोपमाम् ॥७२॥

अत्र लावण्येत्यादिपदं सोत्कण्ठ इत्यादिपदेभ्यः पूर्वं वाच्यम् ।  
तस्मादस्थानस्थपदवाक्यम् ।

यत्र वाक्ये समासोऽयमस्थाने वर्तते यदा ।

अस्थानस्थसमास तद्वाक्यमुक्तं तदा बुधे ॥७३॥

अस्मिन् लोके तमो व्याप्तमिति क्रोधादिवारुण ।

भाति पूर्वाचलाग्रस्थतीव्रलोहितमङ्गल ॥७४॥

अत्र रौद्ररसस्थाने समासबाहुल्यस्यौजोगुणस्य प्रस्तुतत्वात्समासः  
कर्तव्यः । अस्थाने कविवचने न कर्तव्यः समासः । आदित्यस्य  
रौद्ररसाभावाद् अस्थानस्थसमासं वाक्यम् ।

विनापि पदेन येनेदं वाक्यं सपूर्णंता गतम् ।

तेनाधिकपदमुक्तं वाक्यं दुष्टं विचक्षणं ॥७५॥

चन्द्राकारसमा कीर्तिर्भानुबिम्बसमं परम् ।

तेजो विभाति भूपस्य पूर्वपुण्यविपाकतः ॥७६॥

अत्र आकारपदेन बिम्बपदेन च विनापि वाक्यं पूर्णं भवतीत्यधिकपदं  
वाक्यम् ।

यत्र वाक्ये रसो नास्ति तद्वाक्यं रसविच्युतम् ।

उच्यते कविभिस्तस्य दृष्टान्तं कथ्यतेऽधुना ॥७७॥

द्विहस्त एककण्ठोऽयं सपादयुगलो नरः ।

द्वित्यस्य पुत्रो वस्त्रेण युक्तो ग्रामाय गच्छति ॥७८॥

अत्र वाक्यस्य नीरसत्वाज्जातिरप्यलंकारो नास्तीति रसच्युतं  
वाक्यम् ।

समाप्तपुनरात् तद्यस्य यत्समाप्य पुनः स्मृतम् ।

वाक्यमुक्तं तथा तस्य लक्ष्यरूपं निगद्यते ॥७९॥

स्मरेषुश्चन्द्रिका तस्या लीलालोलावलोकनम् ।

तनोतु भवतः प्रीतिं नीलनीरेजमालिका ॥८०॥

अत्र पादत्रये वाक्यं समाप्तं कृत्वा नीलनीरेजमालिकेति पुनः  
स्वीकृतमिति समाप्तपुनरात्त वाक्यम् ।

वक्तव्यमेव न प्रोक्तं यत्र वाक्ये तदुच्यते ।

अनुक्तवाच्यमेतद्वि वाक्यं दुष्टं विशारदे ॥८१॥

लीलावलोकनात्तन्वि तव मञ्जीवसपदा ।

जायते किं निमित्तं त्वं मा न पश्यसि सेवकम् ॥८२॥

अत्र तव लीलावलोकनादेवेत्येवकारपदं नियमेन वाच्यं तत्पदं  
नोक्तमित्यनभिहितवाच्यं वाक्यम् ।

अप्रस्तुतस्तुतिं यत्र वक्ति तद्वाक्यमुत्तमं ।

अप्रस्तुतार्थमित्युक्तं तस्य लक्ष्यं प्रदर्श्यते ॥८३॥

दीर्घदेहो रक्तवर्णो विशालाक्षो घनाधिप ।

रम्भास्तम्भसमानोरुः कवीशो वर्तते भुवि ॥८४॥

अत्र दीर्घदेहादिविशेषणं कवीन्द्रस्य श्लाघनोपयोगि न स्यादित्य-  
प्रस्तुतार्थं वाक्यम् ।

प्रस्तुतस्य विरुद्धार्थं कथ्यते यत्र तन्मतम् ।

असमतपदार्थं तु वाक्यं तत्त्वविदाः सताम् ॥८५॥

रणादम्बरमालोक्य बहुभीतो भटाग्रणी ।

जित्वा शत्रुं समालिङ्ग्य वीरलक्ष्मीं प्रमोदते ॥८६॥

अत्र प्रस्तुतस्य भयानकरसस्य विरुद्धो वीररसः कथित इत्यमतपदार्थ-  
वाक्यम् ।

अपराधगतं यत्र वाचकं त्वेकमुच्यते ।

तद्वाक्यमुक्तमर्थान्तरैकवाचकमीदृशम् ॥८७॥

स्मरान्निपीडिते<sup>१</sup> तन्वि स्मरः<sup>२</sup> क्रूरोऽस्मरश्च यः ।

तस्मादिति प्रिया दूत्या वाणी प्रोक्ता हिता मिता ॥८८॥

१. 'पीडिता । २. क्रूरोरम् ।

अत्र स्मरः क्रूरः तस्मादमरः श्रय इति पूर्वार्धे हेतुर्वक्तव्यः । अपरार्धे कथनादर्थान्तरैकवाचकः वाक्यम् ।

प्रारब्धरूपभङ्गो यत्र स्याद् वाक्यमुच्यते सद्भिः ।

भग्नप्रकममेतत्प्रकृतिप्रत्ययविभेदतोऽनेकम् ॥८९॥

केलीसदनं याते नाथे रमणी च रागतः प्राप्ताः ।

यात इति प्रारब्धे प्राप्तेति प्रकृतिरूपभङ्गः स्यात् ॥९०॥

ईक्षणं हसनं नारी चुम्बितं कर्तुमिच्छति ।

ईक्षणं हसनं चोक्त्वा चुम्बितं परिकथ्यते ॥९१॥

अत्र प्रत्ययभङ्गः ।

यत्र वाक्ये गुणीभूतः योगः न लभते पदम् ।

समासेऽन्यैः पदैर्मूर्ख्यं फलाय तदुदीरितम् ॥९२॥

अभवन्मतयोगः तु वाक्यं काव्यार्थकोविदैः ।

अस्य वाक्यस्य रूपाभिव्यक्तये लक्ष्यमुच्यते ॥९३॥

तन्वी सरो मुखं पद्मं लावण्यं निर्मलं जलम् ।

अक्षीन्दीवररम्येऽस्मिन् यथेष्टं क्रीडन् नायकः ॥९४॥

अत्र अक्षीन्दीवरशब्दः समासगतः प्राधान्याभावाद्गौणो यतस्ततोऽभवन्मतयोगः वाक्यम् ।

यत्र पूर्वं प्रकृष्टं स्यादुत्तरं हीनमुच्यते ।

पतत्प्रकर्षनामैतद्वाक्यमुक्तं कवीश्वरैः ॥९५॥

भूपालोऽयं मृगेन्द्रो भूगन्धसिन्धुरराट् भुवि ।

अत्र प्रकृष्टं पञ्चास्याद् हीनं स गज उच्यते ॥९६॥

वाक्यदोषान् निरूप्याहमर्थदोषान्बुवेऽधुना ।

तेषामुद्देशेन तावत् क्रियते क्रमतो यथा ॥९७॥

१ तस्माद् रमः । २ पचास्यादीन् सामञ्ज उच्यते ।

अपुष्टकष्टो सदिग्धव्याहृतौ ग्राम्यदुष्क्रमौ ।

व्यर्थीकृतौ<sup>१</sup> निर्निमित्तपुनरुक्तश्च कथ्यते ॥९८॥

अश्लील साकाङ्क्ष प्रसिद्धिविद्याविरुद्धौ च ।

उक्तविरुद्धसनियमानियमा विशेषाविशेषपरिवृत्ता ॥९९॥

विध्यनुवादविवृत्तस्त्यक्तपुन स्वीकृतौ तथा प्रोक्तौ ।

सहचरभिन्नोऽर्थानामेते दोषा प्रकीर्त्यन्ते ॥१००॥

भेद्यपोषकभावेन यत्र नास्ति प्रयोजनम् ।

उक्तभेदकवृन्दस्य सोऽपुष्टोऽर्थो निरूप्यते ॥१०१॥

रूपसौन्दर्यसपन्नो रणभूमौ भटाग्रणी ।

पञ्चास्यविक्रमोपेतो वैरिवर्गं जयत्यसौ ॥१०२॥

अत्र रूपसौन्दर्यसपन्न इति विशेषण वैरिजय न पुष्णाति । अतोऽपुष्ट-  
त्वदोष ।

दु खेन जायते योऽर्थं शब्दसकोचत स तु ।

कष्टोऽर्थं कथ्यते सद्भिस्तस्य दृष्टान्त उच्यते ॥१०३॥

अब्जेब्जभ्रमण चित्र कालदोषात् प्रजायते ।

अत्र कृच्छ्रेण गम्यत्वात् कष्टार्थं इति कथ्यते ॥१०४॥

द्विधा प्रतीयते योऽर्थो निश्चयाभावकारणात् ।

सोऽर्थं सदिग्ध इत्युक्तस्तत्त्वनिश्चयकोविदै ॥१०५॥

पयोधरा नभोवृत्ता द्रष्टव्या किं सुयोषिताम् ।

उतोरस्स्थलवृत्तास्ते विदग्धा वदतोत्तरम् ॥१०६॥

अत्र-सस्यार्थी वा कामुको वा वक्ता चेन्निश्चयो भवेत् ।

योऽर्थो न श्लाघ्यते तस्य प्रकर्षं पुनरुच्यते ॥१०७॥

स्वभावमधुरा लभ्या बह्वञ्चन्द्रिकादय ।

रमणीचन्द्रिका स्वान्तचकोराह्लादनाय मे ॥१०८॥

अत्र पूर्वं चन्द्रिकादिकमनादृत्य पुनश्चन्द्रिका श्लाघ्यते ।

निल्लजपुरुषेणार्थो श्रव्य सद्भिः प्ररूपित ।

यः स ग्राम्यो मतो लोके तदुदाहृतिरुच्यते ॥१०९॥

ऊरुमूल सुधाकल्पं शृंगाररसमन्दिरम् ।

कान्ताजनानां चुम्बित्वा कृतार्थोऽयं भवाम्यहम् ॥११०॥

अत्र ग्राम्यत्व प्रसिद्धम् ।

क्रमेण वाच्यौ यावर्थौ तयोर्व्यत्ययकीर्तनम् ।

दुष्क्रम कथित सद्भिरस्योदाहरणं यथा ॥१११॥

जगत्तमो हृत सर्वं किरणेन स चाशुना (सुधाशुना) ।

दिवाकरेण वा स्वीर्यैरशुभिः पाटवावहै ॥११२॥

अत्र पक्षान्तरस्वीकारे दिवाकरेणेति पूर्वं वक्तव्यम् ।

श्लाघ्यस्य वस्तुजातस्य वैयर्थ्यप्रतिपादनम् ।

व्यर्थीकृत इति ज्ञेय (ज्ञेय) तस्य लक्ष्यं प्रकाशयते ॥११३॥

जगत्तापहरश्चन्द्रस्तमोहारी दिवाकरः ।

आह्लादिनी सुधा चात किमत किमत फलम् ॥११४॥

अत्र श्लाघ्यानां चन्द्रादीनां व्यर्थत्वादाह्लादनं व्यर्थीकृत उच्यते ।

हेतोर्विना कार्यमुक्तं यत्र सोऽर्थोऽभिधीयते ।

अहेतुकं पुनः तस्य दृष्टान्तकथनं यथा ॥११५॥

यो वातदेही तेनेदं हिमाम्बुहरिचन्दनम् ।

त्यक्तं विलोक्य चैत्रोऽपि तादृशं वस्तु मुञ्चति ॥११६॥

अत्र हरिचन्दनादिवस्तुत्यागे वातदेहिनो वातः कारणम् । चैत्रस्यापि तत्त्यागे हेतुर्नास्ति ।

१ सुधात किं किमतः ।



एकार्थं कथ्यते द्विश्चेत् पुनरुक्तो भवेदसौ ।  
 दृष्टान्तकथनेनास्य रूपव्यक्तिर्भविष्यति ॥११७॥  
 सति चन्द्रे महाज्योत्स्ने मत्सतापो निवर्तते ।  
 सुधाशौ सति लोकस्थ प्रमोदोऽपि प्रजायते ॥११८॥  
 अत्र चन्द्रे सुधाशावित्यर्थस्य पौनरुक्त्यम् ।  
 मुख्यार्थादन्य एवार्थोऽश्लीलो लज्जाकरो बुधे ।  
 कथ्यते तस्य रूपाभिव्यक्तिर्दृष्टान्तदर्शनात् ॥११९॥  
 कान्ता भगवती या भवती सा जगदुत्तमा ।  
 गौण प्रतीयते कश्चिदर्थो लज्जाकरोऽत्र हि ॥१२०॥ \*  
 उक्तेन येन बाह्यार्थोऽपेक्ष्यते सोऽर्थ उच्यते ।  
 साकाङ्क्ष इति विद्वद्भिरस्योदाहरणं यथा ॥१२१॥  
 बुभुक्षितोऽहं त्वं दाता दयालुर्धनवानपि ।  
 मद्भोजनं कारय त्वमिति बाह्यार्थकाङ्क्षणम् ॥१२२॥  
 जनैरविदितो योऽर्थः स प्रसिद्धिविरोधवान् ।  
 उच्यते कविभिस्तस्य दृष्टान्तोऽपि प्रकाश्यते ॥१२३॥  
 कान्ताकटाक्षवज्रास्त्रप्रहारेण मनोभव ।  
 कामुकाचलसदोहं चूर्णयामास लीलया ॥१२४॥  
 अत्र कामस्य वज्रायुधमप्रसिद्धं लौकैरविदितम् ।  
 आगमादिमहाशास्त्रबाधितो योऽर्थ उच्यते ।  
 विद्याविरुद्धः स प्रोक्तस्तस्य लक्ष्यं प्रकीर्त्यते ॥१२५॥  
 रात्रौ गृहीत्वा कोदण्डं चर्यां कृत्वा मुनीश्वर ।  
 पर्यटत्यत्र कान्तारे लीलया व्याघ्रभीकरे ॥१२६॥  
 अत्र मुने कोदण्डस्वीकारादिकं शास्त्रविरुद्धम् ।

उक्तार्थयोर्द्वयोर्यत्र पूर्वापरविरोधनम् ।  
 स स्यादुक्तविरुद्धोऽयमर्थस्तस्य निदर्शनम् ॥१२७॥  
 चन्द्रोऽयं ज्योत्स्नया लोकनेत्रानन्द करोत्यलम् ।  
 अन्धकारोऽप्ययं सर्वं व्याप्नोति भुवनत्रयम् ॥१२८॥  
 अत्र युगपच्चन्द्रोदयतिमिरव्यासिकथनं पूर्वापरविरुद्धम् ।  
 अर्थस्यानुचितस्यैव नियमो योऽपि कथ्यते ।  
 उक्तं सनियमं सोऽपि कवितागुणशालिभि ॥१२९॥  
 अहो रमण पश्य त्वं तामेव सुरमञ्जरीम् ।  
 मा वा शरण्यरहितां त्वत्सदायत्तजीविकाम् ॥१३०॥  
 अत्र तामेवेति सुरमञ्जरीदर्शने नियमो न युक्तः मावेति पक्षान्तरस्य  
 स्वीकारात् ।  
 वाच्यस्य नियमस्यात्र यस्त्यागं स च कथ्यते ।  
 बुधैरनियमस्तस्य व्यक्तिर्दृष्टान्ततो भवेत् ॥१३१॥  
 समस्तलोकसव्याप्तगाढान्धतमसं परम् ।  
 एकेन भानुना सर्वं निरस्तं प्रतिबन्धकम् ॥१३२॥  
 अत्र एकेनैवेति नियमस्य वक्तव्यस्य त्यागादनियमः ।  
 वक्तुं योग्ये विशेषेऽस्मिन् सामान्यकथनं बुधैः ।  
 विशेषपरिवृत्तोऽयं कथ्यते काव्यकोविदैः ॥१३३॥  
 दानेन तर्पिताशेषलोकोऽयं पुरुषोत्तमः ।  
 समस्तभुवनस्तुत्यो कलौ वृक्षायते सदा ॥१३४॥  
 अत्र कल्पवृक्षायते इति वृक्षविशेषे वक्तव्ये वृक्षायते इति वृक्षसामान्य-  
 कथनम् । विशेषपरिवृत्तं विशेषव्यत्यय इत्यर्थः ।  
 सामान्ये यत्र वक्तव्ये विशेषः परिकीर्त्यते ।  
 सामान्यव्यत्ययः सोऽयं कथ्यते कविपुङ्गवैः ॥१३५॥  
 कान्तानीरेजबाणेन पीड्यते विरहोदये ।  
 पुष्पसामान्यतो नाम स्मरस्य न विशेषतः ॥१३६॥

अत्र पुष्पविशेषतो नाम भदनस्य नास्ति ।

विध्यनुवादौ कथितौ व्यत्ययरूपेण यत्र वर्तते ।

विध्यनुवादविवृतः स उच्यते बुद्धिशालिविबुधजनै ॥१३७॥

गतो यः पुरुषो मोक्षं स धर्मं चरति ध्रुवम् ।

अत्र विध्यनुवादौ तौ व्यत्ययेन निरूपितौ ॥१३८॥

वक्तुमिष्टोऽर्थो विधिस्तस्य पुनः कथनमनुवादः । तयोर्व्यत्ययकथनं  
विध्यनुवादविवृतः । यो धर्मं चरति स्म इति किञ्चि स मोक्षं गतः  
इत्यनुवाद इति व्यत्ययः ।

अर्थो यत्र त्यक्तस्तस्यादानं मुहुः कृतं सोऽपि ।

त्यक्तपुनः स्वीकृत इति निगद्यते बुद्धिशालिविबुधेन ॥१३९॥

विरक्तो याति पत्नीं या मन्यते यः तृणाय सः ।

विषयार्थसुखाम्भोधौ निमज्जति रसोदयात् ॥१४०॥

अत्र विरक्त इत्यादिना परिग्रहे त्यक्त्वा विषयसुखाम्भोव्यौ  
मज्जतीति वाक्येन पुनरावृत्तेः ।

यत्रोत्कृष्टेन कथनं निकृष्टस्य समं स च ।

भिन्नं सहचरैरुक्तस्तस्य लक्ष्यं प्रकाशयते ॥१४१॥

आरामे तरवो भान्ति काका अपि चकासति ।

कोकिला राजकीराश्च राजहंसा मधुव्रता ॥१४२॥

अत्र उत्कृष्टेभ्यस्तत्कोकिलादिभ्यः काका भिन्ना इति सहचरभिन्नः ।

पदवाक्यार्थदोषास्ते गुणीभावं क्वचित् क्वचित् ।

प्रयान्ति तेषां दृष्टान्तं कथ्यतेऽस्माभिरीदृशः ॥१४३॥

घटते ढौकते प्लाति पठति श्लाघतेऽटति ।

एधते ध्वनति स्नाति भूपतिभूषयत्यलम् ॥१४४॥

१. द्रोति ।

८

उदाहरणकाव्ये वाक्यमेतादृशं विद्यमानं श्रुतिकट्वपि न  
दुष्टमिति ज्ञेयम् ।

द्वयर्थश्रयैकाक्षरप्रहेलिकाद्वयक्षरादिकाद्येषु ।

असमर्थविलघाद्या दोषा उक्ता गुणा मताः सद्भिः ॥१४५॥

विना सर्वं मया दृष्टं सर्वज्ञो नियते ततः (?) ।

सर्वज्ञेनापि पीडयेत परमं सुखमदभुतम् ॥१४६॥

अत्र प्रहेलिकायामत्यन्तव्यञ्जधानेन ज्ञायमानोऽप्यर्थः । कष्ट इति  
दोषोऽपि गुणो ज्ञेयः ।

कपिध्वजादपेतोऽयं भुवने पतितो नरः ।

क्षितौ स्थितोऽपि देहं स्वविहाय लघुतो गतः ॥१४७॥

इयमपि प्रहेलिका । कपिध्वजशब्दो नेयार्थोऽपि न दुष्यति भुवनक्षि-  
तिगन्दावसमर्थवपि स्वार्थे दुष्टौ न भवतः । अन्यदप्युदाहरण-  
मभ्यूह्यम् ।

बल्यरिः कल्यरिः पातु गुर्वङ्गो वै नृपोऽपि च ।

अनङ्गवानिव शक्तो हि खलतीति युतस्तुवः ॥१४८॥

छान्दमभाषिते च वै गन्दादिनिरर्थकोऽपि न दुष्यति । बल्यरिः  
कल्यरिः गुर्वङ्ग इति सधिवृषणमपि न ।

चटकारोहणं स्त्रीणां तुरङ्गमविघटनम् ।

मर्कटालिङ्गनं चित्तमोहसमददायकम् ॥१४९॥

अत्र लज्जाकरमश्लीलमपि कामशास्त्रे (न) दूषितं लक्षणशास्त्रत्वात् ।

मूत्रस्थानं भगो गुह्यं पुरीषस्थानमुच्यते ।

स्त्रीणां तत्र नरो ज्ञानी को विषत्ते मनोमुदम् ॥१५०॥

१ In an identical context Alankāra-sangraha (VI  
82. 83) reads बल्यरि-क्रत्वरो etc.

अत्र जुगुप्साकरमश्लीलमपि वैराग्यवचने न दूषणम् ।

सवञ्च काञ्चनमयं शिवागारं सराजकम् ।

मन्दिरं नृपतद्वैरिवर्गयोः सममोडितम् ॥१५१॥

अत्र सदिग्धमपि न दूषणं द्वयर्थबन्धत्वात् ।

शल्यत्रयं च सज्ञा च दण्डत्रयमनीडितम् ।

परित्यज्य मुनीशोऽयं सन्मार्गे राजते भृशम् ॥१५२॥

अत्र शल्यादि पदमप्रतीतमपि प्रवचनप्रसंगे न दुष्टम् ।

आलिङ्ग्यमाना रमणी निजेशेन मुद गता ।

अहं शृङ्गारवार्ताशावित्युक्त्वा विरराम सा ॥१५३॥

अत्र मज्जामीति पदेन न्यूनमपि परवशत्वे दूषणं न ।

तत्त्व जिनमुनीशोऽयं न जानाति न किं तु वै ।

जानातीत्येव तथाप्येतन्न गृह्णाति न मुञ्चति ॥१५४॥

अत्र जानातीत्यधिकमपि पदमन्ययोगव्यावृत्तये गुणो भवति ।

विषादाद्भुतमुत्क्रोधैर्न्यनिश्चयगोचरे ।

प्रसादने दयाया च द्विस्त्रिरुक्तं न दुष्यति ॥१५५॥

पश्य पश्य न मा धूर्तं गच्छ गच्छ निजास्पदम् ।

त्वया ज्ञातापराधेन फलं किं धिग् धिगीदृशम् ॥१५६॥

अत्र विषादवचने पुनरुक्तता गुणः ।

अहो कीर्तिरहो सूक्तिरहो मूर्तिरहो दया ।

अहो बुद्धिरहो सिद्धिः कामिरायमहीपते ॥१५७॥

अत्र विस्मये पौनरुक्त्यं गुणः । अहोपदानां बहूनाम् ।

मदनस्य पताकेयं स्मरमन्त्राधिदेवता ।

आलिङ्ग्यालिङ्ग्यं चुम्बित्वा चुम्बित्वा भुज्यता त्वया ॥१५८॥

अत्र हर्षवचने द्विरुक्तिर्भूषणम् ।

रतिक्रियाया कोपेन कामिन्या निजनायक ।

वामपादेन सताडय सताड्याबध्य दण्डित ॥१५९॥

अत्र सकोपवचने द्विरुक्तिर्भूषणमेव ।

रक्ष मा रक्ष मा कान्ते न ताडय न ताडय ।

मुञ्च मुञ्च प्रकोप त्व त्वत्पदं शरणं मम ॥१६०॥

अत्र दैन्यवचने पुनरुक्तता न दूषणम् ।

रायबद्धेन सद्दानं क्रियते क्रियते मुदा ।

प्रजापि परिवारोऽपि रक्ष्यते रक्ष्यते सदा ॥१६१॥

अत्रार्थनिश्चये पुनरुक्तत्वं न दूषणम् ।

प्रसन्नोऽस्तु प्रसन्नोऽस्तु रायबद्ध भवानहो ।

अनाथक प्रजावृन्द रक्ष रक्ष दयापर ॥१६२॥

अत्र प्रसादनेऽनुकम्पाया पौनरुक्त्यं न दूषणम् ।

रायबद्धमहीनाथ साक्षादिक्षुशरासनम् ।

तस्य पुण्यं न सामान्यं दृष्ट्वा चित्रीयते जनः ॥१६३॥

अत्र तस्य पुण्यं न सामान्यमिति वाक्यं गर्भितनामधेयं दुष्टमपि विस्मये गुण एव ।

नेद सरो वल्लिकुण्ड प्रवालशयनं न च ।

अङ्गारराशिरधुना भृशं दहति मा द्वयम् ॥१६४॥

सरसो वल्लिकुण्डत्वकथनं पल्लवशय्याया अङ्गारराशित्ववचनं च प्रत्यक्षविरुद्धमपि विरहे न दूषणम् ।

चन्द्रं राहुर्न बाधेत जगदानन्दकारणम् ।

रोहिण्या सह तस्यास्तु मङ्गलादपि मङ्गलम् ॥१६५॥

अत्र श्लोककथितार्थसमोऽन्योऽर्थः । प्रसिद्धकारणेन नेयोऽप्यनुशये शुणो न दूषणम् ।

पुण्डरीक गता चन्द्रध्री 'रात्रौ न स्थिराजनि ।

धावलयलक्ष्मी राघस्य कीर्तिं श्रित्वा सदातनी ॥१६६॥

पुण्डरीकस्य दिवसे धोतनाच्चन्द्रस्य रात्रौ भासनादिति हेतोरकथ-  
नेऽपि प्रसिद्धत्वाग्निर्हेतुवचन गुण ।

हसनस्यापि कीर्तेश्च शुभ्रत्वं कोपरागयो ।

रक्तत्व चन्द्रिकापान चकोराणा निरूप्यते ॥१६७॥

पापापकीर्तिनभसा कृष्णत्वं परिकीर्त्यते ।

मन्दानिलेन्दुकूपरजीमूतारामसतते ॥१६७॥

हरिचन्दनकासारमुक्ताहारकलापिनाम् ।

कीरकोकिल'माल्याना भृङ्गादीना वियोगिषु ॥१६९॥

दाहकत्व कटाक्षस्य वेधकत्व विलोचनै ।

रूपस्य पान नद्यब्ध्योर्निरिजादि प्रवर्तनम् ॥१७०॥

कुसुमाना मनोजस्य शरचापत्वकीर्तनम् ।

भ्रमराणा धनुर्ज्यात्व मनसो बाणलक्ष्यताम् ॥१७१॥

सुहृद्वसन्त कीरोऽश्व प्रतिहारश्च कोकिल ।

काव्येष्वित्यादिकथनमसदेव प्रसिद्धिभाक् ॥१७२॥

शिर शेखरकर्णवितसश्रवणकुण्डले ।

सानिध्यादिप्रकाशार्थं मस्तकादिनिरूपणम् ॥१७३॥

रत्नयोगनिवृत्त्यर्थं मुक्ताहारपद मतम् ।

रुद्धिप्रकाशनायेदं धनुर्ज्याबद्धमीरितम् ॥१७४॥

हर्षमालेति सुरभिपुष्पनिर्माणसिद्धये ।

कलभे करिशब्दस्य प्रयोगो व्यक्तिबोधक ॥१७५॥

१ तावान् स्थिराजनि २ माल्यासा ।

इत्यादीनां सतामेव ज्ञेयं काव्ये समर्थनम् ।  
कविताप्रौढिविज्ञानशालिभिः कविकुञ्जरैः ॥१७६॥

रसाभासोऽपि भावानामाभासः परिकीर्त्यते ।  
स्वशब्दग्रहणं कष्टकल्पनं च निरूपितम् ॥१७७॥

‘अव्यक्तिरनुभावस्य विभावस्य च कीर्तिता ।  
प्रतिकूलविभावादियग्रहणं दीप्ततां मुहुः ॥१७८॥

‘अकाण्डे प्रथमं च्छेदोऽप्यङ्गस्याप्यतिविस्तृतिः ।  
अङ्गिनोऽनुसन्धानं प्रकृतीनां विपर्ययः ॥१७९॥

अनङ्गस्याभिधानं च रसदोषाः प्रकीर्तिताः ।  
एतेषां रसदोषाणां लक्ष्यलक्षणमुच्यते ॥१८०॥

अनौचित्यं रसस्य स्याद् रसाभासो द्विधा स्मृतः ।  
अनेकविषयोऽप्येकविषयोऽनुचितोऽपि च ॥१८१॥

रूपातिशयसपन्ना काचिन्नारी विलोकते ।  
चैत्रं मुरूपमप्यन्यं मैत्रं श्रीदत्तनामकम् ॥१८२॥

अत्र रसस्य नानापुरुषविषयत्वाद्वसाभासः ।  
माता मे पितरं दृष्ट्वा मोहोल्लासेन चुम्बनम् ।  
कृत्वा कामसुखाम्भोधौ निमज्जति कलान्विता ॥१८३॥

अत्र मातापितृविषयस्य रसस्यानुचितत्वाद् रसाभासः ।  
भावानौचित्यमत्रोक्तो रसाभासो विशारदैः ।  
भावाभासाभिधानोऽसौ रसाभासोऽनुमन्यताम् ॥१८४॥  
इयं रतिसमा नारी त्रलोक्येऽप्यतिदुर्लभा ।  
अस्यां स्वीकरणोपायं करिष्यामि कदाचन ॥१८५॥

स्वस्मिन्निच्छारहिताया इतरनार्याश्चिन्तनमनौचित्यनिन्दितम् ।

१. अव्याप्तिः २. आकाशे ।



इतरेषा रसाना च भावानांमपि गम्यताम् ।  
 आभासत्वं महाकाव्यरसभावविचक्षणैः ॥१८६॥  
 रसे भावे प्रतीते च तद्वाचकपदग्रह ।  
 स्वशब्दग्रहणं सद्भिर्रसदोषं प्रकीर्त्यते ॥१८७॥  
 इमा मदनमञ्जूषा रूपसौन्दर्यशोभिनीम् ।  
 शृङ्गाररससंपृक्ता पश्य पश्य युवेष्वर ॥१८८॥

रसे सुप्रतीतेऽपि शृङ्गाररसपदग्रहणं दुष्टम् ।

मुग्धा सलज्जा सभया सस्वेदा विमुखा रते ।  
 निजेशालिङ्गिता केलिसदनं प्रवर्तते ॥१८९॥

मुग्धाया यौवनारम्भान्निजेशालिङ्गने लज्जादीनां स्वयमेव सभ-  
 वाल्लज्जादिपदैर्व्यभिचारिभावानां ग्रहणं दुष्टम् ।

वामपादप्रहारेण कामिन्या हस्तताडनात् ।  
 नायकस्य रतौ चित्ते कोऽप्युत्साहः प्रवर्तते ॥१९०॥

उत्साहस्य स्थायिभावस्य प्रतीतस्य स्वशब्देन ग्रहणं दुष्टम् ।

न रज्यति विमोहेन मही लिखति कामिनी ।  
 रोदनं च विधत्तेऽसौ किं कर्तव्यं मया सखे ॥१९१॥

विप्रलम्भे रसे रोदनाद्यनुभावानां कल्पना कष्टकल्पना । करुणरसेऽपि  
 सभवात् ।

अहो तन्वि विलोकस्व मा त्वत्पादशरण्यकम् ।  
 यौवनादिरनित्योऽत्र ततो भोग्यं महासुखम् ॥१९२॥

शान्तरसे यौवनादेरनित्यत्वकथनं भावः शृङ्गाररसे तस्यानुभावस्य  
 प्रतिकूलस्य ग्रहणं प्रतिकूलग्रहं कथ्यते ।

रसदोषप्रपञ्चानां काव्येष्वेव निदर्शनम् ।  
 अतस्तत्रैव दृष्टान्ता ज्ञेया रसविशारदैः ॥१९३॥

निदोषे सगुणे काव्ये सालकारे रसान्विते ।  
 रायबङ्ग महीनाथ तव कीर्तिः प्रवर्तताम् ॥१९५॥  
 स्याद्वादधर्मपरमामृतदत्तचित्तं  
 सर्वोपकारिजिननाथपदाब्जभृङ्ग ।  
 कादम्बवशजलराशिसुधामयूख  
 श्रीरायबङ्गनृपतिर्जगतीह जीयात् ॥१९५॥  
 गर्वारूढविपक्षदक्षबलसघाताद्भुताडम्बरा-  
 मन्दोद्गर्जनघोरनीरदमहासदोहस्रञ्जानिल ।  
 प्रोद्यद्भ्रानुमयूखजालविपिनव्रातानलज्वाला-  
 दृश्योद्भ्रामुरवीरविक्रमगुणस्ते रायबङ्गोद्भव ॥१९६॥  
 कीर्तिस्ते विमला सदा वरगुणा वाणी जयश्रीपरा  
 लक्ष्मी सर्वहिता सुख सुरसुख दान निधान महत् ।  
 ज्ञान पीनमिद पराक्रमगुणस्तुङ्गो नय कोमलो-  
 रूप कान्ततर जयन्तनिभ भो श्रीरायभूमीश्वर ॥१९७॥

इति परमजिनेन्द्रवदनचन्द्रिविनिर्गतस्याद्वादचन्द्रिकाचकोरविजयकीर्तिमुनीन्द्र-  
 चरणाब्जचञ्चरीकविजयवर्णविरचिते श्रीवीरनरसहकामिराजबङ्ग-  
 नरेन्द्रशरदिन्दुसनिभकीर्तिप्रकाशके शृङ्गारावचन्द्रि-  
 कानाम्नि अलकार-सग्रहे दोषगुणनिर्णयो नाम  
 दशम परिच्छेद ॥१०॥ समाप्त ॥

स्वस्ति श्रीमत्सुरासुरवृन्दवन्दितपादपाद्योजश्रीमन्नेमोश्वरसमुत्पत्तिपवित्रीकृत-  
 गौतमगोत्रोत्पत्तिसमुद्भूतद्विजश्रीमद्दोर्बालजिनदासशास्त्रिणामन्तेवासिना  
 श्रवणबेलुगुलक्षेत्रनिवासि-विजयचन्द्रेण जैनक्षत्रियेण  
 अय ग्रन्थ समाप्तिं नोत ।

## Appendix—A

॥ परिशिष्टम्—१ ॥

### अकाराद्यनुक्रमेण पद्यसूची

अकारणवहाबन्धु	९-१४९	अघर भक्षयित्वासी	१०-१६
अकारादिकारान्ता	१-३६	अनङ्गस्याभिषानं च	१०-१८०
अङ्गीकृतार्थं यद् वस्तु	१०-५	अनन्तरानुजो धर्म	१०-२२
अचन्द्रा चन्द्रिका कीर्ति	९-१४८	अनुकूल शठो धृष्टो	४-१७
अणिमादिगुणोपेतो	१०-१४	अनुभाव. क्रमान्वित	३-८९
अत कारणतोऽस्मावि	३-२	अनुभावस्तु विक्षेपो	३-८२
अतिरक्त बालमानु	९-७९	अनुभावस्तु शङ्कारे	३-३०
अतो गुणा प्रकीर्त्यन्ते	५-३	अनुभावोऽत्र वैवर्ण्यं	३-९६
अत्यन्तकर्कशार्थानां	७-५	अनुभावोऽस्य वक्त्रस्य	३-१०१
अत्यन्तकोमलाब्जानां	७-४	अनुगतस्य नाथस्य	४-१०७
अत्यन्तकोमलाब्जार्थे	७-१४	अनुरागवता केनचित्	४-५०
अत्यन्तयौवनात्यन्त	४-६५	अनीवित्य रसस्य स्याद्	१०-१८१
अथ कुटुम्बित बोक्त	४-११६	अन्तो नास्ति त्रिकल्पाना	९-८६
अथवा पदबन्धसो	५-१६	अन्यवस्तुगुणारोपो	५-२०
अथवा शक्तिनैपुण्य	२-२	अन्यवाक्यस्य मध्येऽस्ति	१०-५१
अदृष्ट्वा गोरव यत्र	३-५६	अन्यस्त्रीसङ्गमादीष्यार्थं	४-१०६
अदोषः सगुणा रीति	१-२३	अन्यस्य वस्तुनोऽन्यस्मिन्	९-२८८
अद्भुताख्यरसो लोके	३-१२४	अन्याय इति शब्दं च	९-२६३
अद्भुतो रोदवैरी तु	३-१२९	अन्येऽपि भेदाः सन्त्येव	९-२३२

अन्ये विकल्पा द्रष्टव्या	९-१७४	अर्थयोर्यत्र समयो.	९-२६१
अपह्वातिफल दद्यात्	१-३८	अर्थस्य गोपन बाधा	९-१८६
अपरार्धगत यत्र	१०-८७	अर्थस्यानुचितस्मैव	१०-१२९
अपरित्यज्य मुहशार्थ	२-१७	अर्थानिमित्तमित्युक्ते	५-२७
अपुष्टकष्टो सदिग्ध	१०-९८	अर्थो यत्र त्यक्त	१०-१३९
अपूर्वं भोजयमप्यत्र	८-४	अलङ्कृतीनामुक्तानां	९-३०५
अप्रनोतमिति प्रोक्ता	१०-४	अलङ्कृतीनां सगुह्या	९-३०९
अप्रयुज्य विशेष्य तद्	९-२९६	अलङ्कृतीनां सर्वासा	९-३०८
अप्रस्तुतस्तुति यत्र	१०-८३	अल्पप्राणाक्षराण्येव	५-१३
अप्रस्तुतार्थममत	१०-४३	अवर्णनीयवस्तूनां	४-१३१
अञ्ज कूर्ममनङ्गराज	९-११८	अवहित्वालस्यवेगो	३-२२
अञ्जेऽञ्जभ्रमणं चित्र	१०-१०४	अव्याप्तिरनुभावस्य	१०-१७८
अञ्जोऽञ्ज राजतीत्युक्ते	२-३९	अवाट्या कामकैली वा	८-१
अभवन्मनयोग तु	१०-९३	अश्लीलः साकाङ्क्षः	१०-९९
अभिधा अक्षणा गोणो	२-२६	अश्वभोगजवृक्षादि	२-११
अभिधाशक्तिमाश्रित्य	२-२७	अष्टादशमहाश्रेणी	१-१०
अमन्दानन्दसदोह	१-२	अष्टावेते गणा. प्रोक्ता	१-५४
अमावास्या तिथौ रात्रौ	९-४८	असकृदाति विसर्गो	१०-४४
अयं श्रीरायभूमीश	९-१८	असत्यग्रहिते नाथे	४-९५
अयं श्रीरायबङ्गो न	९-१९६	असमर्थं श्रुतिकटु	१०-२
अयं श्रीरायबङ्गो न	९-१९७	अस्मद्वैरिपुर त्वया बलपते	९-२३९
अयं श्रीरायबङ्गो न	९-१९८	अस्मिन् लाके तमो व्याप्त	१०-७४
अरुण पद्मिनीं तेजो	९-८०	अहो कीर्तिरहो सूक्ति	१०-१५७
अर्थं विवक्षितं तस्मात्	१०-२४	अहो तन्वि विलोकस्व	१०-१९२
अर्थं व्यवहितं वक्ति	१०-२३	अहो रमण पश्य त्व	१०-१३०
अर्थबाहवगमक	५-८	अहो वचनमित्यादिर्	३-१०६

आकारेणेङ्गितेनापि	९-१८०	आलम्ब्य शब्दमर्थस्य	८-६
आकाशे प्रथम छेदो	१०-१७९	आलम्ब्य शब्दमर्थस्य	८-७
आक्षेपातिशयो सूक्ष्म	९-९	आलिङ्गन कुचद्वन्द्व	३-३३
आगच्छन्त निजेश रतिपति	४-१४६	आलिङ्गने चुम्बनादौ	४-१५३
आगतं नायक कोपात्	४-९१	आलिङ्ग्य कामुकः सौख्य	१०-३६
आगत्य रायनपती	४-१५६	आलिङ्ग्य चुम्बति नृपे	४-१५४
आगमादिमहाशास्त्र	१०-१२५	आलिङ्ग्यमाना रमणौ	१०-१५३
आदिशब्देन चेष्टादि	२-४१	आलीजनेन नृपकुञ्जर	४-१५२
आयत्तकाननो गदगद	९-२१३	आशीर्गलकृत वस्तु	१-३३
आयल्लके नृपतिकुञ्जर	३-५३	आमा स्त्रीणा सखी दासी	४-१११
आयात नायक भ्रुत्वा	४-१४५	आस्थानमण्डपगते	९-१९४
आयासे सति कामिन्या	४-१२५	आस्य नापि ददानि	४-६२
आरक्तमालतीमाला	९-९४	आस्याङ्गलोकन प्रीति	३-३१
आरामकुञ्जगत	४-१२८	आस्येन्दुनिर्गतमनोहर	४-१२२
आरामस्यामलदेशे	१०-४९	आह्लादनाय देवाना	९-५५
आरामे तरवो भाति	१०-१४२	आह्लादयन्ति रायव	९-२५४
आरामे रायवङ्गस्य	९-१९	इक्षुचापसमाकार.	९-९६
आरामे रायवङ्गस्य	९-१०४	इत पर रसाना तु	३-११५
आरोपादन्यधमस्य	५-२१	इतरस्माद्रसाज्जन्म	३-१२७
आलम्बनविभावस्तु	३-११०	इतरेषा रसाना च	१०-१८६
आलम्बनविभावस्तु	३-८८	इति सप्तविधा प्रोक्ता	२-८
आलम्बनविभावोऽत्र	३-२६	इत्य नृपप्रार्थितन	१-२२
आलम्बनविभावोऽत्र	३-६५	इत्यादाना सतामेव	१०-१७६
आलम्बनविभावोऽत्र	३-१००	इन्दुना जीयते पुण्ड	९-३६
आलम्बनविभावोऽस्य	३-८१	इन्दुमन्वेति कीर्तिस्ते	९-३०
आलम्ब्य यं रसोत्पत्तिः	३-१५	इन्दोरिव नृसिंहस्य	९-५३

हृन्दी ज्योत्स्नेव दुग्धाम्भौ	९-५१	उत्साहो दक्षता बुद्धिः	४-४
हृन्द्बोधोपस्य पतन	३-२९	उद्वापनास्तु स्याद्वाद	३-१११
हृमा भदनमञ्जूषा	१०-१८८	उद्यानकैरवाग्भोज	१०-६२
हृयं रतिसमा नारी	१०-१८५	उद्याने प्रीतियुक्ता	४-१६०
हृष्टाना यत्र वस्तूना	९-२६८	उद्देगो यदि वर्तेत	९-५९
हृष्टानिष्टविनाशाप्ति	३-७५	उद्देगो विदुषा यत्र	९-५७
हृष्टार्थादिन्यदुष्टार्थ	१०-३०	उन्नतस्थानवृत्तोऽपि	९-१४१
ईक्षण हसन नारी	१०-९१	उपमालकृतावेते	९-६४
ईषा आगत उवात्तसपदा	१०-६६	उपमालकृतौ पूर्वं	९-२००
ईषत्कठिनवाच्याना	७-७	उपवनजलवेली	५-१७
ईषन्मुमुसुदंर्भा	७-१५	उपहतलुप्तविसर्ग	१०-४१
उक्तरीतित्रययुता	६-१३	उपहासयुता या च	४-६८
उक्तस्य पुनरुक्ति स्यात्	९-८७	उल्लसन्ती त्वदोदये	५-१४
उक्ताना यत्र वाच्याना	९-१८९	ऊरुमूलं सुभाकल्प	१०-११०
उक्तार्थयोर्द्वयोर्ध्व	१०-१२७	ऊर्जस्व्यप्रस्तुतस्तोत्रे	९-१०
उक्तार्थाना विरुद्धत्व	९-२०३	एकवाक्यमनेकार्थ	९-२५०
उक्तेन येन बाह्यार्थो	१०-१२१	एकस्या नायिकाया य	४-१८
उक्तवा पदगतदोषान्	१०-३४	एकस्या रागशून्योऽपि	४-२०
उत्कर्षो यत्र गवस्य	९-२२१	एकाङ्गनालोलजित्.	४-२४
उत्कृष्टान्तर यत्र	९-२८२	एकाग्र कथ्यते द्विश्चेत्	१०-११७
उत्तम ध्वनिनिव्यक्त	१-३२	एतत्काव्यमुखे वर्ण	१-३४
उत्तम मध्यम प्रोक्त	१-३१	एतद्गुणविशिष्टोऽय	४-५
उत्तमो मध्यमो लोके	३-६९	एतद्देवमद वीत	९-२९०
उत्तुङ्गोऽपि न मेरु.	९-२०५	एतादृश्या सभामिन्द्रि	९-६१
उत्पन्नयौवनोद्भूत	४-६३	एते दशगुणा प्रोक्ता	५-५
उत्पाहस्थायिभावोऽत्र	३-८६	एतेषा नायकाना तु	४-२९

एतेषा लक्षणं प्रीकृतं	३-७२	कादम्बक्षितिपस्व तीर्थमयले	९-१७३
इतर्गुणैर्भासुरकाव्य	५-३१	कादम्बक्षितिपेन भीकर	३-७८
इवमन्ये स्वाभिभावा.	३-९	कादम्बनाथं रायेन्द्र	९-११३
इव प्रगल्भा कथिता	४-८२	कादम्बनाथ कल्पारस	९-२८१
इव रम्यकवाचवरे कृतिमुखे	१-६३	कादम्बनाथ कीर्तिस्ते	९-२७
एवं लक्षणयुक्तोऽय	३-६	कादम्बनाथ तव पुण्यफल	३-६३
एवं सन्दगतार्थविवक्षययुते	२-४२	कादम्बनाथ नृप	४-५९
एषा चतुर्णां नेतृणा	४-१६	कादम्बनाथ परिपालित	४-१२
एषामाद्यास्त्रयो वैह	४-११७	कादम्बनाथ मदन	३-४९
श्लोक कान्तिगुणोपेता	६-९	कादम्बनाथमदनेन	४-१४८
श्रीवित्यव्याप्तदोषाश्च	२-३१	कादम्बनाथ रमणी	३-४५
कलमवाइव लक्ष्मी ते	१-३९	कादम्बनाथ लोकेऽत्र	९-७६
कटाक्षचन्द्रिकापीय	९-८२	कादम्बनाथ वचन	४-२१
कठिनाक्षररुद्धं	१०-७	कादम्बनाथ सा कीर्ति	९-२४
कपिचक्रादपेतोऽय	१०-१४७	कादम्बनाथ साम्राज्ये	९-२९९
कर्पूराणि वित्रीय	४-२५	कादम्बनाथस्य महाश्वशूर	५-१०
कलहान्तरिता या वा	४-१०९	कादम्बनाथको हार	९-१०७
कलाधरो न शोतांशु.	९-२०४	कादम्बरात कातिस्ते	९-१७२
कलाप्रौढियुता वीय	४-५७	कादम्बरायनाथस्य	९-१११
कली काले प्रश्रवमं	९-१६८	कादम्बरायभूनाथं	९-११०
कली काले महादुष्टान्	९-१५९	कादम्बराययूगस्य	९-२१८
कल्पास्तानिलवेगधूणित	६-१०	कादम्बरायसदनाद्	९-१०९
कषायवर्णसा याति	३-११९	कादम्बरायो मारवच	९-१४४
काञ्चोनारीं नृपसितिलको	४-८८	कादम्बवशे विस्तीर्णे	९-२८५
कादम्बक्षितिनाथ	३-४७	कादम्बवाधिचन्द्रस्य	९-२७९
कादम्बक्षितिवायकस्य	३-५१	कादम्बाब्जो सुसाशो	९-२८७

कादम्बेक्षेन रामेण	९-१०८	काव्येषु ते विभावाः	३-११
कादम्बेश्वर कीर्तिस्ते	९-२९	कासारे जललीलया	४-८३
कादम्बेश्वररायवङ्ग	८-३	किं किं कराब्जनिपतन्	९-२९२
कादम्बेश्वररायद्विषतो	४-४९	किमास्यं शारद चन्द्र	९-१७७
कान्ताकटाक्षवध्यास्य	१०-१२४	किमिय चन्द्रिकाहोस्वित्	९-१७०
कान्ताकामुकयोरत्र	३-३४	कीदृश्यलकुती रीतिः	१-२१
कान्ताकामकयो वृषित	३-३७	कीर्तिचन्द्रातपे शैत्यं	९-१५४
कान्ताताटङ्कचक्रं विरचित	९-६६	कीर्तिज्योत्स्नापि तापाय	९-१३६
कान्तानोरेजबाणेन	१०-१३६	कीर्तिप्रतापी रायेण	९-१२८
कान्ता भगवती या	१०-१२०	कीर्तिस्तऽप्यतिलङ्घते	७-१२
कान्ताया कामुकस्यापि	३-४२	कीर्तिस्ते विमला सदा	१०-१९७
कान्तास्यं वरमीक्षते	९-११७	किसलययुतकर्ण	४-१४४
कान्तास्यबुम्बने सक्तो	९-१३१	कुतो ललाटे तिलक	९-१५२
कान्तेन नारीसमाना विदग्धा	१०-४७	कुप्यति रमणा नारी	१०-५४
कामाग्निप्रशमार्थमालि	३-५५	कुत्रलयकसार	९-२९७
कामिनीवदन पथ	१०-१९	कुमुमाना मनोजस्य	१०-१७१
कामिन्प्रा पदपङ्कजेद	९-६८	कृतापराध सुरते	४-७३
कारकजापकी हेतू	९-९२	कृतायूणा शङ्कादीना	४-१४७
कारुण्योपेतचित्त	९-१६	कृत्वा तृप्त जगत्सर्व	९-२११
कार्यकारणयोर्वत्र	९-२४३	कृत्वापि दान जगतो	९-१७१
कार्यमारभम णेन	९-२४८	केनोसदन याते नाथे	१०-९०
काल कलो स्त्रहितमङ्गल	९-१९३	कोविला रणन कृत्वा	९-९९
काव्यशोभाकर काव्य	९-३	कोटीरराजितो हार	९-२२
काव्यस्म रक्षण किं वा	१-२०	कोप निवारयितुमिष्ट	९-२४९
काव्याङ्गमृतौ शब्दार्थौ	९-२	कोपान्नायिकया निजेश	४-७८
		कोपालिङ्गतलोलकेन	४-७५



कीमुदं वधयत्यत्र	२-१६	मुशाना कर्मणा वत्र	९-३४०
कीमुद वधयत्यत्र	२-२५	मुष्यमावे गुणो नास्ति	४-१
क्रसागतमिमा भूमि	१-१८	मुष्णा लघुना ताम्बा	१-५१
क्रमेण बाच्यो यावर्धौ	१०-१११	गुर्वालोकेनपात्रवार्धमलं	१०-६८
क्रियाविशेषैरधिक्ते	४-१३९	गोरवर्णेन वाभाति	३-१२१
क्रोडयत्यङ्गनालोका	९-९०	ग्राम भवति चैत्रोऽभी	१०-६
क्रोधाक्यस्यायिभावोऽय	३-८०	घटते ढीकते प्वाति	१०-१४४
क्षणालिङ्गनावधनाय	९-१६४	घण्टाटङ्कारभोकृद्रण	७-११
क्षमासामध्यगाभ्योर्य	४-७	घोरभीमुदरङ्गे समर	३-८५
क्षस्तु सबसमृद्ध दृष	१-४५	चकोरनिकरो दृष्ट्वा	९-३४
क्षीरबाराशिना तुस्या	९-४१	चकोरी सदृशो दृष्टि	४-१२४
क्षीरान्निना समानापि	९-३९	चक्रवाकरतिक्रीडा	३-२८
क्षीराक्षिरमृतस्थान	९-४०	चक्षुर्विकासो देहस्य	३-६७
क्षीरान्निशारदिन्द्रादि	९-४७	चटकारोहण स्त्रोणा	१०-१४९
क्षीरान्निशारदाभ्रादि	९-४६	चतुर्मात्रा गणा पञ्च	१-५५
खण्डिताया नायिकाया	४-१०८	चतुर्विधानामर्थानां	८-५
गगने राजते राजा	२-४०	चत्वारो नायका एते	४-१५
गङ्गातुङ्गतरेङ्ग	६-१४	चन्द्र दृष्ट्वा सरोज	८-९
गद्यकाव्य तु वाक्यानां	१-३०	चद्र राहुर्न बाधेत्	१०-१६५
गम्भीरामलसूक्तिरत्न	९-६	चन्द्राकारसमा कीर्ति	१०-७६
गर्वगौरवमालम्ब्य	४-१५५	चन्द्रातप पिबति चुम्बति	३-५९
गर्वहर्षमहाक्रोध	३-९०	चन्द्रोऽयं ज्योत्स्नया लोक	१०-१२८
गर्वाकृढविषमदण	१०-१९६	चरन्ति मदनोद्याने	९-१००
गवर्णफल प्रोक्त	१-६२	चापत्परहिता चित्त	४-१३७
गुणरोतिवृत्तिशम्भा	५-१	चित्तवृत्तिविशेषोऽयं	४-११८
गुणवर्मादिकर्नाट	१-७	चित्तशृङ्गारभूषोऽयं	४-१२३

चित्तस्य वृत्तिभेदो च	३-३	तत्त्व विनमनीसोऽय	१०-१५४
चिन्तामणिः कामधेनु	९-२३६	तदभावेऽनिष्टफलं	१-३५
चिन्तामणि किं न जडत्व	९-२९	तदुदाहृतिरग्यत्र	९-१२४
चुम्बति स्पृशति प्राण	९-२०	तन्वज्जीतनुमाल्लेख्य	१०-७२
चुम्बन्त परिरम्भण	४-६४	तन्वो सरो मुख पथं	१०-९४
चैत्रेण सेवकेनासौ	९-१०३	तरुणिवरणवात	९-२०२
छत्र सित वण्डयुतं	६-८	तरुणीकायदेशो स्वीकृता	४-१४३
छन्द शास्त्रे यतिः प्रोक्तो	१०-५०	तरुण्या देहलावण्ये	९-२०९
जगन्तमो हूत सर्व	१०-११२	तरुण्या मदनाबासो	१०-१८
जगत्तापहरद्वन्द्व	१०-११५	तरुण्या रूपसौन्दर्य	४-१२६
जगत्यर्थान्तरग्यास	९-१३७	तवकीर्तिमहाकृता	९-१७६
जगन्मोहनरूपेण	९-१३९	तवतेजो गुणलब्धु	९-१२६
जगानुराग प्रियवादि	४-३	तव पञ्चवक्त्रेण	९-९७
जनैरविदितोयोऽर्थो	१०-१२३	तस्य आपण्ड्यवज्जस्य	१-१६
जपाकुसुमद्रक्त	३-१२०	तव सम्बन्धिनिष्काम	९-३०४
जयति ससिद्धकाश्या	१-१	तस्यानुजो गुणाधीश	१-१३
जातिक्रियागुणद्वय	९-९८	तादृशं मतिमतरिं	४-७४
जातीकन्दुकताडन	३-३८	तिलकाङ्कितरायास्य	९-१३४
जिष्णुमीमावितिभोक्ते	२-३४	तुङ्गत्वेन महामेह	९-७८
जुगुप्सास्त्रायिमावोऽय	३-९९	ते के नियामका ब्रूव	९-२९
जात्यववास्त्रार्य	४-१२०	तेजोमानुस्समो भानु	९-८१
ज्ञातभावचतुष्केण	३-६४	तेजो विलासो माधुर्यं	४-३५
ज्ञातभन्मथिह्ले या	४-९९	स्वय्यते गृत्यते शब्दो	२-३
ज्ञानंस्वीकुरु वज्जराज	९-२४७	त्यागवाः कुर्वते युद्धम्	१०-३९
सेतो विहसित मध्ये	३-७०	त्रयस्त्रिंशत्समाख्याता	९-८५
तत्काव्यं त्रिविधभोक्त	१-२९	त्रिगुरुर्मनः प्रोक्त.	१-५२

त्रिभेदसमुदा मध्या	४-८१	देवो नमसि यातीति	१०-२५
त्रिवर्णनायकेनेयं	४-४७	देवोऽयमम्बरोद्भासो	९-२५१
त्रैलोक्यं वर्तते जीव	१०-३३	देशान्तर गते नाथे	४-९७
त्वत्कीर्तिर्विव धावत्यं	९-३२	देशीयं स्वर्गभूमि	९-२२५
त्वत्कीर्तिः त्यागसंजाता	९-४४	द्विगुणमगण. प्रोक्तो	१-५६
वो युद्धदो दधौ	१-४२	द्वित्वाक्षरसमेतो वा	१-४९
वदात्यवर्णं सप्रोतिम्	१-३७	द्विधा प्रतीयते योऽर्धो	१०-१०५
दयालुना पुण्यजनेन	९-२०६	द्विहस्त एककण्ठोऽयं	१०-७८
दातेव नयस्तस्या	४-५८	द्वयर्थत्रयैकाक्षर	१०-१४५
दानवीर दयावीर	३-८७	धरन्मपि महाभारय	९-१४२
दानेन तपिताशेष	१०-१३४	धर्मार्थकाममोक्षारूप	१-२७
दास्यामि हारं गन्तव्यं	९-१६२	धर्मार्थकामयुक्ताना	४-४६
दाहकत्व कटादास्य	१०-१७०	धवला श्रीमति सर्व	९-३७
दाहं क्रमान्मकारो	१-४३	धारा त्वधीरा लोके हि	४-६७
दीनानाथजनान् विलोक्य	३-९२	धीरोदात्तस्तथा धीर	४-६
दीर्घदेहो रक्तवर्णो	१०-८४	धीरोदात्तादिनेतृणा	४-२७
दुःखेन जायते योऽर्थ	१०-१०३	धैर्यं लीला विलासश्च	४-११५
दृश्यत्वाद्वमभावाना	३-२३	न कुप्यति न वध्नाति	९-२२९
दृश्यमाना नाटकेषु	३-११	न कोकिना न वीणा वा	९-२२८
दृष्टान्यकामिनी सङ्ग	४-२२	न कौमुदीय कीर्तिस्ते	९-४५
दृष्टे निजेश कामिन्या	४-१४१	न मनवचनदम्भो	४-२३
दृष्ट्वा शान्तिजिन नत्वा	९-२१२	नयनप्रीति सन्तिः	३-४३
देवतया पूज्योऽयं	१०-३८	नर कपिष्वज हति	२-३७
देवताद्घृषिसस्तुत्या	९-२६६	न रज्यति विमोहेन	१०-१९१
देवतावाविशब्दाना	१-६१	नरेन्द्रकन्या परिपूर्णरूपा	९-२७०
देवसेवनकालेऽस्य	९-२१९	नरो बरो हितोऽर्घ्यो वा	१०-४५

नवकेलिविनोदेन	४-१३६	निर्दोषे सगुणे काव्ये	१०-१९४
नवीनवीचना नारी	४-६१	निर्लज्जपुरुषेणार्थो	१०-१०९
नवीनालोकना ज्ञात	४-१०५	निर्वेदोद्वेगकोपादिः	३-१०२
न शीतोऽपि यशोराशिर्	९-२२७	नीतियुक्तोऽपि रायस्य	९-१३३
न सन्मित्र न सत्सङ्गो	९-२३१	नीरेज वरमल्लिका	४-२६
वागते नायके गेह	४-९३	नीलकण्ठो नरीनर्ति	२-३८
नाथ सरति या नारी	४-१०१	नून प्रायो द्रुव शङ्के	९-१२०
नाथस्य चित्रे वस्त्रे च	४-१४९	नृतिरितिलकराये	४-१३२
नानाभावमनोज्ञभावविलसत्	३-१३०	नृसिंहराय कीर्तिस्ते	९-१५४
		नृसिंहोऽप्यमय दत्ते	९-१३२
नानारत्नविराजमानमुकुटो	६-१२	नद सरो वल्लिकुण्डं	१०-१६४
नानालङ्काररत्ने विशद	९-३१०	नेयार्थं क्लिष्टमद्विग्वे	१०-३
नायं राय सुधासूति	९-८४	पत्युर्वा नायिकया वा	३-५२
नायकस्य प्रसङ्गे च	४-३०	पदशेष निरूप्याहं	१०-४०
नायकाना चित्तवृत्ते	४-३२	पदवाक्यार्थदोषास्ते	१०-१४३
नायकोक्तेषु कार्येषु	४-३१	पदस्य कथनं यत्र	१०-५७
नायिकालक्षणं तासा	४-८४	पदस्य यस्यानुचितो	१०-२६
नारीजनो मुखं दृष्ट्वा	९-७४	पदानामनुगुण्य वा	८-२
निजेशं तर्जनं कृत्वा	४-७७	पदेन येन यद्वाक्यं	१०-५५
निन्दाव्याजेन यत्रार्थं	९-२६४	पदेन येनासम्भार्यो	१०-१७
निष्ठमाकरणे काव्ये	२-२८	पद्याकरे सरोजाक्षी	१०-६०
निरवद्यवर्णगणयुत	३-१	पद्ये समासबाहुल्यं	५-२३
निरूप्यते जगत्स्वात	३-११६	पयोधरा नमोवृत्ता	१०-१०६
निर्गुणा रमणी लोके	५-२	पयोधरविलोलोऽय	९-२६०
निर्घातिव्याघ्रसर्पारि	३-९५	पयोनिधिसमानस्य	९-३०३
निर्दोषधर्म पुण्याय	१०-१	परकीयाप्यनुद्वेग	४-५२

परकीया स्वकीया च	४-५३	प्रच्छन्नो वा प्रकाशो वा	३-३९
परलोकं गते नाथे	४-११०	प्रज्ञानां पालनं कस्मात्	९-३०२
परस्परप्रयुक्तानि	५-११	प्रतिकूलवर्णमपद	१०-४२
परेण परिणीता च	४-५४	प्रतिभाशक्तिसम्पन्नो	२-१
परेण परिणीता तु	४-५५	प्रतिवस्तूपमा सार	९-१२
पक्षबाद्गतेश बिम्बं	९-२१५	प्रतिषेधस्य कथनं	९-१५०
पश्य पश्य न मा धूर्त	१०-१५६	प्रयुक्तस्य पदस्यार्थो	५-१८
पश्य पश्यसि चेदन्यां	९-१६१	प्रयुक्तो लौकिकार्थोऽपि	५-१५
पादपूजमात्रार्थं	१०-८	प्रविशन्ति महादुर्गं	२-१८
पापापकीर्तिनमसा	१०-१६८	प्रश्नोत्तरं सङ्करश्च	९-१३
पालयत्यमला वज्र	१-१२	प्रश्नोत्तरद्वयं यत्र	९-३०१
पीत बारिधिसप्तकं	९-२२२	प्रसन्नोऽस्तु प्रसन्नोऽस्तु	१०-१६२
पुण्डरीक गता चन्द्र	१०-१६६	प्रसादगुणसयुक्ता	६-१६
पुण्डरीक चन्द्रबिम्ब	९-४२	प्रसादादिगुणोपेता	६-६
पुण्येन सार्धमावृत्ते	९-२४४	प्रसिद्धमपि यच्छास्त्रे	१०-१३
पुनरुज्जीवनोपायं	९-१६५	प्रसिद्धसाधनाद्यत्र	९-२७६
पुरुषो राजते राज	१०-२७	प्रसिद्धिरहितं यत्र	१०-५९
पुलकस्तम्भमावाविः	३-११२	प्रस्तुतस्य विरुद्धार्थ	१०-८५
पुष्पास्त्रबाणपतन	३-६१	प्रस्तुतोक्त्य यत्किञ्चित्	९-१२७
पूर्वपूर्वो विशिष्टोऽर्थो	९-२९४	प्राणाभावेऽपि पुरुषो	४-३६
पूर्वाद्भि गतबालभानु	९-१८७	प्राधान्येन न वर्तते	१०-२८
पूर्वानुरागो मानात्मा	३-४०	प्रारब्धरूपमङ्गो यत्र	१०-८९
पूर्वोक्तनायिकाना तु	४-११३	प्रियस्यागमन श्रुत्वा	४-८९
पूर्वोक्ताना नायिकाना	४-३४	बलाकेव शरच्चन्द्रो	९-६०
प्रकृतं कारणं त्यक्त्वा	९-१४७	बल्यरिः कल्यरि पातु	१०-१४८
प्रगल्भा नायिका त्रेधा	४-७२	बहुवाक्यानां यत्र प्रविशन्ति	१०-५३

बुद्धेमंहस्व भूतेर्वा	९-१९२	भो रायवङ्ग कीर्तिस्ते	५-१९
बुभुक्षितोऽहं त्वं दाता	१०-१२२	भ्रूलोचनकटाक्षान् वै	९-१९१
भगणो सुखकृत्साम्यो	१-५९	भ्रूविक्षेप किसलयमृदुं	४-१५८
भयाक्ष्यस्वाभिभावोऽत्र	३-९४	भक्षिकाबालपूयाद्रं	९-२१४
भयानकरसोऽप्यत्र	३-१२२	भदनस्य पताकेय	१०-१५८
भरतस्सगरश्चक्री	९-२३५	भनसिञ्ज तव कार्यं	४-१००
भाति वै नगरं चात्र	१०-९	भनसिञ्जन्पक्षप	४-५६
भातीन्दोवरमित्युक्ते	२-३५	भनोरय्युतस्त्वान्ते	३-४८
भावका रसमुत्पन्न	३-१६	भनोरागेण निबिडा	४-१२७
भावानोबिद्यमन्नोक्तो	१०-१८४	भनोवचनकायेभ्य	४-१३३
भावयन्ति विशेषेण	३-१४	भनोवद्वक्तुरिष्टस्य	९-१७५
भावहावो तथा हेला	४-११४	भनोवेगयुता. सत्वा	९-११६
भावाश्चतुर्विधाः प्रोक्ताः	३-१३	भन्दानिला लुण्ठयन्ति	९-२५८
भाविनावाद्यलङ्कार	४-११९	भन्दानिलेन मकरन्दरसेन	३-५७
भावश्चतुर्भि पूर्वोक्तै	३-८	भन्ये शङ्के ध्रुवादीना	९-१२२
भुज्यमानाश्च भोक्तृणाम्	३-१२	भरणं मुप्तिनिद्रावबोध	३-२१
भुवनव्यापिनो कीर्ति	९-४३	भलयानिलसकाशो	१-६
भुवने रसिका लोका	३-२४	महत्यपि च सक्षोभे	४-३८
भूपालोऽयं मृगेन्द्रो	१०-९६	महाकवीना विस्तीर्णं	९-१७९
भेद्यशेषकभावेन	१०-१०१	महाभागस्य रायस्य	९-२६
भोगे कलाया लोली य	४-९	मासमानो न यातीत	१०-३७
भो भो कल्पतरो त्वमत्र	९-१८३	माता मे पितरं दृष्ट्वा	१०-१८३
भो भो निष्ठुरभाषिणि	४-९२	माधुर्यादिगुणोपेत	६-३
भो भो राय मनोजपातक	४-११२	मानसोल्लासन दृष्टि	९-२७७
भो भो बीरनृसिंहराय	४-१६३	मायामात्सर्यचण्डत्व	४-१३

मार्गे याति नरः कश्चित्	१०-२९	यत्र कोऽपि जनो वसति	९-२७४
मित्रलाभं जकारोऽयं	१-४०	यत्र ऋग्वेदोभङ्गो	१०-४६
मुख विशालनेत्रं ते	९-७२	यत्र न क्षमते स्त्री वा	३-५४
मुखे काव्यस्य वर्णना	१-४६	यत्र पत्यु स्त्रिया वा वा	३-५८
मुखेन्दुना कपोलाक्षि	९-७५	यत्र पूर्वं प्रकृष्ट स्यात्	१०-९५
मुखेन्दुमते जनानन्द	९-७१	यत्र प्ररूपित वस्तु	९-१८२
मुख्यबाधे निमिरो च	२-२२	यत्र प्ररूप्यमाणेन	९-२३८
मुख्यार्थादस्य एवार्थो	१०-११९	यत्र प्रियतरा वाणी	९-२०१
मुख्यार्थाल्लक्ष्यतो गौणाद्	२-२४	यत्र वाक्ये गुणीभूतम्	१०-९२
मुख्यार्थे बाधिने मुख्य	२-११	यत्र वाक्ये रसो नास्ति	१०-७७
मुख्येऽर्थो लक्ष्यनामापि	२-९	यत्र वाक्ये विरूपत्व	१०-६४
मुग्धा सलज्जा सभया	१०-१८९	यत्र वाक्ये समासोऽय	१०-७३
मूत्रस्थानं भगो गुह्य	१०-१५०	यत्र साम्य प्रतीयेत	९-२८४
मृगाङ्गकरा शीता	१०-४८	यत्र स्वार्थं परित्यज्य	२-१५
मृदुस्फुटभयाकार	५-२९	यत्राघतो पुनर्दत्त्वा	९-२४५
म्रियते यत्र रमणी	३-६२	यत्रानेकपदार्थाना	९-२७१
यगणो जलरूपोऽय	१-५८	यत्राप्रस्तुतवस्तूना	९-२२३
यतस्ततो नायकस्य	४-२	यत्रार्थस्य स्वरूपेण	९-११९
यत्पद नोचित यत्र	१०-१५	यत्रासमाख्यसबन्धो	९-२८०
यत्प्रभाववशात् पुसि	४-४०	यत्रास्थाने पद वृत्तं	१०-७१
यत्प्राणानपि तद्वापि	४-४१	यत्रोत्कृष्टेन कथन	१०-१४१
यत्र कान्तस्य कान्तायाः	३-५०	यत्रोपचर्यते भेद	९-६५
यत्र कामस्य सतापात्	३-६०	यत्सार निश्चित यत्र	९-२८६
यत्र किञ्चित् समीकर्तुं	९-२३३	यथा दुष्यन्तनृपते	४-५१
यत्र कैवल्यकथनं	९-२२६	यथेवाख्यव्ययानि	९-६३

यद्योचित नायकोक्त	४-१६२	रणे गृहीतो रायेण	९-१५८
यद्गान परमामृत भुति	४-१३४	रणे जयाङ्गना चैत्रो	१०-११
यद्गानाद् धनदा भवन्ति	३-९१	रतिक्रियाया कोपेन	१०-१५९
यद्दृष्ट्वा प्रलयान्तभैरव	३-९३	रतिक्रियार्थी रमणी	१०-५६
यदतास्तु न सन्त्यत्र	१-५७	रतिहास्यशोककोपोत्साह	३-४
यश प्रतापो भवतो	९-१४०	रतो तरुण्या नाथस्य	१०-२०
यस्या सामोप्यमाश्रित्य	४-८७	रतो रम्य महीनाथे	९-२१
यस्योत्तुङ्गविशालकीर्ति	५-१२	रत्नत्रयमहाधर्म	१-१४
याचन चुम्बनादाने	९-३००	रत्नयोगनिवृत्त्यर्थ	१०-१७४
यामोति वचन नाथ	९-१६६	रमणी रमणो यत्र	३-४४
याहि याहि निजेश त्व	९-१६	रमण्या रमणस्यापि	३-४६
युद्धरङ्गत्रिन्शोऽयं	९-१९९	रशनाबन्धन बाम	३-३२
युद्धे रायनरेन्द्रहस्तकलितं	३-९८	रसदोषप्रपञ्चाना	१०-१९३
येन जिष्णुरपि ह्वस्यः	९-२८३	रसप्रकरणे प्रोक्त	४-१०३
येन रूपेण यद्वस्तु	९-१४	रसलक्षणमत्रोक्त	३-११४
येनोपमोयते यत्र	९-२३	रसवस्वं गिरा लोके	९-२२०
योगसौगतसाङ्ख्याना	१०-६३	रसानामिति सर्वेषा	३-२५
योऽप्या सञ्चारिभावाश्च	३-३५	रसानुकूलवर्णानि	१०-६९
यो वातदेही तेनेद	१०-११६	रसामासोऽपि भावानां	१०१७७
रक्षत कादम्बनाथेऽस्मिन्	९-१०१	रसिकाना मनोवृत्तिः	३-१७
रक्ष मा रक्ष मा कान्ते	१०-१६०	रसे भावे प्रतीते च	१०-१८७
रणो लघुमान् मध्ये	१-५३	रसो बीभत्सनामा च	३-१२३
रङ्गत्तुङ्गतरङ्गसङ्ग	५-२४	राजसर्वज्ञकल्पोऽय	४-८
रणभेरीरव भुत्वा	९-१७८	राजनीतिमहाघासत्र	१-८
रणसन्नि शत्रूणा	९-२१०	राजा कमलविरोधीत्युक्ते	२-३३
रणादम्बरमालोक्य	१०-८६	रात्रौ गृहीत्वा कोदण्ड	१०-१२६



रायः कावम्बनाथोऽयं	९-१४५	रुबन्ति कोकिलाः कीरा	९-८८
रायक्षमापतिना मयङ्कुरमहा	३-७९	रूप वचोऽवररसं	९-१९०
राय कल्पान्तक युद्धे	९-१५६	रूपसौन्दर्यसपन्नो	१०-१०२
रायनाथमनोज्ञे	८-८	रूपातिशयसंपन्ना	१०-१८२
रायनाथस्य राये या	४-१३८	रूपातिशयसंपन्नो	९-९५
राय प्रतापमानुस्तान्	९-१३५	रूपेणाङ्गवत् कलायुततया	९-५६
रायप्रतापमानुस्ते	९-७७	रूपोपभोगतारुण्यं	४-१२५
रायरूपपटीं दृष्ट्वा	४-१५१	रोमाञ्चस्वेदभाषादिः	३-१०७
रायवङ्गक्षितोऽयस्य	९-२३७	लक्षण नायकानां हि	४-४३
रायवङ्गक्षितोऽयस्य	९-२७३	लक्ष्यबाचकशब्दस्य	२-१४
रायवङ्गमनोज्ञात्	९-१०५	लीलावलोकनात्तन्त्रि	१०-८२
रायवङ्गमहोनार्थं	१०-१६३	लुब्धा धीरोदता ये च	४-३३
रायवङ्गः समुद्रश्च	९-२५९	लोकशास्त्रक्रमो नास्ति	१०-६१
रावङ्गस्य कीर्तिर्वा	९-१५५	वक्तव्यमेव न प्रोक्तं	१०-८१
रायवङ्गे न दृश्यन्ते	९-२५५	वक्तु योग्यमपि स्वान्त	४-१५९
रायवङ्गेन सहान	१०-१६१	वक्तु योग्ये विशेषेऽस्मिन्	१०-१३३
रायस्य कीर्त्यां बल	९-२४१	वक्रवार्चं सोपहासा	४-७९
रायस्य दोषल स्मृत्वा	९-२१७	वक्षोरङ्गनिवासिनीं	९-१२९
रायस्यायत्नके ज्योत्स्ना	९-१५७	वक्षोरङ्गे महाश्रीर्वरमुख	९-२६५
रायारामस्थितान् वृक्षान्	९-२१६	वञ्चित्वात्मीयलोक या	४-१०२
राये दिनिवजयाय सैन्य	४-९८	वने आस्ते वरा नारी	१०-६५
रायेश स्मरसनिभ	४-१४२	वर्गद्वितीयबहुला	६-७
रायो रणाङ्गणेऽरीणा	९-१५१	वर्णानां शुद्धिरित्युक्ता	१-४८
रीतिनारेजषण्ढे	६-१७	वसन्तोद्यानकासार	३-२७
रीतिशून्या यथा कन्या	६-१	वस्तुसाधारण यत्र	९-२९८
रीतीना लक्षण तस्माद्	६-२	वाक्यदोषान् निरूप्याहं	१०-९७

वाच्यवाचकसबन्धी	२-६	विस्वरत्वाश्रुमोहादिः	३-७७
वाच्यस्य नियमस्यात्र	१०-१३१	विस्वरत्वाश्रुवैवर्ण्यं	३-६८
वाच्या प्रतीयमानेति	९-१२१	विषादाद्भुतमुत्क्रोष	१०-१५५
वाच्योत्प्रेक्षा पुन प्रोक्ता	९-१२३	विहाय शब्दालङ्कार	९-७
वामपादप्रहारेण	१०-१९०	वोरो भयानको यद्वच	३-७
विकसितगण्ड त्वीषन्	१३-७१	वृत्तिशून्यो न सूत्रार्थो	७-१
विचकिलकुसुमाना	४-१९	वृत्तीना लक्षण तस्या	७-२
विवृषकस्य भाषा वा	३-६६	वेदभिर्गीडिकालाटो	६-४
विध्यनुवादविवृत्त	१०-१००	व्यतिरेकाद्यलङ्कारे	९-२५३
विध्यनुवादविवृत्ता	१०-१३८	व्याजस्तुतिविशेषाणा	९-२६७
विध्यनुवादो कथितौ	१०-१३७	व्रजन्ति शत्रिका मार्गे	२-२०
विनयादिगुणाः प्रोक्ता	४-१६१	शठेन दृढमालिङ्गघ	१०-७०
विनापि पदेन येनेद	१०-७५	शत्रुक्षयज्ञापकधूमवैतुः	९-२९१
विना सर्वं मया दृष्ट	१०-१४६	शब्दहम्बरमात्रार्थी	२-४
विपक्षतमसा शत्रौ	९-१६९	शब्दस्य वा प्रतीतेर्वा	९-१३८
विश्वप्रबन्धसञ्ज्ञोऽय	१-२८	शब्दानामभिधेयाना	५-९
विभावैरनुभावैश्च	३-५	शब्दार्थद्वयचित्रार्थी	२-५
वियुक्तनयकस्यासौ	४-१०४	शब्दार्थयोरलङ्कारी	९-४
वियोगं प्राप्य रायेन्द्रो	९-२५६	शब्दालङ्कृतयः प्रोक्ता	९-५
विरक्तो याति पत्नीं या	१०-१४०	शब्दाश्रितप्रसादादि	६-५
विरहोत्कण्ठिता काचित्	४-८६	शब्दो जहाति मुख्यार्थं	२-१९
विवेकशौचसोभाग्य	४-११	शमाख्यस्वायिभावोऽयं	३-१०९
विवेकीति कवि प्रोक्तो	२-७	शय्याविरैजसंयुक्ते	८-१०
विषतामेति कर्पूरं	१-४७	शरच्चन्द्रनभोगङ्गा	९-४९
विस्तार याति या कान्तिः	४-१२९	शरदिन्दोरिवोत्पन्ना	९-५०
विस्मयस्वायिभावस्तु	३-१०५	शरीरावयवव्यास	४-१५७

शल्यत्रयं च संज्ञा च	१०-१५२	शोभा या दक्षता शौर्यं	४-३९
शशबरसुरगङ्गा	९-१२५	श्रित्वा रायनृपं जाति	९-५२
शस्तमोति सुखं वस्तु	१-४४	श्रिय विपक्षवर्गस्य	९-११५
शान्तनामरसो लोके	३-१२५	श्रीकामिराजबङ्गोऽभूत्	१-१७
शारदाभ्रमिवापूर्वा	९-५८	श्रीकामिराजबङ्गोऽयं	९-१३०
शारदी कौमुदी सप्त	९-३३	श्रीमद्भरतराजेन्द्र	१-११
शास्त्रं धर्मस्य सवृद्धयै	९-११४	श्रीमद्विजयकीर्तिन्दो	१-४
शास्त्रोक्तलक्षण नास्ति	१०-१२	श्रीमद्विजयकीर्त्याख्य	१-५
शिविकादोलिकाछत्र-	२-२१	श्रीराय कीर्तिजाल ते	९-२८
शिर.शेखरकर्णव-	१०-१७३	श्रीरायकीर्तिजालेन	५-२८
शीलार्जवधैर्यशौर्य-	४-४८	श्रीरायक्षितिनाथ	३-११३
शुक्लकुण्डलहरिद्रक्त	२-१२	श्रीरायक्षितिनाथकीर्तिवनिता	९-८९
शुभदो मगणो भूमि	१-६०	श्रीरायक्षितिनाथ येन	९-२०७
शृगालवत् पुरालोको	९-६२	श्रीरायक्षितिनाथ विक्रमगुणे	९-२४२
शृङ्गारः करुणः शान्तो	६-१५	श्रीरायक्षितिनाथकस्य	३-७३
शृङ्गारकरुणो लोके	७-८	श्रीरायक्षितिपस्य	३-१०८
शृङ्गारगमको हावो	४-१२३	श्रीरायक्षितिपालको	९-२९५
शृङ्गाररसवार्ताशी	१०-५२	श्रीरायक्षितिपेन धोरसमरे	३-१०३
शृङ्गारसारतरुणी	७-१०	श्रीरायक्षमापशक्ति	३-८४
शृङ्गारस्य विरोधी हि	३-१२८	श्रीराय ते नभसि वससि	४-६९
शृङ्गाराकृतिबेष्टा तु	४-४२	श्रीरायं निजगेहमागत	४-७१
शृङ्गाराख्यरसे नेतु	४-२८	श्रीराय भवतः कीर्ति	९-३१
शृङ्गाराज्जन्म हास्यस्य	३-१२६	श्रीरायभूप कीर्तिस्ते	९-२५
शृङ्गारादिरसाना तु	९-२०८	श्रीरायभूपदिग्याङ्गे	९-२७८
श्लोकाख्य-स्थायिभावो यो	३-७४	श्रीराय भो नभसि	४-८०
श्लोमाकरो ढकारोऽयं	१-४१	श्रीरायराज्ये काठिन्यं	९-२५७

श्रीरायबङ्गकान्ताभा	५-३०	सङ्ग्रामाङ्गणभूतले	७-१३
श्रीरायबङ्गसिन्धुनायकस्य	५-७	सचक्रो हरिरित्यत्र	२-३२
श्रीरायबङ्गभूपतिनिजितेन	३-१०४	सति चन्द्रे महाज्योत्स्ने	१०-११८
श्रीरायबङ्गरमणो	४-१०	सत्कीर्तिचन्द्रिकाहारं	९-८३
श्रीरायबङ्गसहिता	४-१३०	सत्कीर्त्या रायबङ्गस्य	९-१०६
श्रीरायस्य मुखेन्दुस्ते ( ? स्व )		सत्यरूपमपह्नुत्य	९-१९५
	९-६९	सदैव बलसपन्नो	९-२५२
श्रीरायस्य यशोऽमितं कुसुमितं		सद्गुतिबालविलसद्	७-१६
	५-२२	सर्वैर् यमन दृष्टिः	४-३७
श्रीरायागमनोत्सुका	४-९०	सनिमेषः सुरावीक्षो	९-१८५
श्रीराये गृहमागते	४-७६	सन्तापहारी चन्द्रोऽयं	९-१८४
श्रीराये निजनायके	४-९६	सदे(व) पुरसकाश	१-९
श्रीरायो जलधिः सुभाशु	९-६७	सन्ध्याराग वनाग्नि	९-२८९
श्रीबङ्गराजवदनं	९-३०६	सप्ताङ्गमासुरो राजे	२-३६
श्रीबङ्गेश्वर साधु साधु	९-२७५	सप्ताम्भोनिधिपानक	४-१४
श्रीशान्तिनाथदेवोऽय	९-२७२	समस्तभद्रादिमहाकवीश्वरै	१-३
श्रुतिचेतोद्वयानन्द	५-६	समस्तलोकसंव्याप्त	१०-१३२
श्लाघ्यस्य वस्तुजातस्य	१०-११३	समाप्तपुनरात्त तद्	१०-७९
श्लिष्ट निदर्शनं व्याज	९-११	समुद्रनगरीशैल	१-२४
श्लिष्यन्त स्मररायनायक	४-६६	समागविप्रलम्भाम्या	१-२५
सयोगविप्रयोगी	२-६०	समोगविप्रलम्भो तौ	३-४१
सकलङ्क सुभाशुः किं	९-३५	सञ्जयत्रायमोहोद	३-९७
सकलङ्को निराधारः	९-१४३	सरसत्वान्मृदुत्वाच्च	१०-३५
सकौशमपि नीरेज	९-३०७	सरसमधुरवाणी	४-९४
सक्रियं निष्क्रियं वस्तु	९-१५	सरसवचनलोला	५-२६
संघामनायकैश्वर्य	१-२६	सरससुरतयुद्धे	९-२३०

शरसार्वभौमसम्बन्ध	७-३	सुहृदसन्तः कीरोऽश्वः	१०-१७२
सरसो यत्र शब्दश्च	५-२५	सेवार्थमागतमहा	९-१८८
स राजा काव्यगोष्ठीषु	१-१९	सोऽपि श्रीपाण्डवज्जोऽयं	१-१५
सवज्ज काञ्चनमय	१०-१५१	स्तवनं निन्दनं चापि	९-२३४
सशङ्को ग्लानिनिर्वो	३-२०	स्त्रीरूपं निरलकार	९-१
सस्यार्थो वा कामुको वा	१०-१०७	स्वायिमावार्णवे भाषाः	३-१९
साक्षात् सङ्केतविषयो	२-१०	स्थितिर्वा ते गतिर्वा ते	९-१६०
सात्त्विकः स्वेदरोमाञ्च	३-८३	स्पृष्टं मया न ताम्बूलं	९-१६७
सापराधं निजेश या	४-७०	स्मरकेलिविनोदेन	१०-५८
सापराधो नृपो राय	९-१५३	स्मराग्निपीडिते तन्वि	१०-८८
सामग्रीमवलम्ब्येमा	३-३६	स्मरेषुश्चन्द्रिका तस्या	१०-८०
सामान्यनायकप्रोक्त	४-४४	स्मितज्योत्स्नामुखेन्दो ते	९-७०
सामान्ये यत्र वस्तुग्रे	१०-१३५	स्मितज्योत्स्नाबिकास ते	९-७३
साम्बरराज विमाति	९-३८	स्मृत्वा निजेश स्वाङ्गस्य	४-१५०
सिंहासने महारत्ने	९-११२	स्यादिन्दीवरवर्णस्तु	३-११७
सिंहो नृपतिरित्यत्र	२-२३	स्याद्वादधर्मपरमामृत	१०-१९५
सुकुमारत्वमाधुर्यं	६-११	स्वकीयशास्त्रसिद्धान्तं	१०-३२
सुकुमारत्वमोदार्यं	५-४	स्वकीया नायिका मुग्धा	४-६०
सुजनसुरकुजोऽयं	९-२६२	स्वकीया परकीयाप्य	४-४५
सुवाचबलवर्णं स्याद्	३-११८	स्वजनाक्रन्दन बन्धु	३-७६
सुमगेश निज नारी	१०-६७	स्वभावमधुरा लभ्या	१०-१०८
सुरतरवे लोकोऽय	१०-३१	स्वभावोक्त्युपमे रूपका	९-८
सुरतसदननार्या	९-१८१	स्वरो लघुरपि प्रोक्तो	१-५०
सुरराजभ्रियो रम्यं	९-१४६	स्वसङ्केतितमर्थं यत्	१०-२१
सुरलोके पुरीं दत्वा	९-२४६	स्वाधीनपतिका नारी	४-८५
सुरेन्द्रपूज्यः परिपूर्णसीत्	९-२६९	स्वामिप्रेत न वक्तव्यं	१०-१०

स्वेदकम्पनरोमाञ्च	३-१८	हसनस्यापि कीर्तेश्च	१०-१६७
हरिचन्दनकासार	१०-१६९	हारेण रायबङ्गस्य	९-१०२
हरिचन्दनहारेण	९-९३	हास्य. छान्तोऽद्भुतश्चेति	७-९
हरिततृणभक्षिणोऽमो	९-२२४	हास्यशान्ताद्भुतरसो	७-६
हरिलीलच्छविभासुरा	९-१७	हिनोति कार्यं व्याप्नोति	९-९१
हर्षमात्रेति सुरभि	१०-१७५	हेनोविना कार्यमुक्तं	१०-११६
हसति बसति चास्ते	४-१४०		



## Appendix-B

ŚC (I) and Bhāmaha (as quoted by -Nārāyaṇabhaṭṭa)

ददात्यवर्णं सप्रोतिमिवर्णो मुदमुद्रहेत् ।  
कुर्याद्विवर्णो द्वविण ततः स्वरचतुष्टयम् ॥  
अपस्यातिफल दद्यादेश सुखफलावहा ।  
ऋबिन्दुविसर्गस्तु पदादौ सभवन्ति नो ॥

क्षकारस्तु प्रयोक्तव्यः काव्यादौ सत्फलावहः ॥

I 37-47

यगणो जलरूपोऽयं धनद्विगणोऽनलः ।  
भयदाहकरस्तस्तु गगनं श्रीकरो मतः ।  
भगणं सुखकृत् सौम्यो जो भानू रोगदायकः ।  
वायव्यं सगणो दत्ते क्षयरूपं फलं सदा ॥  
शुभदो मगणो भूमिर्नगणो गौर्धनप्रदः ।

देवतावाचिशब्दानां भद्राद्यर्थप्रकाशिनाम् ।  
शब्दानां निरवद्यत्वं काव्यादौ गणवर्णतः ॥

ŚC I, 58-61

तदुक्तं भामहेन—

अवर्णात् सपत्तिर्भवति मुदिवर्णाद्धनकता—  
 न्युवर्णादिव्यातिः सरमसमवर्णाद्विरहितात् ।  
 तथा ह्येवः सौख्यं ऊत्रणरहितादसरमणात्  
 पदादौ विन्यासात् भरबहुपूर्वविरहितात् ॥  
 क खोगोचश्च लक्ष्मीं वितरति न यशो ऊस्तथा चः सुखं छ ॥

... स समृद्धिं करोति ॥  
 अन्यैस्तु देवताफलस्वरूपाभ्येषामुक्तानि-  
 मो भूमिस्त्रिगुरु श्रियं दिशति

... मुख्यगुरुं नोनकिं आयुस्त्रिल ॥  
 तदुक्तं भामहेनेव

देवतावाचकाः शब्दा ये च भद्रादिवाचकाः ।  
 ते सर्वे नैव निन्द्या स्मृलिपितो गणतोऽपि वा ॥

—Commentary of Nārāyaṇa-bhaṭṭa on Vṛttaratnā—  
 kara, pp 4-6

( Note : As already observed Vijayavarṇī and  
 Amṛtānandayogin are in close agreement in their  
 treatment of Varṇa-gaṇa-phala-sūddhi. )



## ŚC II and Kāvya-mīmāṃsā

त्यज्यते गृह्यते शब्दोऽर्थो वा तावत् पुनः पुनः ।  
 येन यावद् रुचिः स्वस्य रौचिकः स कविर्भवेत् ॥  
 शब्दहम्बरमात्रार्थो वाचिकः कविरुच्यते ।  
 अर्थं वैचित्र्यमात्रार्थो सोऽयमर्थः कविर्भवेत् ॥  
 शब्दार्थद्वयचित्रार्थो शिल्पिकः कविरुच्यते ।  
 शब्दार्थमृदुताकारी मार्दवानुगतादमाक् ॥  
 वाच्यवाचकसंबन्धि गुणदोषविदा वरः ।  
 महाकवीना मार्गज्ञो नानाशास्त्रार्थकोविदः ॥  
 विवेकीति कविः प्रोक्तो दिव्यालङ्कारयोजने ।  
 तत्परो भूषणार्थीति नाम्ना कविरुदाहृतः ॥  
 इति सप्तविधाः प्रोक्ताः कवयः कविपुङ्गवै ।

—ŚC II-3-8 ( ab )

काव्यकवि पुनरष्टधा । तद्यथा—  
 रचनाकवि शब्दकवि अर्थकविः  
 अलङ्कारकविः उक्तिकविः रसकविः  
 मार्गकविः शास्त्रार्थकविरिति । ...  
 ...त्रिधा च शब्दकविर्नामाख्यातार्थ—  
 भेदेन । • द्विषालङ्कारकवि शब्दार्थभेदेन ।

Kāvya-mīmāṃsā pp 17-19

( Note : Amṛtānandayogin and Vijayavarṇī fully agree in their classification and definition of types of poets. One of them must have borrowed from the other who must have first formulated the seven-fold classification of poets taking probably hints from Rājaśekhara's Kāvya-mīmāṃsā. )

## ŚC IV

## Daśarūpaka II

- |       |   |                                       |
|-------|---|---------------------------------------|
| 3-4   | Hero's good qualities   | 1-2                                   |
| 6-15  | Four types of hero  | 3-6 ( ab )                            |
| 16-26 | Sixteen types of hero   | 6 ( cd )-7                            |
| 27-28 | Forty-eight types of hero                                     |                                       |
| 29-32 | Four upanāyaka :  | 8-9 ( ab ) Three Netrasa-<br>hāyas .  |
|       | 1. Vidūṣaka   | 1. Pīthamarda ( Patākānā-             |
|       | 2. Pīthamarda   | yaka )                                |
|       | 3 Vita and  | 2 Vita and 3. Vidūṣaka                |
|       | 4. Nāgarika   |                                       |
| 33    | Pratīnāyakas  | 9 ( cd )                              |
| 34-42 | Set of eight Special excellences spring from hero's character | 10-14                                 |
| 43-59 | Four types of heroine .                                       | 15 ( ab ) and 20 ( cd )-<br>22 ( ab ) |
|       |   | (Note : Three types of<br>heroine :   |
|       | 1. Svakīyā  | 1. Svīyā (= Svastī,                   |
|       | 2. Parakīyā   | Svakīyā) .                            |

3. Anūṣhā and 2 Anyā (= Anyastrī,  
4. Sādhāraṇā Parakīyā) and 3. Sādhā-  
raṇa-strī (= Sadharaṇā)
- 60-66 Three types of 15 (cd)-16 (ab)  
Svīyā
- 67-71 Three types of 16 ( cd )-17  
(Svakīyā) Madh-  
yā Nāyikā
- 72-80 Three types of 18-19  
(Svakīyā) Praga-  
lbhā Nāyikā
- 81-83 Each of these 20 ( ab )  
types of heroine  
( Madhyā and  
Pragalbhā) may  
be the earlier or  
later of the Loves  
of the husband.
- 84-102 The heroine may 23 ( cd )-28  
occupy eight di-  
fferent relations  
to her lover  
(Svādhīnapatikā,  
Vāsakasajjā, etc.)
- 103-110 Four-fold Vipra- Daśarūpaka IV. 50-51(ab)  
lambha in rela- and 57-68

tion to types of  
heroine

1. Pūrvānūrā- (Note : In Dhanartjaya's  
ga 2 Māna view, if absence be due to  
3. Pravāsa and death the love sentiment  
4 Karunātmaka cannot be present )
- 111-112 Dūtīs (heroine's 29  
messengers)
- 113-160 Twenty excellen- 30-42 ( ab )  
ces of a hero-  
ine, beginning  
with Bhāva and  
ending with  
Vihṛta-the first  
three are physi-  
cal, The next se-  
ven are inherent  
characteristics of  
the heroine, then  
come ten graces.

## Appendix—C

ŚC V	Kāvya-darśa I
4-5 (ab) Enumeration of ten Guṇas, the ten Prānas (of Kāvya)	41-42 ( ab ) (Note . The ten Guṇas, according to Daṇḍī, are the Prānas of Vai- darbha Mārga) *
6 Definition of Sauku- mārya	69-71
8-9 Definitions (alterna- tive) of Audārya	76-79
11 & 13 Alternative defini- tions of Śleṣa	43-44
15 Definition of Kānti	85-92
16 Alternative definition of Kānti	Cf Vāmana's Kāvya-lam- kāra-sūtravṛtti (3 1.25)
18 Definition of Prasā- natā (= Prasāda)	45-46
20 Definition of Samādhi	93-100
21 Alternative definition of Samādhi	
23 Definition of Ojas	80-84
25 Definition of Mādhurya	51-68
27 Definition of Artha- vyakti	73-75
29 Definition of Samatā	47-50

## Appendix—C

### §C (VII) and PRY on Vrttis

Cf

अत्यन्तकोमलार्थिना शृङ्गाररसयोगिनाम् ।  
करुणास्वरसे वाचा संदर्भो वाच कैशिकी ॥  
अत्यन्तकर्कशार्थिना रौद्रवीर्यरसयोगिनाम् ।  
मदभ्रंरूपारभटी वृत्तिरुक्ता कवीश्वरे ॥  
हास्यशान्ताद्भूतरसोपेनार्थिना पृथक् पृथक् ।  
ईषन्मुद्रुना सदभ्रं भारतीवृत्तिरुच्यते ॥  
ईषत्कठिनवाच्याना सदभ्रं सात्वतीष्यते ।  
भयानकेन वीरेण रसेन सह योगिनाम् ॥  
शृङ्गारकरुणी लोकेऽत्यन्तकोमलता गती ।  
अत्यन्तकठिनौ रौद्रवीर्यरसो रसनामकौ ॥  
हास्यः शान्तोऽद्भुतश्चेति स्वल्पकोमलता गताः ।  
ईषत्काठिन्यसंपृक्तौ मतो वीरभयानकौ ॥

—VII 4-9

and,

अत्यर्थसुकुमारार्थमदभ्रं कैशिकी मता ।  
अत्युद्धतार्थमदभ्रं वृत्तिरारभटी स्मृता ॥  
ईषन्मुद्रुनसदभ्रं भारती वृत्तिरिष्यते ।  
ईषत्प्रौढार्थमदभ्रं सात्वती वृत्तिरिष्यते ॥

तत्र—अत्यन्तसुकुमारी द्वौ शृङ्गारकक्षौ मता ।  
 अत्युद्धतरसौ रौद्रवीर्यसौ परिकीर्तिता ॥  
 हास्यशालाद्भुता किञ्चित्सुकुमारा प्रकीर्तिता ।  
 ईषत्प्रीढौ समाख्यातौ रसौ वीरमयानकौ ॥

—PRY

p 158 (Kārikās 15-18)

And Cf .

अत्यन्तकोमलार्थार्थेऽल्पप्रीढसदभलक्षणा ।  
 मध्यमा कैशिकी सर्वरससाधारणा मता ॥  
 ईषत्पुद्गुसदभ्यतिप्रीढार्थगोचरा ।  
 मध्यमारभटी सर्वरससाधारणा स्पृता ॥

—VII 14-15.

and

मध्यमारभटी त्वग्या तथा मध्यमकैशिकी ।  
 वृत्ती इमे उभे सर्वरससाधारणे मते ॥  
 मृद्वर्थेऽप्यनतिप्रीढगन्धा मध्यमकैशिकी ।  
 मध्यमारभटी प्रीढेऽप्यर्थे नातिमृदुकमा ॥

PRY

p. 61 (Kārikās 23-24)

And Cf

शब्दगतप्रसादमाधुर्यादिदशगुणाश्रितानामर्थविशेषनिरपेक्षणावेदभ्या-  
 दिरीतीनामर्थविशेषापेक्षविशिष्टकैशिक्यादिबुद्धिभ्यो भेदो द्रष्टव्य ।

—Vijayavarṇī

and

वैदग्ध्योदिरोतीना शब्दगुणाश्रितानामर्थविशेषनिरपेक्षतया केवलसदभ-  
सौकुमार्यप्रौढत्वमात्रविषयत्वात् कैशिक्यादिभ्यो भेदः ।

—Vidyānātha

And Cf

असयुक्तमृदुवर्णबन्धोऽतिमृदुसदभं । सयुक्तकोमलवर्णबन्ध ईषन्मृदु-  
सदभ । अविकटपरुषवर्णबन्ध ईषत्प्रौढसदभं ।

—Vijayavarṇi

and

सदभं स्यातिमृदुत्वमसयुक्तकोमलवर्णबन्धत्वम् । अतिप्रौढत्व परुष-  
वर्णविकटबन्धत्वम् । सयुक्तमृदुवर्णोष्णीषन्मृदुत्वम् । अविकटबन्ध-  
परुषवर्णोष्णीषत्प्रौढत्वम् ।

—Vidyānātha



## Appendix—C

ŚC IX

Kāvyaḍarsa I

### On Arthālaṅkāras

3(ab) Definition of Kāvya	1 (ab)
4(cd)—5(a)	Cf Rudrata II-13
8-13 Enumeration of Alankāras	4-7 and Rudrata VII 11-12
14-15	Kāvyaḍarsa 8, 13

Cf हीनेषु वस्तेषु बालादिषु च विशेषतो रम्या जाति ।

—17-18

and शिशुपुत्रयुविकातरित्येकसङ्घान्तहीनपात्राणाम् ।

ना कालावस्थोचितचेष्टासु विशेषतो रम्या ॥

—Rudrata VI:-31

23-64 Upamā and its varieties	Kāvyaḍarsa 14 65
65-86 Rūpaka and its varieties	66-96
87-90 Arthāvr̥tti	116-119
91-97 Hetu	235 260 (ab)
98-118 Dīpaka	97-115
119-126 Utpreksā	221-234
127-137 Arthāntaranyāsa	169-179
138-146 Vyatireka	180-198
147-149 Vibhāvanā	199-204

150-174 Āksepa	120-168
175-179 Atiśayokti	214-220
180-181 Sūksma	260 (cd)-264
182-185 Samāśokti	205-213

Cf . अस्यालङ्कारस्य अन्यापदेश इति नामान्तरं वक्तव्यम् ।

and अन्यापदेश इत्यस्या नामान्यवबोध्यते यथा ॥

—Alamkārasaṃgraha V 29 (cd)

186-188 Lava	265-272
189-191 Krama	273-274
192-194 Udātta	300-303

## Appendix-Ç

### ŚC IX

### Kāvyaḍarśa I

195-200 Apahnaṽa (= Apahnuti)	304-309
201-202 Preyaḥ	275 (a)-279
203-207 Viroḍha	333-340 (ab)
208-220 Rasavad	275 (b), 280-292
221-222 Ūrjasvi	293-294
223-225 Aprastutapraśaṁsana	340 (cd)-342
226-232 Viśesokti	323-329
233-237 Tulyayogitā	330-332
238-239 Paryāyokta	295-297
240-244 Sahokti	351-355 (ab)
245-247 Parivṛtti	355 (cd)-356
248-249 Samāhita	298-299
250-260 Ślesa	310-322
261-263 Nidarsana	348-350
264-267 Vyājastuti	343-347
268-270 Āśih	357

Cf :

271-273 Samuccaya	Rudraṭa VII 19-29
274-275 Vakrokti	(Rudrata X-9 and) Alaṅkārasaṅgraha V 49
276-279 Anumāna	Rudrata VII 56-63

280-281 Viṣama	Rudrata VII 47-55
282-283 Avasara	Rudrata VII 103
284-285 Prativastūpamā	Rudrata VII 85 (Ubhayanyāsa)
286-287 Sāra	Rudrata VII 96
288-289 Bhrāntimān	Rudrata VIII 87
290-293 Saṁśaya	Rudrata VIII 59-65
294-295 Ekāvalī	Rudrata VII 109-111
296-297 Parikara	Rudrata VII 72-76
298-300 Parisaṁkhyā	Rudrata VII 79-81
301-304 Praśnottara	Rudrata VII 93-95
305-308 Saṁkara	Rudrata X 24-29

(Note - As noted elsewhere, the examples in illustration of various Alarṁkāras are composed by Vijayavarṇī himself. Vijayavarṇī's indebtedness to Daṇḍī for the definitions of most of the Alarṁkāras is indisputable. He seems to have kept in view the definitions of Rudraṭa when defining a few-Alarṁkāras )

## Appendix-C

Sc X

Kāvya prakāśa VII

### On Doṣas

2-4 Enumeration of Padadoṣas	Kārikās 50-51
40-43 Enumeration of Vākyadoṣas	Kārikās 53-55 (ab)
97-100 Enumeration of Arthadoṣas	Kārikās 55 (cd)-57
173-176 Sthīta-Samarthana	Kārikā 58
177-180 Enumeration of Rasadoṣas	Kārikās 60-62

A study of the definitions of the various Doṣas, classified into different sets, reveals that Vijayavarṇī has closely followed Mammaṭa

## Appendix-D

Śc	aṇḍ	Alaṃkārasaṅgraha
Chapter I :		Chapter I :
Varṇa-gaṇa-śuddhi		Varṇa-gaṇavicāra
34-48 (ab) Varṇa-śuddhi	}	23-36
58-82 Gaṇa-phala		
Chapter II :		Chapter II :
Kāvya-gataśabdārthanīśaya		Śabdārthanirṇaya
3-7 (ab) Kavibhedāh		2-6 (ab)
8 (cd)-41 Caturvidhā Vākyārthāḥ		10-35
Chapter III		Chapter III :
Rasabhāvanīśaya		Rasanirṇaya

The treatment of Rasa, Bhāva, Rasa-Sāmagrī, Varieties of Rasa and Bhāva in both the works is after the treatment generally described in standard works on poetics with slight variations in a few details and more or less emphasis on a point or two. Thus we find in Śc★ the description of S'ānta-rasa in accordance with the religion and philosophy of the Jainas, whereas in Alaṃkārasaṅgraha§, it is in accordance with Vedānta, and

★ Chapter III, 109-112

§ Chapter III, 55-58 (ab)

particularly, with S'aiva faith. Sc treats of Ś'ṛṅgāra-rasa at great length in all its ramifications whereas Alambkāra-saṅgraha treats of it briefly-leaving out some of its main divisions.

Chapter IV :  
Nāyakabhedanīścaya

Chapter IV :  
Netrībhedanīrṇaya

The treatment of this topic of the Heroes and the Heroines and their types in both the works is in agreement with Daśarūpaka.

Chapter V : Daśaguṇanīścaya

Chapter V : Alambkāra-  
nīrṇaya |

4, 6, 9, 13, 15,  
18, 21, 23, 25, 27

2, 5, 6, 3(ab), 7(cd),  
3 (cd), 8 (ab), 7(ab),  
5 (ab), 6 (ab)

Although the treatment of these ten Guṇas in both the works is in agreement with the one found in Kāvyaḍarśa, the wording of definitions of a few Guṇas in both these works is very striking and leads one to the inference that S'C probably knew Alambkārasaṅgraha:

( 1 ) आरोपादन्यधर्मस्य प्रकृतार्थस्य गौरवम् ।

समाधिरुच्यते सद्भिरिति वा लक्षणं स्पृतम् ॥

—21

समाधिरन्यधर्माणामध्यासादर्थगौरवम् ।

—8 (ab)

( ॥ ) पदेन वा प्रसन्नोऽर्थो यत्र सा वा प्रसन्नता ।

—18 (cd)

पदे प्रसन्नैयंनार्थः प्रसादोऽसौ प्रतीयते ।

—३ (cd)

( ॥ ) पद्ये समासबाहुल्यं गद्ये वा हृद्यमुच्यते ।

जो जो गुण ... .. ॥

—23

वाक्ये समासबाहुल्यं हृद्यमोजोऽभिधीयते ।

—7 (ab)

( ॥ ) सरसो यत्र शब्दवच्च सरसोऽर्थोऽपि जायते ।

तन्माधुर्यमिति प्रोक्त कर्णानन्दविषादकम् ॥

—25

सरसो यत्र शब्दाद्यौ माधुर्यं श्रुतिमोदकम् ।

—5 (ab)

( ॥ ) शब्दानामभिधेयानां गुणोत्कर्षो यदाश्रया ।

तदौदार्यं मतं .. .. ॥

—9

शब्दार्थयोर्गुणोत्कर्षो यत्र सा स्यादुदारता ।

—6 (cd)

Chapter VI • Rīti nīśaya Chapter V. Alambakāranirṇaya

4 (ab) Four-fold Rīti

1

6-7, 9, 11, 13

9, 10, 11, 12

13-16 Inherent relation

13-14

between Guṇas and Rasas



**Chapter VII: Vṛtti-niścaya Chapter VIII: Vṛtti-nirūpaṇa**

The treatment of Vṛttis in SC is in close agreement with that of PRY whereas that in Alaṅkārasaṅgraha is in very close agreement with the one in Nāṭyaśāstra.

**Chapter IX :****Alaṅkāranirṇaya****Chapter V :****Alaṅkāranirṇaya**

In the treatment of the Arthālaṅkāras Vijayavarṇī and Amṛtānandayogin are heavily indebted to Daṇḍī's Kāvyaḍarśa. Vijayavarṇī deals with thirty-three Alaṅkāras as found in Daṇḍī's work and in Alaṅkārasaṅgraha, but, in addition, he treats of fourteen Alaṅkāras probably in accordance with Rudrata's Kāvyaḷaṅkāra.

**Chapter X :****Dosaḡuṇanirṇaya****Chapter VI :****Dosaḡuṇanirṇaya**

The treatment of this topic, of Doṣas ( and the peculiar circumstances in which they cease to be so ) in both the works is after Maṃmaṭa's Kāvyaḡrakāśa ( Ullāsa VII ).

## Appendix-E

### पारिभाषिकाणामन्येषां च विशिष्टानां शब्दानां विशिष्टस्थल- सूचिका मातृकावर्णक्रमेणानुक्रमणी

अक्षरम् १०६१	अनियम ( अर्थः ) १०१३३
अक्षरलक्षण २१७	अनुक्तवाच्यम् (= अनभिहित- वाच्यम्) १०८१
अतिशयोक्ति (= अतिशयोक्ति ) १ १७५ १ १७६-१७७	अनुकूल (नायकः) ४१८
अतिशयोपमा १३१-३२	अनुवितार्थम् १०२६
अतिहसितम् ३७०	अनुशास्त्रोपलंकारः ११५८-१५९
अतीतसाध्यगोचरानुमानालंकारः १ २७८-२७९	अनुमाय ३१६
अतीताक्षेपालंकार १ १५१-१५२	अनुमानम् १२७६
अत्यपकृष्टसमुच्चय १ २७३-२७४	अनुशयाक्षेपालंकार ११६८-१६९
अत्युत्कृष्टसमुच्चयालंकार १. २७२-२७३	अनुशोभाक्षेपालंकारः १ १६७-१६८
अद्भुताख्यरसबदलंकार १ २१६-२१७	अनुहा ( नायिका ) ४५०
अद्भुतातिशयोक्ति १ १७९-१८०	अन्त्य(वर्ति)क्रियादीपकम् १११८-११९
अद्भुतोपमा १३३-३४	अन्त्यवर्तिक्रियापददीपकालंकार १ ११०-१११
अद्भुतो रस ३ १०५	अन्त्यवर्तिगुणपददीपकालंकार. ११११-११२
अधिकपदम् १०७५	अन्त्यवर्तिद्वयपददीपकालंकार १११२-११३
अनागताक्षेपालंकार १ १५३-१५४	
अनादराक्षेपालंकार. १ १६०-१६१	

अन्त्यवर्तिसंज्ञापददीपकालंकारः

९\*११३-११४

अभ्यशब्दसन्धि ( = शब्दान्तर-  
सन्धि , नियामक ) २ ३७

अभ्यापदेश ९ १८५-१८६

अभ्योन्योपमा ९\*२७-२८

अपह्नव ( = अपह्नुति ) ९ १९५

अपुष्ट (अर्थ) १०\*१०१

अपूर्वसमासोक्ति ९ १८५-१८६

अप्रतीतम् १०\*३२

अप्रयुक्तम् १०\*१३

अप्रशस्तनिदर्शनालंकार

९\*२६३-२६४

अप्रस्तुतार्थम् १०\*८३

अप्रस्तुतप्रशसनम् ( = अप्रस्तुत-  
प्रशंसा ) ९ २२३, ९ २२४-२२५,  
९\*२२५-२२६

अस्थानस्थपवम् ( = अवस्थितम् )

१० ७१

अस्थानस्थसमासम् १० ७३

अभवन्मतयोगम् १०\*९३

अभावरूपनिर्वर्त्यविषयहेत्वलंकार

९\*९४-९५

अभिन्नपदद्विलुप्तम् ९\*२५१-२५२

अभिसारिका ४\*१०१

अभूतोपमा ९ ४७-४८

अभङ्गलम् (अवलीलम्) १०\*१९

अयुक्तरूपकम् ९ ७४-७५

अयुक्तार्थान्तरग्यास\* ९\*१३३-१३४

अर्थ (नियामक) २\*३६

अर्थव्यक्तिः ५\*२७

अर्थकृतविरोधालंकारः ९\*२०७-

२०८

अर्थान्तरग्यासः ९ १२७ \*

अर्थान्तरालोपालंकार ९\*१७१-

१७२

अर्थान्तरैकवाचकम् १०\*८७

अर्थालंकारः ९\*७

अर्थावृत्ति ९ ८७-८८

अलंकारः ९\*३

अवयवरूपकम् ९ ७०-७१

अवयविरूपकम् ९\*७१-७२

अवहसितम् ३\*७०

अविरुद्धक्रियाद्वेषः ९ २५५-२५६

अविरुद्धद्वेष ९ २५९-२६०

अवसरः ९\*२८२, ९ २८३-२८४

अवाचकम् १० १०

अविमृष्टविधेयाशम् १०\*२८

अवलीलम् १० १७

अवलोल. (अर्थः) १० ११९

असमर्थम् १०\*५

असाधारणोपमा ९\*४६-४७

असभावितोपमा ९*४८-४९	इन्दोवरवर्णः ३*११७
असमतपराथम् १० ८५	उक्तविरुद्ध (अर्थः) १०*१२७
अहेतुक (= निनिमित्तः, अर्थ.) १० ११५	उत्तम (हास्यरसः) ३*६९
आक्षेप. २ ४	उत्प्रेक्षा ९ ११९
आक्षेपरूपकम् ९ ८१-८२	उदात्तम् (अलकारः) ९*१९२
आचिख्यासोपमा ९*४१-४२	उद्दापनो विभाव ३*१५
आदिवर्तिक्रियापददोषकालकार ९ १००-१०१	उपमायकाः ४*२९
आदिवर्तिगुणपददोषकालकार ९ १०१-१०२	उपमा ९*२३
आदिवर्तिजातिपददोषकालकार ९ ११-१००	उपमापङ्क्तयः ९*२००
आदिवर्तिद्वयपददोषकालकार ९*१०२-१०३	उपमारूपकम् ९ ७९-८०
आदि वर्तिसजापददोषकालकार ९ १०३-१०४	उपमाद्वेष ९ २६०-२६१
आधिक्योपेतभेदलक्षणव्यति- रेकालकार ९ १४३-१४४	उपहतलुप्तविसर्गम् १०*४४
आरभटो ७ ५	उपहसितम् ३ ७०
आथ (कावि) २*४	उपायाक्षेपालकारः ९ १६५-१६६
आलम्बनो विभाव ३ १५	उभयव्यतिरेकालकारः ९ १४०- १४१
अवृत्तिः (अलकार) ९*८७	उभयावृत्तिः ९*८९-९०
आगीः (अलकार) ९ २६८, ९*२६९-२७०, ९*२७०-२७१	ऊर्जस्विनाम लकारः ९*२२१, ९*२२२-२२३
आशीवचनाक्षेपालकारः ९ १६१-१६२	एकव्यतिरेकालकारः ९ १३९- १४०
	एकाग्रदोषकम् ९ ११७-११८
	एकावली ९ २९४, ९*२९५-२९६
	ऐश्वर्यमहत्त्वोवात्तालकार ९*१९४-१९५
	ओज ५*२३

औचित्यम् (नियामकः) २३८	कष्टकल्पना (रसदोष) १०१९१-१९२
औदार्यम् ४४१, ५८-९, ५३१	कान्ति ४१२७, ५१५, ५१६
औदार्यम् (अलंकारः) ४१३५	कारणाक्षेपालकारः ९१५६-१५७
गमितम् १०५१	कारणान्तरकल्पनाविभावना ९१४८-१४९
गाम्भीर्यम् ४४०	कार्यकारणसहजम्कथनसहोक्तिः ९२४४-२४५
गुण २१२	कार्याक्षेपालकार ९१५७-१५८
गुणवैकल्यविशेषोक्तिः ९२२७-२२८	काल (नियामकः) २३५
गुणसहभावकथनसहोक्तिः ९२४१-२४२	कलिकञ्चितम् ४१४७
गुणाष्टकम् ४३५	कुट्टमितम् ४१५३
गौडो रीति ६९	केशिकी ७४
गौणोऽर्थः २२२	क्रम (अलंकारः) ९१८९
गौरवर्ण ३१२१	९१९०-१९१, ९१९१-१९२
ग्राम्यम् १०१५	क्रिया २११
ग्राम्य (अर्थः) १०१०९	क्रियावैकल्यविशेषोक्तिः ९२२९-२३०
कथितपदम् १०५७	क्रियासहभावकथनसहोक्तिः ९२४२-२४३
कनिष्ठा (मध्या) ४८१	क्रियायैका अभिन्नश्लेषः ९२५४-२५५
करुणाख्यरस ३७४	विलम्बम् १०२३
करुणाख्यरसबदलकारः ९२१३-२१४	व्यञ्जना ४९९
करुणात्मक (विप्रलम्भशृंगारः) ४१०७	चक्षु प्रीति (= नयनप्रीतिः, अवस्था) ३४४
कलहान्तरिता ४९१	चटूपमा ९४४-४५
कषायवर्ण ३११९	
कष्ट (अर्थः) १०१०३	

षोष्ठादिः (नियामकः) २४१

षोष्ठाप्रकाशनशैवालकारः

९१८८-१८९

भ्युत्तसंस्कृति १०१२

अधन्य (हास्यरस) ३६९

अहृत्यजहती लक्षणा २१९

अहल्लक्षणा २१५

आगः (अवस्था) ३५०

आति २११, ९१५

आतिवैकल्यविशेषोक्तिः

९-२२८-२२९

जुगुप्साकरम् (अवलीलम्) १०२०

जापकहेत्वलकारः ९९७-९८

ज्येष्ठा (मध्या) ४८१

तनुता (अवस्था) ३५२

तत्त्वाख्यानोपमा ९४५-४६

तत्त्वापह्नुतिरूपकम् ९८४-८५

तुल्ययोग (= तुल्ययोगिता)

९२३३, ९२३४

तेज ४३६

त्यक्तपुनस्वीकृत १०१३९

त्रपानाशा (अवस्था) ३५६

दक्षिणः (नायक) ४२४

दयावीर ३८७

दानवीर. ३८७

दानवीररसाक्षरसमवलकारः

९२११-२१२

दीपकम् ९९८

दीप्ति. ४१२९

दुष्क्रम. १०१११

दूत्य ४१११

देश. (नियामकः) २४०

द्रव्यम् (मुख्यार्थः) २१२

द्रव्यवैकल्यविशेषोक्तिः

९२३०-२३१

द्राक्षापाकः ८६

धर्मवीररसाक्षरसमवलकार

९२१२-२१३

धर्मक्षिपालकार ९१५४-१५५,

९१७३-१७४

धर्मोपमा ९२४-२५

धर्मक्षिपालकार. ९१५५-१५६

धीरललित ४९

धीरशान्तः ४११

धीराधीराप्रगल्भा ४७९

धीरोदात्तः ४७

धीरोद्धत. ४१३

धूम्रवर्णः ३१२२

धृष्ट. (नायक) ४२२

धैर्यम् ४१३७

ध्वनि. २२४

लन्धिः ३१२३	पञ्चपरमेष्ठिनः ३११०
नागरिकः ४३२	पतत्प्रकर्षम् १०९५
नायकः ४५	पदबोधाः १०४
नायिका ४४४	पदावृत्तिः ९८८-८९
नालिकेरपाकः ८७	परकीया (नायिका) ४५२-४५४
निर्देशनम् ९२६१	परब्रह्मा (अधिदेवता) ३१२५
निन्दापरमुख्ययोगिता ९२३७-२३८	परब्रह्माक्षेपालकार ९१६४-१६५
निन्दास्तुतिः ९१८६, ९१८७-	परिकरः ९२९६, ९२९७-२९८
१८८	परिसंख्या ९२९८, ९२९९-३००,
	९३००-३०१
निन्धोपमा ९३९-४०	
नियमनिषेधलेखः ९२५८-२५९	परिवृत्तिः ९२४५
नियमोपमा ९२९-३०	पर्यायीकृतम् ९२३८, ९२३९-२४०
नियामका २२९	पाक ८५
निरर्थकम् १०८	पाञ्चाली रीतिः ६११
निर्णयोपमा ९३६-३७,	पीठमर्दः ४३१
९२९३-२९४	पुनरुक्तः (अर्थः) १०११७
निर्धर्त्यकारकविषयहेत्वर्लकारः	पूर्वानुरागः ४१०५
९९३-९४	प्रकरणम् (नियामकः) २३६
निश्चय (नयः) ३११०	प्रगल्भता ४६५ ४१३३
निश्चयातिशयोक्तिः ९१७८-१७९	प्रगल्भा अधीरा ४७७
निश्चयान्त ९२९३-२९४	प्रगल्भा घीरा ४७४
नीलजीमूतसंनिभः ३१९३	प्रतिकूलग्रहः (रसदोगः)
श्वेतगुणाः ४४	१०१९२-१९३
नेयार्थम् १०२१	प्रतिकूलवर्णम् १०६९
न्यूनपदम् १०५५	प्रतिनायकाः ४३३

प्रतिवस्तूपमा ९५४-५५,  
९२८४, ९२८५-२८६

प्रतिषेधोपमा ९४३-४४  
प्रतीयमानसादृश्यभेदमात्रव्यति-  
रेकालकार ९१४२-१४३

प्रतीयमाना (उत्प्रेक्षा) ९१२१  
प्रभुत्वाक्षेपालकार ९१५९-१६०  
प्रवास. ४१०६  
प्रवास्तनिदर्शनालकार ९२६२-  
२६३

प्रवासोपमा ९४०-४१  
प्रश्नोत्तरालकार. ९३०१  
प्रसन्नता ५१८  
प्रसिद्धिविरुद्धः (अर्थ) १०१२३  
प्रसिद्धिहतम् १०५९  
प्राप्यविषयकारकहेतुलकार  
९९६-९७

प्रेयोऽलकार ९२०१,  
९२०२-२०३

प्रोषितभर्तृका ४९७  
बहूपमा ९४९-५०  
बिम्बोक ४१५५  
बीभत्सरस ३९९  
बीभत्साखरसवदलकार.

९२१४-२१५

बुद्धिमहत्त्वोदात्तालकार  
९१९३-१९४

भग्नप्रक्रमम् १०८९  
भयानकरसः ३९४  
भयानकाखरसवदलकार  
९२१७-२१८

भारती ७६  
भावः ४११८  
भावः ३१२  
भावभास १०१८४  
भाविसाध्यगोचरानुमानालकार

९२७९-२८०

भ्रान्तिमदलकार. ९२८९-२९०

भ्रान्तिमान् ९२८८  
भिन्नपदार्थलट्म् ९२५२-२५३  
भिन्नाभिन्नाविशेषणसमासोक्ति.

९१८४-१८५

भूषणार्थी २७  
मध्यमः (हास्यरसः) ३६९  
मध्यमा आरभटी ७१५  
मध्यमा कैशिकी ७१४  
मध्या (नायिका) ४६३  
मध्या अधीरा ४७०  
मध्या धीरा ४६८  
मन सवित (अवस्था) ३४६  
मरणम् (अवस्था) ३६२



महाकालः ३१२२	युक्तावन्तिरन्यासः ९१३४-१३५
मध्यवर्तिक्रियापददीपकालंकारः ९१०५-१०६	युद्धवीर ३८७
मध्यवर्तिगुणपददीपकालंकारः ९१०६-१०७	युद्धवीररसाख्यरसबदलंकारः ९२१०-२११
मध्यवर्तिजातिपददीपकालंकारः ९१०४-१०५	रक्तवर्ण ३१२०
मध्यवर्तिद्रव्यपददीपकालंकारः ९१०७-१०८	रसः ३५
मध्यवर्तिसजापददीपकालंकारः ९१०८-१०९	रसविच्युतम् (= रसच्युतम्) १०७७
माधुर्यम् ४३८, ४१३१, ५२५	रसवान् (= रसवद्) अलंकारः ९२०८
मानः ४१०६	रसाभास १०१८१
मार्तबानुगनावभाक् २५	रीति ६३
मालादीपकम् ९११४-११५	रुद्र. (अभिदेवता) ३१२०
मालोपमा ९५१-५२	रूपकम् ९६५
मुषयोऽर्थः २१०	रोषाक्षेपालंकार ९१६६-१६७
मुग्धा (नायिका) ४६१	रोचिक (कवि) २३
मूर्च्छा (अवस्था) ३६०	रोद्ररस ३८०
मोट्टावितम् ४१४९, ४१५०	रोद्राख्यरसबदलंकार ९२१८-२१९
मोह (अवस्था) ३५८	लक्षणा २१३
मोहोपमा ९३४-३५, ९२८९-२९०	ललितम् ४४२, ४१५७
यत्नाक्षेपालंकारः ९१६३-१६४	लवः ९१८६
युक्तरूपकम् ९७३-७४	लाटो वृत्ति (= रीतिः) ६१३
युक्तायुक्तावन्तिरन्यासः ९१३५-१३६	लिङ्गम् (नियामक) २३७
	लीला ४१३९
	वक्रोक्तिः ९२७४, ९२७५-२७६

वचोभोपनक्षालंकारः

९१८७-१८८

वर्तमानसाध्यभोचरानुमाना-

लंकार ९२७७-२७८

वर्तमानाक्षेपालकारः ९१५२-१५३

वस्तूपमा ९२५-२६

वाक्यार्थोपमा (एकेवशब्दा)

९५२-५३

वाक्यार्थोपमा (अनेकेवशब्दा)

९५३-५४

वाचिक. (कवि) २४

वाक्योत्प्रेक्षा ९१२१, ९१२५-

१२६, ९१२६-१२७

वासकसज्जिका ४८९

वासुदेव ३११७

विकार्यविषयकारकहेत्वलंकार

९९५-९६

विक्रियोपमा ९५०-५१

विघ्नराज ३११८

विच्छित्ति ४१४३

विट ४३२

विदूषक ४३०

विधाता (अधिदेवता) ३१२४

विधुप्रबन्ध १२८

विध्यनुवादविवृतः (अर्थ.) १०१३७

विद्याविरुद्ध (अर्थ) १०१२५

विप्रयोग. (नियामकः) २३२

विप्रलब्धा ४९३

विप्रलम्भशृङ्गार ४१०४

विप्रलम्भशृङ्गाररस. ३४०

विभावः ३१४

विभावना ९१४७

विभ्रमः ४१४५

विरहोत्कण्ठिता ४९५

विरुद्धक्रियाद्वेषः ९२५६-२५७

विरुद्धमतिकृत् १०३०

विरोधोपमा ९४२-४३

विलास ४३७, ४१४१

विपर्ययाथान्तरन्यासः ९१३६-१३७

विपर्यालोपमा ९२६-२७

विरुद्धरूपकम् ९७७-७८

विरुद्धार्थदीपकम् ९११५-११६

विरोचक (= विरोध) ९२०३

विरोधातिशयोक्ति ९१७९-१८०

विरोधिता (= विरोधः,

नियामक) २३३

विवेकी (कवि) २७

विशेषपरिवृत्त (अर्थः) १०१३३

विशेषस्थार्थान्तरन्यासः

९१३०-१३१

विशेषोक्ति ९२२६

विश्वव्यापिनामार्थान्तरन्यासः

९१२८-१२९

विषयं रूपकम् ९७५-७६  
 विषयः ९२८०  
 विषयापह्नवालंकारः ९१९९-२००  
 विषयद्वेषः (विषयद्वेषः, अवस्था)

३५४

विसदृशोपरिवृत्तिः ९२४७-२४८

विसंखि १०६४

विहसितम् ३७०

वीररसः ३८६

विहृतम् ४१५९

वृत्तिः ७३

वैदर्भी रीतिः ६७

व्यक्तगूढोत्तरप्रश्नोत्तरालंकारः

९३०४-३०५

व्यक्तप्रश्नगूढोत्तरालंकारः

९३०३-३०४

व्यक्तप्रश्नोत्तरालंकारः ९३०२-३०३

व्यक्ति (नियामक) २३९

व्यतिरेकः ९१३८

व्यतिरेकरूपकम् ९८०-८१

व्यभिचारिभावः ३१९

व्यर्थोक्त १०११३

व्यवहार (नय) ३११०

व्यस्तरूपकम् ९६७-६८

व्याहतः (व्यर्थ) १०१०७

व्याजस्तुतिः ९२६४

व्याजस्तुत्यलंकारः ९२५५-२६६

व्रीडाकरम् (जबलीकम्) १०१८

शक्तिः (= सामर्थ्यम्,

नियामकः) २३

शठः (नायकः) ४२०

शतमन्युः ३१२१

शब्दकृतविरोधः ९२०४-२०५

शब्दालंकृतयः ९५

शान्तरसः ३१०९

शान्तरसाक्षरसबदलंकारः

९२१९-२२०

शान्तिजिनः ९२१२

शिल्पिकः (कविः) २५

शृङ्गाररसः ३८

शृङ्गाराक्षरसबदलंकारः

९२०९-२१०

शृङ्गारार्णवचन्द्रिका १२२

शोभा ४३९, ४१२५

शिलष्टम् ९२५०

श्राद्धदेवः ३११९

श्रुतिकटु १०७

श्लिष्टव्याजस्तुतिः ९२६६-२६७

श्लिष्टाक्षेपालंकारः ९१६९-१७०

श्लिष्टार्थदीपकम् ९११६-११७

श्लिष्टार्थान्तरन्यासः ९१३१-१३२

श्लेषः ५११, ५१३

इलेषोपमा ९३७-३८

संयोग (नियामक) २३२

सहाय (अलंकार) ९२९०,

९२९१-२९२, ९२९२-२९३,

९२९३-२९४

सहायक्षेपालकार ९१७०-१७१

सहायतिशयोक्ति ९१७७-१७८

सहायोपमा ९३५-३६, ९२९३-

२९४

सकरूपकम् ९६९-७०

संकर ९३०५, ९३०६-३०७,

९३०७-३०८

सकीर्णम् १०५३

सकल्प (अवस्था) ३४८

सजातिव्यतिरेकालंकार

९१४६-१४७

संचारिभावा (त्रयस्त्रिंशत्) ३२२

सत्त्वम् ३१७

संतानोपमा ९३८-३९

संदिग्धम् १०२४

संदिग्ध (अर्थ) १०१०५

सदृशव्यतिरेकालंकार ९१४४-

१४५, ९१४५-१४६

सदृशार्थपरिवर्ति ९२४६-२४७

सनियम. (अर्थ) १०१२९

सनियमश्लेष ९२५७-२५८,

९३००-३०१

समता (= साम्यकम्) ५२९

समस्तरूपकम् ९६६-६७

समस्तव्यस्तरूपकम् ९६८-६९

समाधाररूपकम् ९८२-८३

समाधि ५२०, ५२१

समानविशेषणभिरुपविशेष्य-

समासोक्ति ९१८३-१८४

समाप्तपुनरास्तम् १०७९

समासोक्ति ९१८२

समाहितम् ९२४८

समुच्चय ९२७१

समुच्चयोपमा ९३०-३१

संयोग (शृङ्गार) रस ३३७

सविशेषणरूपकम् ९७६-७७

सहचरमिश्र १०१४१

सहेतुव्यतिरेकालंकार ९१४२-१४३

सहोक्ति ९२४०, ९२४३

साकाङ्क्ष (अर्थ) १०१२१

साक्षेपव्यतिरेकालंकार ९१४१-

१४२

साचिव्याक्षेपालकार ९१६२-

१६३

सात्वती ७७

सात्विकाष्टकम् ३१८

सात्विकोभाव ३१७	स्वभावोक्ति. ९१४
साधारणा (नायिका) ४५७	स्वरादि (नियामक) २४०
सामान्यव्यत्यय ( = अविशेष- परिवृत्त ) १०१३५	स्वरूपापह्नवालकार ९१९६-१९७
सारालकृति ( = सारालकार.) ९२८६, ९२८७-२८८	स्वशब्दग्रहणम् (रसदोष) १०१८७
साहचर्यम् (नियामक) २३४	स्वाधीनपतिका ४८७
मुषाघबलवर्ण ३११८	हतवृत्तम् १०४६
सूक्ष्म ९१८०, ९१८१-१८२	हसितम् ३६९
शौकुमार्यम् ५६	हाव ४१२१
स्तुतिपरतुल्ययोगिता ९२३५-२३६	हास्यरस ३६४
स्थायिभाव ३३	हास्याख्यरसबदलकार. ९२१५- २१६
स्फटिकवर्णभाक् ३१२५	हेतु ९९१, ९९२
स्मितम् ३६९	हेतुरूपकम् ९७८-७९
स्थिरत्वम् ( = स्थैर्यम् ) ४३९	हेतुविशेषोक्ति ९२३१-२३२
स्याद्वाद ३१११, १०९५	हेतूपमा ९५६-५७
स्वकीया ( = स्वीया, नायिका) ४४८	हेत्वाक्षेपालकार. ९१७२-१७३
स्वभावविभावना ९१४९-१५०	हेमवर्ण ३१२४
	हेला ४१२३

## REFERENCES

1. Alaṅkārasaṃgraha of Amṛtānandayogin  
– The Adyar Library, Adyar, 1949
2. Alaṅkārasaṃgraha by Amṛtānandayogin  
– Śrī Venkatesvara Oriental Institute, Tirupati,  
1950
3. Candrālōka of Jayadeva  
– The Gujarati Printing Press, Bombay, 1923
4. Daśarūpaka of Dhanañjaya  
– Nīrnaya-Sāgar Edition, Bombay, 1941
5. Kāvyaḍarśa of Daṇḍin  
– Bhandarkar Oriental Research Institute, Poona,  
1938
6. Kāvyaṃīmāṃsā of Rājaśekhara  
– Oriental Institute, Baroda, 1934
7. Kāvyaṃprakāśā of Maṃṃta  
– Rajasthan Oriental Research Institute, Jodhpur,  
1959.
8. Kāvyaālankāra of Bhāmaha  
– Kāśī Sanskrit Series, Benares, 1928

9. Kāvyaśāstra of Rudraṭa  
— Kāvyaśālā 2, Nirṇaya-Sāgar edition, 1909
10. Kāvyaśāstrasūtravṛtti of Vāmana  
— Published by Atmaram and Sons, Delhi, 1954
11. Nāṭyaśāstra of Bharatamuni  
— Oriental Institute, Baroda, 1956.
12. Pratyāpradīpikā of Vidyānātha  
— Bombay Sanskrit and Prakrit Series, No. LXV  
1909
13. Sarasvatīkaṇṭhābharaṇa by Bhojadeva  
— Kāvyaśālā 94, Nirṇaya Sāgar edition, Bombay,  
1934
14. Vṛttaratnākara by Kedārabhaṭṭa,  
— Nirṇaya Sāgar edition, 1908.
15. A History of Sanskrit Literature—A B Keith, 1928
16. History of Classical Sanskrit Literature  
— M. Krishnamachariar, Madras, 1937.
17. The Sanskrit Drama—A B Keith, 1964
18. The Number of Rasas—V. Raghavan  
The Adyar Library, Adyar, 1940.
19. Studies on Some Concepts of the Alankāraśāstra  
— V. Raghavan  
— The Adyar Library, Adyar, 1942.

20. Jaina Siddhānta Bhāskara, Vol. XXIII, Part I  
December 1963 – PP 18-29 – Dr. Nemichandra  
Shastri's article – Do Alankāra Granthon ki  
Pāṇḍulipiyan
21. Praśasti-Sangraha, (PP 73-78) edited by  
Pt K Bhujabali Sastri, Arrah, 1942





## शुद्धिपत्रम्

५०	५०	एव पठितव्यम्
९	१६	साजहल्लक्षणेतरा
१३	१६	सात्त्विकाष्टकम्
२२	५	दिनिष्कासिता.
२६	१८	शृङ्गाराख्यसे
२८	१५	लुब्धा धीरोद्धता
२९	४	॥ ३८ ॥
२९	५	शोभा या
४३	१७	गुणोत्कर्षा
४९	९	बोमत्स
५२	९	निष्पाकं
६४	१३	मुष्मासूनिर्णय
६८	२०	तन्त्रविदय
८६	२१	तद्धि पर्यायोक्त
१०७	१६	अर्ममतपरायं
१०७	१९	इत्यमतपरायं—
१०९	२	व्यर्थोक्तानां
१०९	२२	[ टिप्पणी अत्र १०७ तमस्य इलाकस्य मातु- कामामेव त्रुटित द्वितीयार्धम् “व्याहृतोऽर्थ स उक्त स्यात्तत्त्वनिश्चयको- वेदे.” इति पूरणोपम इत्यह अन्ये । ]
११७	१२	नीरेजादिप्रवर्तनम्



## MĀNIKACHANDRA D. J. GRANTHAMĀLĀ

\* The Serial Numbers marked with asterisk are out of print

\*1 **Laghiyastraya-ādi-saṅgrahaḥ** : This vol. contains four small works : 1) *Laghiyastrayam* of Akalaṅkadeva (c 7th century A. D.), a small *Prakaraṇa* dealing with *pramāṇa*, *naya* and *pravacana*. Akalaṅka is an eminent logician who deserves to be remembered along with Dharmakīrti and others. His works are very important for a student of Indian logic. Here the text is presented with the Sk. commentary of Abhayacandrasūri. 2) *Sparūpasambodhana* attributed to Akalaṅka, a short yet brilliant exposition of *ātman* in 25 verses. 3-4) *Laghu-Sarvajña-siddhiḥ* and *Bṛhat-Sarvajña-siddhiḥ* of Anantakīrti. These two texts discuss the Jaina doctrine of Sarvajñatā. Edited with some introductory notes in Sk. on Akalaṅka, Abhayacandra and Anantakīrti by PT. KALLAPPA BHARAMAPPA NITAVE, Bombay Saṁvata 1972, Crown pp. 8-204, Price As. 6/-

\*2 **Sāgara-dharmāmṛtam** of Āśadhara : Āśadhara is a voluminous writer of the 13th century A. D., with many Sanskrit works on different subjects to his credit. This is the first part of his *Dharmāmṛta* with his own commentary in Sk dealing with the duties of a layman. PT. NATHURAM PREMI, adds an introductory note on Āśadhara and his works. Ed by PT. MANOHARLAL, Bombay Saṁvat 1972, Crown pp. 8-246, Price As 8/-.

\*3. **Vikrāntakaṣṭakam** or **Sulocanāṣṭakam** of Hastimalla (A.D. 13th century) A Sanskrit drama in six acts. Ed. with an introductory note on Hastimalla and his works by PT. MANOHARLAL, Bombay Samvat 1972, Crown pp 4-164, Price As. 6/-.

\*4. **Pārśvanātha-caritam** of Vādirājasūri : Vādirāja was an eminent poet and logician of the 10th century A. D. This is a biography of the 23rd Tīrthaṅkara in Sanskrit extending over 12 cantos Edited with an introductory note on Vādirāja and his works by PT MANOHARLAL, Bombay Samvat 1973, Crown pp 18-198, Price As 8/-

\*5. **Maithilīkalyāṇam** or **Sitānāṣṭakam** of Hastimalla : A Sk drama in 5 acts, see No 3 above Ed with an introductory note on Hastimalla and his works by PT MANOHARLAL, Bombay Samvat 1973 Crown pp 4-96, Price As 4/-

6 **Ārādhanaśāra** of Devasena A Prākṛit work dealing with religio-didactic topics Prākṛit text with the Sk commentary of Ratnakīrtideva, edited by PT. MANOHARLAL, Bombay Samvat 1973, Crown pp 128 Price As 4/6

\*7 **Jinadattacaritam** of Gunabhadra A Sk. poem in 9 cantos dealing with the life of Jinadatta, edited by PT. MANOHARLAL, Bombay samvat 1973, Crown pp. 96, Price As 5/-.

8. **Pradyumnacarita** of Mahāśenācārya . A Sk. poem in 14 cantos dealing with the life of Pradyumna. It is composed in a dignified style Edited by

**PTS. MANOHARLAL and RAMPRASAD, Bombay Samvat 1973, Crown pp. 230, Price As. 8/-**

**9. Cāritrasāra of Cāmuṇḍarāja :** It deals with the rules of conduct for a house-holder and a monk. Edited by PT INDRALAL and UDAYALAL, Bombay Samvat 1974, Crown pp. 103, Price As. 6/-.

**\*10. Pramāṇanirṇaya of Vādirāja** A manual of logic discussing specially the nature of Pramāṇas. Edited by PTS INDRALAL and KHUBCHAND, Bombay Samvat 1974, Crown pp. 80, Price As. 5/-.

**\*11. Ācārasāra of Viranandi :** A Sk. text dealing with Darśana, Jñāna etc. Edited by PTS. INDRALAL and MANOHARLAL, Bombay Samvat 1974, Crown pp. 2-98, Price As 6/-

**\*12. Trilokasāra of Nemichandra :** An important Prākṛit text on Jaina cosmography published here with the Sk. commentary of Mādhavacandra. Pt. Premi has written a critical note on Nemichandra and Mādhavacandra in the Introduction Edited with an index of Gāthās by PT MANOHARLAL, Bombay Samvat 1975, Crown pp 10-405-20, Price Rs 1/12/-.

**\*13. Tattvānuśāsana-ādi-saṃgrahaḥ :** This vol. contains the following works. 1) *Tattvānuśāsana* of Nāgasena 2) *Iṣṭopadeśa* of Pūjyapāda with the Sk. commentary of Āśādhara. 3) *Niṭṭisāra* of Indranandi 4) *Moksapañcāśikā*. 5) *Śrutāvatāra* of Indranandi. 6) *Adhyātmatarāṅgi* of Somadeva. 7) *Bṛhat-pañca-namaskāra* or *Pātrakesari-stotra* of Pātrakesari with a Sk. commentary 8) *Adhyātmāṣṭaka* of Vādirāja. 9) *Dvā-*

*trīṃśikā* of Amitagati 10) *Vairāgyamanimalā* of Śricandra. 11) *Tattvasūtra* (in Prākṛit) of Devasena. 12) *Śrutaskandha* (in Prākṛit) of Brahma Hemacandra. 13) *Dhāḍast-gāthā* in Prākṛit with Sk. chāyā 14) *Jñānosūtra* of Padmasimha, Prākṛit text and Sk chāyā. PT. PREMI has added short critical notes on these authors and their works Edited by PT MANOHARLAL, Bombay Samvat 1975, Crown pp 4-176, Price As. 14/-.

\*14. **Anagāra-dharmāmṛta** of Āśādhara Second part of the *Dharmāmṛta* dealing with the rules about the life of a monk Text and author's own commentary. Edited with verse and quotation Indices by PIS BANSIDHAR and MANOHARLAL, Bombay Samvat 1976, Crown pp. 692-35, Price Rs. 3/8/-

\*15 **Yuktyanuśāsana** of Samantabhadra A logical Stotra which has wielded great influence on later authors like Siddhasena, Hemacandra etc Text published with an equally important commentary of Vidyānanda. There is an introductory note on Vidyānanda by PT. PREMI. Ed by PIS INDRALAL and SHRILAL, Bombay Samvat 1977, Crown pp 6-182, Price As 13/

\*16 **Nayacakra-ādi-saṃgraha** : This vol contains the following texts 1) *Laghu-Nayacakra* of Devasena, Prākṛit text with Sk chāyā 2) *Nayacakra* of Devasena, Prākṛit text and Sk. chāyā 3) *Ālapapaddhati* of Devasena There is an introductory note in Hindi on Devasena and his *Nayacakra* by PT PREMI Edited by PT. BANSIDHARA with Indices, Bombay Samvat 1977, Crown pp. 42-148, Price As 15/-.

\*17. **Ṣaṭprābhṛtādi-saṁgraha** : This vol. contains the following Prākṛit works of Kundakunda of venerable authority and antiquity. 1) *Daśana-prābhṛta*, 2) *Cāritra-prābhṛta*, 3) *Sūtra-prābhṛta*, 4) *Bodha-prābhṛta*, 5) *Bhāṣa-prābhṛta*, 6) *Mokṣa-prābhṛta*, 7) *Liṅga-prābhṛta*, 8) *Śīla-prābhṛta*, 9) *Rayaṇasūtra* and 10) *Dvādaśānupekṣā*. The first six are published with the Sk. commentary of Śrutasaṅgāra and the last four with the Sk. chāyā only. There is an introduction in Hindi by Pt. PREMI who adds some critical information about Kundakunda, Śrutasaṅgāra and their works. Edited with an Index of verses etc. by PT. PANNALAL SONI, Bombay Samvat 1977, Crown pp. 12-442-32, Price Rs 3/.

\*18 **Prāyaścittādi-saṁgraha** : The following texts are included in this volume 1) *Chedapīṇḍa* of Indranandi Yogindra, Prākṛit text and Sk. chāyā. 2) *Chedaśāstra* or *Chedanavati*, Prākṛit text and Sk chāyā and notes 3) *Prāyaścitta-cūlikā* of Gurudāsa, Sk. text with the commentary of Nandiguru. 4) *Prāyaścittagrantha* in Sk verses by Bhaṭṭākalaṅka There is a critical introductory note in Hindi by PT PREMI. Edited by PT. PANNALAL SONI, Bombay Samvat 1978, Crown pp 16-172-12, Price Rs. 1/2/-

\*19 **Mūlāsāra** of Vaṭṭakera, part I : An ancient Prākṛit text in Jaina Śauraseni, Published with Sk. chāyā and Vasunandi's Sk commentary. A highly valuable text for students of Prākṛit and ancient Indian monastic life. Edited by PTS PANNALAL, GAJADHARALAL and SHRILAL, Bombay Samvat 1977, Crown pp. 516, Price Rs. 2/4/-.

**20 Bhāvasaṃgraha-īdih :** This vol. contains the following works 1) *Bhāvasaṃgraha* of Devasena, Prākṛit text and Sk. chāyā 2) *Bhāvasaṃgraha* in Sk verse of Vāmadeva Paṇḍita 3) *Bhāva-triṣhaṅgi* or *Bhāvasaṃgraha* of Śrutamuni, Prākṛit text and Sk chāyā 4) *Āravatriṣhaṅgi* of Śrutamuni, Prākṛit text and Sk chāyā There is a Hindi Introduction with critical remarks on these texts by PT PREMI Edited with an Index of verses by PT PANNALAL SONI, Bombay Sarhvat 1978, Crown pp 8-284-28, Price Rs. 2/4/-

**21. Siddhāntasāra-ādi-Saṃgraha :** This vol contains some twentyfive texts 1) *Siddhāntasāra* of Jinacandra, Prākṛit text, Sk chāyā and the commentary of Jñānabhūṣaṇa. 2) *Yogasāra* of Yogicandra, Apabhraṃśa text with Sk. chāyā 3) *Kallānāloṇa* of Ajṭabrahma, Prākṛit text with Sk. chāyā. 4) *Amṛtāṣṭi* of Yogīndradeva, a didactic work in Sanskrit 5) *Ratnamālā* of Sivakoṭi 6) *Śāstrasārasamuccaya* of Māghanandi, a Sūtra work divided in four lessons. *Arhat-pravacanam* of Prabhācandra, a Sūtra work in five lessons. 8) *Āptasvarūpam*, a discourse on the nature of divinity 9) *Jñānalocanastotra* of Vādirāja (Pomarājasuta). 10) *Samavasaranastotra* of Viṣṇusena 11) *Sarvajñastavana* of Jayānandasūri 12) *Pārśvanāthasamasyā-stotra* 13) *Gitrabandhastotra* of Guṇabhadra 14) *Maharṣi-stotra* (of Āśādhara). 15) *Pārśvanāthastotra* or *Lakṣmīstotra* with Sk. commentary. 16) *Neminātha stotra* in which are used only two letters viz n & m 17) *Śaṅkhadevāṣṭaka* of Bhānukīrti 18) *Nyāt-māṣṭaka* of Yogīndradeva in Prākṛit. 19) *Tattvabhāvana*



or *Sūmāyika-pāṭha* of Amitagati 20) *Dharmarajyaṇa* of Padmanandi. Prākṛit text and Sk chāyā 21) *Sūrasamuccaya* of Kulabhadra. 22) *Aṅgapañṇatti* of Śubhacandra Prākṛit text and Sk. chāyā. 23) *Śrutavātāra* of Vibudha Śrīdhara 24) *Śalākānikṣepana-niṣkāsaṇa-vivaranam* 25) *Kalyāṇamālā* of Āśādhara  
 Pt PREMI has added critical notes in the Introduction on some of these authors. Edited by PT PANNALAL SONI Bombay Samvat 1979 Crown pp 32-324, Price Rs 1/8/-

\*22 **Nītivākyaṃptam** of Somadeva An important text on Indian Polity, next only to *Kautilya-Arthaśāstra*. The Sūtras are published here along with a Sanskrit commentary There is a critical Introduction by PREMI comparing this work with Arthaśāstra. Edited by PT. PANNALAL SONI, Bombay Samvat 1979, Crown pp 34-426, Price Rs 1/12/-

\*23. **Mulācāra** of Vaṭṭakera, part II : Prākṛit text, Sk chāyā and the commentary of Vasunandi, see No 19 above. Bombay Samvat 1980, Crown pp. 332, Price Rs 1/8/-

24 **Ratnakaraṇḍaka-śrāvaka-cāra** of Samantabhadra With the Sanskrit commentary of Prabhācandra. There is an exhaustive Hindi Introduction by PT. JUGAL KISHORE MUKTHAR, extending over more than pp. 300, dealing with the various topics about Samantabhadra and his works. Bombay Samvat 1982, Crown pp. 2-84-252-114, Price Rs. 2/-.

25. **Pañcasāṅgrahaḥ** of Amitagati : A good compendium in Sanskrit of the contents of *Gūṃmatasāra*. Edited with a note on the author and his works by PT. DARBARILAL. Bombay 1927, Crown pp. 8-240, Price As. 13/-.

26. **Lāṭisāṁhitā** of Rājamalla . It deals with the duties of a layman and its author was a contemporary of Akbar to whom references are found in his compositions. There is an exhaustive Introduction in Hindi by PT. JUGALKISHORE Edited by PT. DARBARILAL, Bombay Samvat 1948, Crown pp. 24-136, Price As 8/-

27. **Purudevācampū** of Arhaddāsa A Campū work in Sanskrit written in a high-flown style Edited with notes by PT JINADASA, Bombay Samvat 1985, Crown pp. 4-206, Price As 12/-.

28. **Jaina-Śilālekha-saṁgraha** : It is a handy volume living the Devanāgarī version of *Epigraphia Carnatica* II (Revised ed.) with Introduction, Indices etc by PROF. HIRALAL JAIN, Bombay 1928, Crown pp 16-164-428-40, Price Rs. 2/8-

29-30-31. **Padmacarita** of Raviseṇa This is the Jaina recension of Rāma's story and as such indispensable to the students of Indian epic literature. It was finished in A. D. 676, and it has close similarities with *Paṭmearius* of Vimala (beginning of the Christian era). Edited by PT. DARBARILAL, Bombay Samvat 1985, vol. i, pp. 8-512 : vol ii, pp. 8-436 ; vol. iii, pp. 8-446, Thus pp. about 1400 in all, Price Rs. 4/8/-.

32-33. **Harivamśa-purāṇa** of Jināsena I : This is the Jaina recension of the Kṛṣṇa legend. These two volumes are very useful to those interested in Indian epics. It was composed in A. D. 783 by Jināsena of the Punnāṣa-saṃgha. There is a Hindi Introduction by PT PREMIJI. Edited by PT DARBARILAL, Bombay 1930, vol 1 and ii, pp. 48-12-806, Price Rs. 3/8/-.

34. **Nītivākyaṃśam**, a supplement to No. 22 above : This gives the missing portion of the Sanskrit commentary, Bombay Samvat 1989, Crown pp. 4-76, Price As 4/-.

35. **Jambūsvāmi-caritam** and **Adhyātma-kama-lamārtaṇḍa** of Rājamalla . See No. 26 above. Edited with an Introduction in Hindi by PT. JAGADISHCHANDRA, M. A., Bombay Samvat 1993, Crown pp. 18-264-4, Price Rs. 1/8/

36. **Triṣaṣṭi-smṛti-śāstra** of Āśādhara : Sanskrit text and Marāṭhī rendering. Edited by PT. MOTILAL HIRACHANDA, Bombay 1937, Crown pp 2-8-166, Price As. 8/-.

37. **Mahāpurāṇa** of Puṣpadanta, Vol I **Ādipurāṇa** (Samdhis 1-37) : A Jaina Epic in Apabhramśa of the 10th century A. D. Apabhramśa Text, Variants, explanatory Notes of Prabhācandra. A model edition of an Apabhramśa text, Critically edited with an Introduction and Notes in English by DR. P. L. VAIDYA, M. A., D. Litt., Bombay 1937, Royal 8vo pp. 42-672, Price Rs. 10/-.

37 (a). *Rāmāyaṇa* portion separately issued, Price Rs. 2.50.

38 **Nyāyakumudacandra** of Prabhācandra Vol. I : This is an important Nyāya work, being an exhaustive commentary on Akalaṅka's *Laghiyastrayam* with Vivṛti (see No. 1 above) The text of the commentary is very ably edited with critical and comparative foot-notes by PT. MAHENDRAKUMARA There is a learned Hindi Introduction exhaustively dealing with Akalaṅka, Prabhācandra, their dates and works etc written by Pt KAILASCHANDRA. A model edition of a Nyāya text. Bombay 1938, Royal 8 vo pp 20-126-38-402-6, Price Rs 8/.

39. **Nyāyakumudacandra** of Prabhācandra, Vol. II See No 38 above. Edited by PT. MAHENDRAKUMAR SHASTRI who has added an Introduction Hindi dealing with the contents of the work and giving some details about the author There is a Table of contents and twelve Appendices giving useful Indices Bombay 1941. Royal 8vo pp. 20+94+403-930, Price Rs. 8/8/-

40 **Varāṅgacaritam** of Jaṭā-Simhanandī : A rare Sanskrit Kāvya brought to light and edited with an exhaustive critical Introduction and Notes in English by PROF A N. UPADHYE, M A., Bombay 1938, Crown pp. 16+56+392, Price Rs. 3/-.

41. **Mahāpurāṇa** of Puṣpadanta, Vol. II (Saṁdhis 38-80) · See No 37 above. The Apabhraṁśa Text critically edited to the variant Readings and Glosses, along with an Introduction and five Appendices by

DR. P.L. VAIDYA, M.A., D.Litt., Bombay 1940. Royal 8vo pp. 24+570. Price Rs. 10/-.

42. **Mahāpurāṇa** of Puṣpadanta, Vol III (Śaṁdhis 81-102) : See No 37 and 40 above. The Apabhramśas Text critically edited with variant Readings and Glosses by DR. P. L. VAIDYA, M.A., D. Litt. The Introduction covers a biography of Puṣpadanta, discussing all about his date, works, patrons and metropolis (Mānyakheṭa). PT PREMI'S essay 'Mahākavi Puṣpadanta' in Hindi is included here. Bombay 1941. Royal 8vo pp 32+28+314. Price Rs 6/-

42(a) **Harivaṁśa** portion is separately issued Price Rs 2 50

43. **Ajanāpavanamjaya-nāṭakam** and **Subhadra-nāṭikā** of Hastimalla . Two Sanskrit Dramas of Hastimalla (see also No 3 above) Critically edited by PROF M V PATWARDHAN The Introduction in English is a well documented essay on Hastimalla and his four plays which are fully studied There is an Index of stanzas from all the four plays Bombay 1950. Crown pp. 8+68+120+128. Price Rs 3/-

44 **Syādvādasiddhi** of Vāḍibhasiṃha Edited by PT DARBARILAL with Introductions etc. in Hindi shedding good deal of light on the author and contents of the work Bombay 1950 Crown pp. 26+32+34+80. Price Rs 1-50

45. **Jaina Śilālekha-saṁgraha**. Part II (see No. 28 above) : The texts of 302 Inscriptions (following A. Guérinot's order) are given in Devanāgarī with summary

in Hindi. There is an Index of Proper Names at the end. Compiled by PT. VIJAYAMURTI, M.A. Bombay 1952. Crown pp. 4+520. Price Rs 8/-

46 **Jaina Śilālekha-saṁgraha**, Part III (see Nos. 28 & 45 above) · The texts of 303-846 inscriptions (following Guérinot's list) is given in Devanāgarī with summary in Hindi compiled by PT. VIJAYAMURTI, M.A. There is an Index of Proper Names at the end. The Introduction by SHRI G. C CHAUDHARI is an exhaustive study of inscriptions. Bombay 1957. Crown pp. 8+178+592+42 Price Rs 10/-.

47. **Pramāpaprameyakalikā** of Narendrasena (A.D. 18th century) A Nyāya text dealing with Pramāṇa and Prameya. The Sanskrit text critically edited by Pt DARBARILAL. The Hindi Introduction deals with the author and a number of topics connected with the contents of this work. Bhāratīya Jñānapīṭha Kashi, Varanasi 1961. Price Rs. 1 50

48 **Jaina Śilālekha-saṁgraha**, Part IV (see Nos. 28, 45 & 46 above) This vol contains some 654 inscriptions along with 324 Pratimā-lekhas of Nagpur in Appendix Compiled by DR. VIDYADHAR JOHARPURKAR with an exhaustive study of the inscriptions in the introduction and Indexes in the end Varanasi Vira Nirvāṇa Samvat-2491, Crown pp 10+34+506. Price Rs. 7/-.

49. **Ārādhanaśamuccayo-Yogasāra Saṁgrahaśca** : This vol. contains two small sanskrit texts—  
1) Ārādhana samuccaya of Śrī Ravicandra Munindra

and 2) Yogasārasamuccaya of Sri Gurudas. Edited with indexes of verses and introductions by Dr. A. N. UPADHYE, Varanasi 1967, crown pp. 8+58. Price Rs. 1/.

50. Śṛṅgārārnava<sup>ś</sup>candrikā of Vijayavarṇi. A hitherto unpublished work on Sanskrit poetics. Critically edited by Dr V. M Kulkarni with Introduction, detailed table of contents and six valuable Appen<sup>d</sup>exes. Varanasi 1969, crown pp 12+66+176. Price Rs. 3/-.

*For copies please write to—*

BHĀRATĪYA JÑĀNAPĪTHA

3620/21 Netaji Subhash Marg,

Delhi—6 (India)

